श्री ।

मनोहर-प्रकाश ।

अर्थात्

त्रिपाठी मतिराम कृत रसराज

कवि हरदानजी सिंढायच (चारण)
कृत टीका सहित ।

श्रीयुत ठाकुर साहब मनोहर सिंहजी सरदार-
गढ़ (मेवाड़) ने यह ग्रंथ बनवाया और
उन्ही की आज्ञा और सहायता से
मनीषि समर्थदान

यंत्राधीश राजस्थान यंत्रालय अजमेर ने
छापके प्रकाशित किया ।

अजमेर
राजस्थान यंत्रालय में छपा ।

संवत १९५२ सन् १८९६ ई०
प्रथमबार १००० मोल १॥)

यह ग्रन्थ राजस्थान यंत्रालय अजमेर में मिलता है ।

मनोहर प्रकाश की सूची।

भूमिका।



कविता में नायक और नायका का वर्णन जहां तहां आता है, जिन के जानने की आवश्यकता कविता देखने वालों को होती है, परन्तु उन के वर्णन के ग्रन्थ जब तक न पढे जांय तब तक जान नहीं सकते, इसी लिये कवियों ने नायका भेद के ग्रन्थ बनाये हैं। आज तक जितने ग्रन्थ इस विषय पर बने हैं उन सब में त्रिपाठी मतिराम कृत "रसराज" अधिक फैला है, इस का कारण कविता की शरलता और नायकाओं के भेदों का भले प्रकार से दर्शनाही है। इस में एक गुण यह भी है कि जो उत्तम काव्यों में हुआ करता है, कि शरलता के साथ जहां तहां अर्थ का गाँभीर्य्य भी है कि जिस को सब लोग नहीं जान सकते। इस कारण से इस पर एक टीका की वड़ी आवश्यकता थी जो सरदारगढ़ ठाकुर साहब श्रीयुत मनोहरसिंह जी ने कविवर्य्य हरदान जी सिंढायच (चारण) से बनवा के भेटी। इसी कारणसे इस का नाम "मनोहर प्रकाश" रक्खा गया।

श्रीयुत ठाकुर साहब मनोहरसिंह जी धर्म्म के वेदान्तादि विषयों में, काव्य में, संगीत में तथा अन्य गहन और गम्भीर विषयों के समझने और सब प्रकार के गुणों की गुण ग्राहकता करने में केवल मेवाड़ में ही नहीं किन्तु राजपूताने भर में प्रशिद्ध हैं। कई वर्ष पहिले कविवर्य्य हरदान जी का उदयपुर रहना हुआ तब ठाकुर साहब ने कहकर उन से यह टीका बनवाई और पीछे मुद्रित करके प्रकाशित करने के लिये मुझे प्रदान की। परन्तु कार्य्य की अधिकता के कारण से मुद्रित होने में विलम्ब हुआ। इतने में जोधपुर के श्रीयुत कविराजा जी मुरारिदानजी ने अपना बनाया अलंकारों का अद्वितीय ग्रन्थ "जसवन्त जसोभूषण" श्रीमान् भूत पूर्व मरुधराधीश महाराजाधिराज राजराजेश्वर महाराजा श्री १०८ श्री यशवन्तसिंह जी धीर बीर जी० सी० एस० आई० को सुनाया तब बाहर से चार भद्र पुरुष श्रीमान् दरबार की ओर से

बुलाये गये थे उन में दो हम अर्थात् श्रीयुत ठाकुर साहब मनोहरसिंह जी और मैं (समर्थदान) थे । सम्वत १९५० की वसन्त पंचमी तदनुसार ता० १० फरवरी १८९४ से एक मास तक वहां एक जगह ही रहने का काम पड़ा और ईश्वर कृपा से कवि हरदान जी भी उस समय वहां ही थे तब यद्यपि अन्य कार्य्यों के कारण से समय न्यून मिलता था. तो भी उन्होंने शीघ्रता में भी इस ग्रन्थ के कईप्रकरण फिर से संभाले । इस प्रकार से यह ग्रन्थ तय्यार हुआ ।

श्रीयुत ठाकुर साहब मनोहरसिंह जी ने यह ग्रन्थ बनवाया, मुझे सब स्वत्वों सहित छापने की आज्ञा और सहायता दी इस का मैं ठाकुर साहब की सेवा में धन्यवाद अर्पण करता हूं ।

मूल ग्रन्थ रसराज के कर्त्ता कवि मतिराम त्रिपाठी और टीकाकार कवि हरदान जी सिंढायच का संक्षिप्त वृत्तान्त भी मैंने आवश्यक और रुचिकर समझ के इस के साथ लगादिया है और ठाकुर साहब मनोहरसिंह जी और उनके घराने का वृत्तान्त तो टीकाकार ने अपनी भूमिका में लिख दिया है इस लिये देने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

मनुष्य के प्रायः सब कामों में सुधार की आवश्यकता सदा बनी ही रहती है और सुधार का प्रत्येक वस्तु में होना संसार के लिये उपकारक है इस दृष्टि से यदि कोई सज्जन-कवि इस ग्रन्थ में किसी प्रकार की त्रुटि मेटने वा उत्तमता बढ़ाने की सम्मति देंगे तो उसपर सादर ध्यान दिया जायगा ।

पौष वदी १४ सं० १९५२)
१५ दिसम्बर १८९५)

समर्थदान
यंत्राधीश
राजस्थान-यंत्रालय
अजमेर ।

रसराज के कर्त्ता कवि मतिराम त्रिपाठी का संक्षिप्त वृत्तान्त।

कवि मतिराम त्रिपाठी पश्चिमोत्तर प्रदेशान्तर्गत कानपुर नगर के पास के टिकमापुर (जिसका प्राचीन नाम त्रिविक्रमपुर था) उस ग्राम के रहने वाले और कश्यप गोत्री कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम रत्नाकर था। ऐसी कथा है कि रत्नाकर त्रिपाठी टिकमापुर से एक मील पर देवी का स्थान है वहां दर्शण, दुर्गापाठ और ध्यान करने के लिये सदा जाया करते थे। एक दिन देवी ने प्रसन्न होकर अपने चारों मुण्ड दिखलाकर कहा कि येही तेरे चार पुत्र होंगे। ईश्वर इच्छासे ऐसाही हुआ तब उन चारों के नाम (१) चिन्तामणि. (२) भूषण, (३) मतिराम, और (४) जटाशंकर वा नीलकण्ठ ये रक्खे गये। ये चारों भाई बड़े कवि हुये जिनमें आदि के तीनों के कई ग्रन्थ उपलब्ध हैं परन्तु चौथे भाई जटाशंकर वा नीलकण्ठ का कोई ग्रन्थ प्रसिद्ध नहीं है। जैसे चिन्तामणि और भूषण ने अनेक राजाओं के यहां सन्मान पाया वैसे कवि मतिराम त्रिपाठी ने भी अनेक राजाओं के यहां सन्मान पाया। इनका स्वभाव था कि एक राजा के पास नही ठहरते थे इससे एक राजा से दूसरे के पास और दूसरे से तीसरे के पास इसी प्रकार से राजाओं के दरबारों में जाया और सनमान पाया करते थे।

मतिराम ने बून्दी के महाराज भावसिंह जी के नाम से जिन्हों ने सम्बत १७१५ से १७३८ तक राज किया अलंकारों का "ललित ललाम" और " छन्दसार पिंगल " नाम का ग्रन्थ श्रीनगर के बुंदेले राजा फतहशाह के नाम से बनाया । कमाऊ के राजा उदोतचन्द, और सोलंकी शम्भु प्रसिद्ध संभाजी (शिवाजी छत्रपति के पुत्र) [ई० स० १६८०—१६८९] आदि के यहाॅं भी इनका जाना आना था। कहते हैं कि यह तीसरा ग्रन्थ " रसराज " दिल्ली के बादशाह औरंगज़ेब [१६५९—१७०७ ई०] के कहने से बनाया गया था और प्रगट रूप से

अपने इष्ट देव का मंगलाचरण न करने का भी यही कारण बतलाते हैं, क्योंकि उक्त सम्राट वैदिक मत का बड़ा द्वेषी था। इसके साथही यह सन्देह डालने वाली बात भी है कि इस ग्रन्थ में बादशाह की प्रशंसा कहीं भी नहीं लिखी कि जिसकी बड़ी भारी चाल आज तक चली आती है। परन्तु प्रशंसा लिखना इतना आवश्यक नहीं है जितना इष्ट देव का मंगलाचरण करना, इसके छोड़ देने से यही प्रतीत होता है कि यह कदाचित बादशाह की आज्ञा से बना हो। बादशाह की आज्ञा से बना हो वा नहीं परन्तु इसमें तो कोई संदेह नहीं कि जैसे औरंगज़ेब का राज भारत वर्ष में बहुत फैला था वैसे यह "रसराज" ग्रन्थ भी जहां जहां हिन्दी भाषा की कविता फैली है वहां वहां समस्त भारतवर्ष में फैल गया। नायका भेद के जितने ग्रन्थ हैं उन सब में से इसका प्रचार बहुत अधिक हुआ। इसका कारण कविता की शरलता और नायकाओँ के भेदों का भले प्रकार से दर्शाना ही है। उत्तमता यह है कि रचना की शरलता के सिवाय अर्थ का गाँभीर्य्य भी साथ २ चला गया है जिसके कारण से टीका की बड़ी आवश्यकता थी कि जो इस मनोहर प्रकाश से मिटी। कवि मतिराम अपने उत्तम ग्रन्थों और विशेषकर रसराज के कारण से भाषा कविता के आचार्यों में गिना जाने लगा।

इस समय तक जितना वृत्तान्त प्रगट हुआ है इससे मतिराम के जन्म और मरण की सम्वत तथा तिथ्यादि का कोई पत्ता नहीं लगता परन्तु केवल स्थूल अनुमान किया जाता है कि इनका जन्म संवत् १६९० और मरण संवत् १७४० से १७५० के आस पास हुआ होगा क्योंकि जिन राजाओं के समय में इनका होना पाया जाता है वे इसी समय के बीच में हुये हैं। यदि किसी महाशय को इनका अधिक वृत्तान्त ज्ञात हो और कृपाकरके मुझे लिखेंगे तो दूसरी आवृत्ति में वह धन्यवाद सहित युक्त कर दिया जायगा।

टीकाकार कवि हरदानजी सिंढायच का संक्षिप्त बृत्तान्त।

मारवाड़ में जोधपुर से अग्निकोण को झुकता हुआ दक्षिण की ओर पाली की सड़क पर पांच कोस के अन्तर पर मोगड़ा गांव है जो मण्डोर के पहले राजा नाहर राव पडिहारने नरसिंहजी (सिंहढायच) चारण को दिया था उस में अब उन की सन्तान के चोदह घर बसते हैं। उन की सन्तान में जादूरामजी नाम था उनके यहां संबत् १८९१ के भाद्रपद बदी ३ गुरुबार को सिंह लग्न में हरदान जी का जन्म हुआ। पांच बर्ष की उम्र से इन्हों ने देवनागरी अक्षर पढ़ना प्रारंभ किया और अनेकार्थी, मान मंजरी, गीतों का रघुनाथ रूपक, विहारी सतसई, रसराज, कविप्रिया, भाषा भूषण, अलंकार माला आदि भाषा के ग्रन्थ पढ़ते रहे। संबत १९०८ के कार्त्तिक मास तक ये पुस्तक पढ़े।

अजमेर जिले में मसूदे का ठिकाणाहै वहाॅ इनकी भूमि है इसलिये हरदान जी अपने पिता जी के साथ १९०८ के कार्त्तिक माससें मसूदे गये।

उस समय के मसूदे के अधीश श्रीयुत शिवनाथ सिंहजी के पास रहे। वे साहित्य विद्या के समझने वाले थे उन की हरदान जी पर बड़ी कृपा रही। उनकी गुण ग्राहकता से हरदानजी की विद्या में वृद्धि होती गई। कृष्णगढ़ राज्य के अन्तर्गत गोद्याणे गांव के रहने वाले बारहट राधा बल्लभजी बून्दी के सुप्रसिद्ध कविवर्य्य मिश्रण सूर्य्यमल्लजी के पास पढ़कर मसूदे आये और वहां ठहरे तब छन्द विद्या मे वर्णों के अष्टक्रम राधा बल्लभजी से हरदानजी ने सीखे। इस समय से छन्द विद्या में इनकी बड़ी रुचि हुई, जहाँ तहाॅ से छन्दों के ग्रंथों का अन्वेषण करके संग्रह करना प्रारंभ किया। ज्यों ज्यों नवीन पुस्तक मिलते गये त्यों त्यौं ये विचारते गये। चिन्तामणि कृत बड़ा पिंगल ग्रंथ, भूषणकृत छन्द कौस्तुभ आदि ग्रंथों में जो२ बातें थीं सो इन्हों ने विचारली। बुद्धि चमत्कारिक थी इससे इन्होंने छंद विद्या में बहुतसी नवीन बातें निकाली। इसमें इतनी वृद्धि की कि संस्कृत और भाषा ग्रंथों में जो बातें नहीं थीं सो भी निकालीं।

संवत् १९१० के मार्ग शीर्ष मास में ये मसूदे से अपने गांव मोगड़े आए और माघ शुक्ल पंचमी को मारवाड़ के बारहटों के मथाणिए

ग्राम के बारहट निर्भय रामजी की पुत्री के साथ इन का विवाह हुआ। तब पीछे ये दो वर्ष के लगभग मोगड़े ही रहे तब विहारी सतसई और कवि प्रिया ये दोनों पुस्तक हरिप्रकाश टीका सहित विचारते रहे। संवत् १९१३ के माघमास में रतलाम गए उस समय महाराज बलवन्तसिंहजी राजा थे और ठाकुर बख्तावर सिंहजी सोनगरे उनके मुसाहब (प्रधान मंत्री) थे।

पीछे इन्होंने ज्योतिष में भी अभ्यास किया जिससे गणित में इनकी शक्ति इतनी बढ़ी कि कई नवीन नियम गणित के इन्हों ने निकाले। निदान इन्होंने इस प्रकारसे विद्या का अभ्यास किया और फिर थोड़ा बहुत राज्यों में भी जाना प्रारंभ किया। मिश्रण सूर्य्यमल्लजी से मिलने के लिए ये बून्दी गए वे इन की छन्द विद्या से बड़े प्रसन्न हुए परन्तु किसी दूसरी बात पर अनबनत होगई। संक्षेप से लिखें तो प्रयोजन यह है कि प्रायः इनका रहना बीच बीच में मसूदे अधिक होता था। कुच्छ समय तक उदयपुर रहे तब सरदारगढ़ ठाकुर साहब श्रीयुत मनोहरसिंह जी की आज्ञा से इन्हों ने "रसराज" पर यह टीका बनाई जिसका"मनोहर प्रकाश"नाम रक्खा। इसके सिवाय और कोई ग्रन्थ इन का पूर्ण होके प्रकाशित नही हुआ। मसूदे के राव जी साहब श्रीयुत बहादुरसिंह जी की इन पर बड़ी कृपा रही इस से पीछे के समय में ये मसूदे ही अधिक रहे और यहां के ठिकाणे का काम भी प्रायः इन्हीं की सम्मति से होने लगा। अब (संवत १९५२) से दो वर्ष से कुच्छ पहले इन के पुत्र का शरीरांत होने और उन के छोटे बालकों के रहजाने से घर पर रहने की आवश्यकता होने से मसूदे राव जी साहब से आज्ञा लेकर मोगड़े जाकर रहने लगे। यह रसराज की टीका कई वर्ष पहले इन्हों ने बनाई थी इसलिये फिर से देखने की आवश्यकता थी इस से जोधपुर में इन्हों ने शीघ्रता में फिर से इसे सभाला जैसा कि मैं भूमिका में लिख चुका हूं। छन्द विद्या में ये हरदान जी इस समय अद्वितीय विद्वान हैं और इसी कारण से ग्रन्थ"यशवन्त यशोभूषण"सुनाते समय श्रीयुत कविराजाजी मुरारिदानजी ने भरी हुई राज सभा में फरमाया था कि "छन्द विद्या में तो हरदान जी शेष का अवतार माने ही जाते हैं परन्तु अब ज्ञात हुआ कि अलंकारों में भी बहुत उत्तम समझते हैं"। इस समय हरदान जी अपने ग्राम मोगड़े में ही रहते हैं। ईश्वरसे प्रार्थना है कि इन के शरीर को निरोग रक्खे।

टीकाकारकृत ।

मंगलाचरण ।

तथा ।

भूमिका ।

दोहा ।

उर अखंड धर ध्यान अरु, तिन चरनन सिरनाय ।
भानसुता नंदलाल भज, उक्ति बिमल उपजाय ॥ १ ॥

छप्पय ।

पदपंकज सम परस, प्रगट द्युति अरुन प्रकाशत ॥
तिन की रज अज ईश, सीस सज होत सुभाषत ॥
व्रजमंडल किय बिमल, अखिल अंकित वृंदाबन ॥
तिनको ध्यान तपीश, महाहठ साध धरत मन ॥
उन चरन शरन धर सीस अरु, राधाकृष्ण सुनाम रट ॥
रचना मनो,र प्रकाश रच, पूर्ण प्रश्न उत्तर प्रगट॥२॥
उदित देश मेवाड़, सजत तहां अधिक जलाशय ॥
तहां जल जंतु तमाम, बिमल जलजात विकाशय॥
छबिजुत गढ़चीतौड़, द्वितिय शुभस्थान उदयपुर ॥
सजत राज सीसोद, धरत शुभ नीति धर्म धुर ॥

नर नाथ शंभु शोभित निडर, किय तिन शत्रुसिंहारकेउ ।
सज उग्र प्रभा राजत सदा, तहां सकल उमराव तेउ ॥३॥

दोहा ।

नग कंचन जुत तुल नृपति, दिये अनेकहि दान ।
फैली रान स्वरूप की, जाम्हर प्रभा जिहान ॥४॥
एक पृथु नृप अवतरयो, दूजो रान स्वरूप ।
प्रजपालन धन वृद्धि हित, भयो न तीजो भूप ॥५॥
किये अदालद विप्र गन, दिये जो हाटक दान ।
भूप स्वरूप प्रकाश भुव, भये प्रगट जिमभान ॥६॥

अथ श्री हजूर को प्रताप यश वर्णन ।

कवित्त ।

शंभु नर राज के प्रताप यश आगे भाग,
गये ग्रहराज द्विजराज लाज धरकैं ॥
एक ताप लीन भयो अपर मलीन भयो,
दीन भयो हीन भयो जात जीय डरकैं ॥
दोऊ तन पान गये मन के गुमान गये,
ज्ञान के विधान गये हिय सौं उतर कैं ॥
प्रच्छिन प्रकाश यौं अकाश रास मंडल मैं,
भ्रमत उदास ते निवास आस कर कैं ॥७॥

दोहा ।

पांच जात कीनी प्रगट, रचे यज्ञ रिषि राय ।
उपज्यो प्रथमहिं डोडिया, आबूगिर पैं आय ॥८॥

डोडा कदली बृक्ष को, ऋषिन मंत्र श्रुति रीति।
कियो प्रगट तहां डोडिया, जग रक्षक जग जीत ॥९॥
कैउ दिवस तिन वंश को, रह्यो राज मुलतान।
फिर गिरनार अधीश ह्वै, तपे तीर महरान ॥ १० ॥
ताहि समैं चित्तौड़पति, लख पति की निज मात।
सोलँखनि हरिदरस हित, युत द्वारा पुरि जात ॥ ११ ॥
तिन को दल का बन तुरत, अटक्यो ढिंग गिर नार।
सुन अनर्थ डोडया पती, सिंह[१] आयो गहि सार ॥१२॥
भिर काबन सिंहार भुव, कर के सह निरमूर।
रान जननि को मदद दे, "सिंह" कट्यो रन सूर ॥१३॥
"सिंह" नृपति को लघु सुवन, नाम धवल[२] नर नरनाह।
"लखपति" रान बुलाय कैं, सुज किये अधिक सराह ॥१४॥
आदर युत ढिंग रान के, पटो पंच लखपाय।
रह्यो धवल ताही समैं, लखपति सौं हितलाय ॥ १५ ॥
भिरे जुद्ध "बदनोर" भुव, साह गयासुद्दीन।
"सालो[३]" नृप जूझ्यो समर, भयो ब्रह्म मझलीन ॥ १६ ॥
असुरन दल तैं रानाहित, सज्यो युद्धि "नरसीह"।
किये यवन निर्मूल केउ, अनमी कट्यो अबीह ॥ १७ ॥
सातलाख इक रीझ मैं, दीद "भाण[४]" नर नाह।
सात द्वीप नौ खंड मैं, उपजी कीर्ति अथाह ॥ १८ ॥
चित्रकोट पतशाह दल, लरे प्रबल हट लाग।
"सांडल[५]" तिन तैं रन सज्यो, खल भंजन गहि खाग ॥१९॥

---

(१) ये गिरनार के राजा थे नाम सिंहोजी था (२) नाम धवलोजी था। (३) सालोजी ना. था। (४) राव भाण नाम था। (५) नाम संडलजी था।

केउ असुर संहार कर, भुज गहि खत्रवट भार ।
सांडो अच्छरवर भयो, साम धर्म विस्तार ॥ २० ॥
पातशाह "अकबर,, प्रवल, "पातल,, रान प्रचंड ।
हलदी घाटी पर भिरे, अन भय उभय उमंड ॥ २१ ॥
तिन रन मझ "भीमेन[1],, तब, धर्म साम भुज धार ।
गयो परम गति असुर हन, बिच रवि मँडल बिदार ॥२२॥
विक्रम भोज दधीचि सम,उग्र सूर दातार ।
भयो प्रगट "गोपाल सी,,, सम हर गहियां सार ॥२३॥
"नवलसिंह,, आहर नृपति, कर असहन खयकार ।
इला राज कीनो अभय, नर पत विघन निवार ॥२४॥
उग्रकाज कीने अधिक, दीने बहु विधिदान ।
असहां सिर लीने उमंग, भूप हटै[2] कुल भान ॥२५॥
नृपति मनोहर अति निडर, अंग रजवट अणपार ।
कीना तंडल क्रोधकर, मुगलां दल खग मार ॥२६॥
अति पौरुष बधियो अघट, इन्द्र भान अणवीह ।
पृथिवी सिर खत्रवट प्रगट, नृपति वियो नरसीह ॥२७॥
किय खंडन मंडन केउ, असहन सज्जन आप ।
भुव सरदार नरेश को, प्रगट्यो तेज प्रताप ॥२८॥
देश पती जगतेश कौं, कियो प्रसन्न विशेष ।
ता अनुकंपा तैं भयो, लावा नगर नरेश ॥२९॥
अद्र सीस सर्दारगढ़, रच्यो सुभद्र प्रकाश ।
परम हरम ता मैं प्रगट, उज्जल उर्ध अवाश ॥३०॥
सांवत सिंह नरेश शुभ, रह्यो सांत रस लीन ,

(१) भीमसिंहजी । (२) नाम हटै सिंहजी ।

लाल सिंह सत वृत गही, प्रभु सेवा दृढ़ कीन ॥३१॥
"रोड़सिंह,,अतिही रख्यो, हरि चरनन तैं हेत ।
अटल धर्म वृत धार कैं, निज श्रो ज्ञान निकेत ॥३२॥
निज पुरुषन के पुन्य तैं, भयो "जोर,, रनवीर ।
जोर भाग भुज जोर जुत, जोर नाम गुन धीर ॥३३॥

छप्पय ॥

ताकुल मध्य प्रसिद्ध, जोर क्षत्री धूम जानक ॥
"रानस्वरूप रिझाय,, वध्यो अपनो बहु बानक ॥
उग्रतेज जुत उदित, भयो लावे पुर भ्राजत ॥
उग्रकाज किय अधिक, स्वर्ग पहुंचो धूम साजत ॥
तिन पाट मनोहर सिंह तित, भान तुल्य भासत भयो॥
"सादल,,कनिष्ठ भ्राता सहित,नित प्रताप बाढ़त नयो॥३४॥

दोहा ॥

सोलह और बतीस सह, रान पास उमराव ।
जहँमनो,र गुन उग्र जुत, शोभित सहज सुभाव ॥३५॥

वार्ता ॥

श्रीमान् महाराणा शंभु सिंहजी साहब सम्वत् १९३१ में देवलोकवासी हुए और उनकी गद्दीपर श्रीमान् महाराणा सज्जनसिंहजी साहब गद्दी पर विराजे । उनकी भी सरदारगढ ठाकुर साहब श्री मनोहर सिंहजी पर बड़ी कृपा रही और उन्होंने प्रसन्न होकर ठाकुर साहब को सोलह उमरावों के बराबर कुर्ब दिया और ,शाहपुरे से नीचे सन्मुख बैठक दी ।

दोहा ॥

सज्जन महाराना प्रबल, उग्र प्रतापी आप ।
संभु पाट सोभत सरस, थिर नव निधि गृह्थाप ॥१॥

सजन मनोहर सिँह पैं, बाढी कृपा विशेष ।
सोडष अमरावन सदृश, समपे कुरब असेष ॥२॥
सन्मुख बैठक शाहपुर, तिँह नीचे निरधार ।
दई मनोहरसिँह को, विध जुत कृपा विचार ॥३॥

कवित्त ॥

कहत हरिदान जे जिहान मध्य जाहर हैं,
कहां लौं बखान करौं रसना मम एक हैं ॥
पीछे अरु अग्र घाव संगर अडोल खोल,
और हू अतौल गुन सच्चे सविवेक हैं ॥
दाता गुन ज्ञाता भ्राता सादल मनो,रभूप,
डोडिया अनूप बुद्धि सागर विशेष हैं ॥
दान सनमान दे कैं मेरो चित मोल लैकैं,
कियो है अधीन ताके बिरद कितेक हैं ॥३६॥

दोहा ॥

कियो ग्रंथ मति राम कवि, रुचि बरनन 'रसराज, ।
अर्थ 'मनो,र प्रकाश, 'इम, सज प्रश्नोत्तर साज ॥३७॥
नृप 'मनो,र 'सादल, अनुज, लख साहित रस लीन ।
तिन की आज्ञा तैं यहां, कवि टीका यह कीन ॥३८॥

अथ मनोहरप्रकाश।

दोहा।

होत नायका नायकहि, आलम्बन शृंगार।
तातैं बरनौं नायका, नायक मति अनुसार॥ १॥

मूलअर्थ—नायका है सो, नायक के हिय सें शृंगाररस का आलम्बन होती है और नायक है सो, नायकाके हिय में शृंगाररसका आलम्बन होता है, तातैं मेरी बुद्धिके अनुसार पहिले नायकाका वर्णन करके फिर नायकका वर्णन करता हूं। प्रश्न—सब ग्रंथकर्ताओंकी यह रीति है कि पहिले अपने इष्टदेवका आशीर्वादात्मक वा नमस्कारात्मक वा वस्तुनिर्देशात्मक किसी प्रकार से मंगलाचरण करके फिर ग्रंथ बनाते हैं सो इस दोहा में किसी इष्ट देवताका मंगलाचरण नहीं है।उत्तर—इस प्रकार अर्थ करनेसे इसी दोहेमें श्रीकृष्ण चन्द्रका मंगलाचर्ण होताहैः—अन्वय—हो अति नायका नायक आलम्बन शृंगार तातैं "क"नायके मति अनुसार नायकां वर्णन करता हूं। अर्थ—हो सम्बोधन है और अति नायका कहिये बहुत नायका और अति नायक जो बहुत नायक तिनके आलम्बन कहिये आधार और शृंगार तातैं जो शृंगार पदसे उपादानलक्षिना करके शृंगार रस लीजिये सो शृंगार रसके तात कहिये पिता ऐसे जो कृष्णचन्द्र तिनतैं " क "नाय के कहिये " क "जो मस्तक सो नमायके मति के अनुसार नायका वर्णन करता हूं। पुनि प्रश्न—तात पद का अंत तकार मात्रा रहित है और इस दोहे के पदमें तकार मात्रायुक्तहै इसलिये और अर्थ करना चाहिये। उत्तर—सिद्धांत अर्थ तातैं इस पद का यह है कि तातैं कहिये तिनतेही शृंगार रस है।पुनि प्रश्न—पहिले'हो'सम्बोधन रक्खाहै सो सम्बोधन किसी को चिताय कर अपने सन्मुख करना तहां आता है इसमें

सन्मुख भक्ति रहती है और तातैं शृंगार इस पदके अर्थमें परामुख उक्ति है सो ऐसा भी अर्थ नहीं होना चाहिये जब यह अर्थ रक्खा है कि वह कृष्णचंद्र जगत के नायक और नायका के तो आलम्बन होते हैं अर्थात् समस्त जगत्के स्त्री पुरुष के आधार हैं और तातैं शृंगार कहिये उन तैं ही शृंगार रस है सो ऐसे कृष्णचन्द को "क" नायके कहिये मस्तक नवाय के मतिराम कहता है कि मैं बुद्धिके अनुसार नायका का वर्णन करता हूं।पुनि प्रश्न-सब ग्रंथकर्त्ता इष्ट देवताका मंगलाचरण प्रसिद्ध वर्णन करते हैं और मति राम ने ऐसा छिपा कर मंगलाचरण क्यों रक्खा? उत्तर-यह ग्रंथ श्री औरंगशाह बादशाह की मर्ज़ी से बना है और वह बादशाह वेद के धर्म का खंडन करने वाला था इसलिये बादशाह से छिपाने के लिये मतिराम ने मंगलाचरण गुप्त रक्खा है ॥ प्रथम अर्थके पूर्वार्द्ध में अन्योन्यालंकार। नायका नायक के हिये में शृंगाररस का आलम्बन, तैसे नायक नायका के हिय में शृंगाररसका आलम्बन, होत हैः-

दोहा।

अन्योन्यालंकार है, आपस मैं उपकार।
शशितैं निसि नीकीलगै, निसिहीसैं शशि सार ॥१॥

इति अलङ्काररत्नाकर ॥

मङ्गलाचरण निकालने से एक दोहे में दो अर्थ यातैं श्लेषालङ्कार दोहा ॥ "श्लेष अलंकृत अर्थ बहु एक शब्द मैं होत" ॥

दोहा।

उपजत जाहि विलोकिकैं, चित्त बीच रस भाव।
ताहि बखानत नायका, जे प्रवीन कवि राव ॥२॥

मूल अर्थ-जाको प्रवीन कविराय नायका कहते हैं ताकों देखकें चित्त बीच रस भाव जो शृङ्गार रसकी स्याई रति भाव उपजै।

प्रश्न। पुरुष के चित्तमें रसभाव स्त्री को देखके उपजता है और स्त्रीके चित्त में पुरुषको देखके रसभाव उपजता है सो इस अर्थसे पुरुष के लिये स्त्री नायका है तैसें स्त्रीके लिये पुरुष भी नायका होता है।

उत्तर । इस दोहे का अर्थ ऐसे अन्वय करके करना चाहिये कि "जाहि विलोकि कैं रसराय चित्त बीच भाव उपजे ताहि प्रवीन कविराय नायका कहते हैं" । अर्थ । जाको विलोकि कैं कहिये देखकैं रसराय जो रसरीति में राजा अर्थात् रसरीति में जो अच्छे पुरुष हैं तिन के चित्त में भाव जो रतिस्याईभाव उपजता है ताको प्रवीन कवि नायका कहते हैं ।

उदाहरण—सवैया ।

कुन्दन को रंग फीको लगे,झलकै ऐसी अंगन चारु गुराई॥
आंखिन मैं अलसान चितोन मैं, मंजुविलासनकी सरसाई॥
को विन मोल विकात नहीं? मति राम लहैं मुसकानि मिठाई॥
ज्यौं२ निहारिये नीरे व्है नैननि,त्यौं२खरी निकरै सुनिकाई॥३॥

मूल अर्थ। वाके शरीर की चारु कहिये सुन्दर गुराई ऐसी दमकती है तिसके निकट कुन्दन जो सोधे हुये सोने के वरक का रङ्ग भी फीका लगता है और वाके नेत्रन में अलसान कहिये आलस भरे हुए हैं और चितवन जो वाकी दृष्टि में अच्छे विलासों की सरसाई कहिये रस की अधिकता है और वाकी मुसकानि जो हंसनि सोई है मिठाई ताकैं लेके विना मोल कौन नहीं बिकता है ? अर्थात् सब बिकते हैं, बिकने का अर्थ लच्छन लच्छना करके आधीन होना जानिये । ज्यों ज्यों निकट होके पक्की दृष्टि से अवलोकन करते हैं त्यों त्यों खरी कहिये पक्की सुनिकाई कहिये अच्छी-सुन्दरताई निकलती है । प्रश्न । दूसरे पद के आदि में लिखा है कि आंखिन में अलसानि सो नायका की दृष्टि सुरतांत में आलस्य युक्त होती है और यहां सुरतांत नही है यहां तो स्वरूप का वर्णन है सो स्वरूप के वर्णन में नेत्रन को मीन खंजन के समान चञ्चल वर्णन करते हैं । उत्तर । इस पदका अर्थ ऐसे है कि आंखिन में अलसान कहिये नेत्रन में आलस नहीं है । प्रश्न । लिखा है कि मुसकानि रूप मिठाई के पलटे विना मोल कौन नहीं बिकता है ? सो बिना मोल तो वह कहलाता है कि जिसके पलटे में कुछ नहीं लेवे और बिकजाय और यहां तो मुसकानि रूप मिठाई को लेके बिकता है यही मोल होचुका । उत्तर । इस पद का

यह अर्थ है कि को बिन कहिये को नाम बुद्धि का है सो जे पुरुष बुद्धि बिना हैं ते मुसकानि रूपी मिठाई से मोल नहीं बिकते हैं । प्रश्न । जो बुद्धिमान आशक्त होते हैं तो नायका में किसी प्रकार के गुण की अधिकता पाई जाती है सो बुद्धिमान उस के गुण को जान कर आधीन होते हैं और रूपकी अधिकता नहीं पाई जाती है । उत्तर । को बिन मोल बिकात नहीं इस पद का सिद्धांत अर्थ यह है कि ऐसा कोई भी नहीं है सो वाकी मुसकानि रूप मिठाई से आशक्त नहीं होवे अर्थात् सब आधीन होते हैं । प्रथम पद में तीसरा प्रतीप । नायका का रङ्ग उपमेय तातैं कंचन का रङ्ग उपमान सो अनादर होता हैः—

दोहा ।

अन आदर उपमेय तैं, जब पावे उपमान ।
तिच्छन नैन कटाच्छ तैं, मन्द काम के बान ॥ १ ॥

इति अलङ्काररत्नाकर ॥

दूसरे पद में स्वभावोक्ति अलङ्कार । नायका के नेत्रों में चञ्चलता और अनेक विलासों की अधिकाई जाति सुभाव ही से प्रगटत हैः—

दोहा ।

सभा उक्ति जहां वरनिये, वरनन जात सभाय ॥ १ ॥

चौथे पद में नायका के रूप के निहारवेको उद्यम करे ताको अधिक स्वरूप देखने की प्राप्ति होती है यहां उद्यम ते कार्य सिद्धि यातैं तीसरा समः—

दोहा ।

श्रम विन कारज सिद्धि जब, उद्यम करते होय ।

इति भाषाभूषण ॥

और दृढताई के लिये ज्यों ज्यों और त्यों त्यों शब्द हैं इन ते वीपसाः—

दोहा ।

दृढ़ता हित एक शब्द बहु बार 'वीपसा' जान ।

इति अलङ्काररत्नाकर ॥

तीसरा पद

कोई भी ऐसा नहीं है जो मुसक्यानि रूप मिठाई से मोल नहीं बिकता है अर्थात् सब बिकते हैं । यहां स्वर की श्लेषता कर के अर्थ फिरता है यातें वक्रोक्ति ।

दोहा ।

वक्रोक्ति स्वर श्लेष सौं, अर्थ फिरै जब होय ।
रसक अपूरब होजु पिय, बुरो कहत नहीं कोय ।। १ ।।

अर्थात् मुसक्यानि रूप मिठाई को लेकर तन मन धन और प्रान सर्वस्व देता है यातें मुसक्यानि रूप मिठाई पलटे बिकना लिखा यहां परिवृत्ती अलंकार हैः—

दोहा ।

परिवृत्ति पलटो कीजिये, थोरो दे बहु लेय ।।

इति अलंकाररत्नाकर ।।

और सम्पूर्ण कवित्त के अर्थ में विचित्र अलंकार होता है मोल बिकनें का अर्थ आधीन होना यह विपरीतता करकें इच्छा फल अति सुन्दर नायका की प्रीति दृढ करता हैः—

दोहा ।

इच्छा फल विपरीति तैं, कीजै जतन विचित्र ।

इति अलंकाररत्नाकर ।।

दोहा ।

तरुन अरुन एडीन के, किरन समूह उदोत ।
वैनीं मंडन मुक्ति के, पुंज गुंज रुचि होत ।। २ ।।

मूल अर्थ । तरुन कहिये सूर्य तिनकी किरनके समूह करके अरुन जो लाल एडीन को अर्थ मकार से बहु वचन होकर एडियां दोनों होती हैं तिन के उद्योत कहिये प्रकाश ताके प्रतिबिंब करके वैनी मंडन जो वैनी में सहेली वा झूमर लगाते हैं इस गहने का नाम वैनी मंडन भी है सो तिन में जो लगे हैं मोतियों के पुंज कहिये गुच्छे सो गुंज कहिये

चिरमियों की रुचि कहिये शोभाको प्राप्त होते हैं । प्रश्न। सूर्यकी किरनोंके समूह कर के नायका की एड़ियों की अरुनता उदय होती है तो क्या रात्रि के समय अरुनता मंद होजाती है ? । उत्तर । अर्थ यों चाहिये "कि तरुनी जो स्त्री ताकी एड़ियों की ललाई के प्रकाश की जो किरनें जिनका जो समूह है तिन कर के वैनी मंडन जो पहिले कही सो झूमर तिन के जो लगे हुए मोतियों का पुंज कहिये गुच्छा सो गुंज कहिये चिरमियों की रुचि कहिये शोभा को प्राप्त होते हैं" । प्रश्न । एड़ियों के प्रतिबिंब से मोतियों में ललाई होकर गुंज के तुल्य होते हैं पर गुंजाओं के मुख पर श्यामता होती है।उत्तर। यहां वैनीके केशों के प्रतिबिंबकी श्यामता जाननी चाहिये । प्रश्न । यहां अर्थ में यह बात लिखी है कि नायकाकी एड़िन की ललाई की किरन का समूह फैलता है तिन के प्रतिबिंब का रंग मोतियों पर गुञ्जा के रंग समान होता है तो शास्त्र में बिंब प्रतिबिंब सदृश लिखे हैं क्योंकि प्रतिबिंव में बिंब की झलक रहती है सो किरन समूह फैलने वाले प्रकाशवान बिंबका गुञ्जा समान मलीन प्रतिबिंव होना विरुद्ध है और मोतियों की द्युति विगाड़ के गुञ्जा करदेना यह भी विरुद्ध है ।-उत्तर । गुञ्ज रुच समूह गुंज जो धुनजो रुचजो हितकारी धुन करने वाले भंवर समूह वाली तरुनी जो स्त्री तिन की एड़िन की किरन से वैनी मंडन के मोतियों का मुक्ता पुंज अरुन द्युति होत हैं अर्थात् सहेली के मोतिन का गुच्छा प्रकाशमान लाल मनियों के सदृश होता है ।

। अन्वय । गुञ्ज रुच समूह तरुनी की एड़ियों की किरन से वैनी मंडन मुक्ता पुंज अरुन द्युति होते हैं ऐसे अन्वय कर अर्थ करना एड़ियों के प्रतिबिम्ब से मिल के वैनी मंडनके मोती लाल द्युति होते हैं यातें तद्गुन अलंकारः—

दोहा ।

तद्गुन तज गुन आपनों, संगत को गुन लेय ।
वेसर मोती अधर मिल, पद्मराग छवि देय ।। १ ।।

इति भाषा भूषण ।।

दोहा ।

छिद्र जाल मग ह्वै कढै, तिय तन दीपति पुंज ।
झिंझिया कैसो घट भयो, दिनही मैं बन कुंज ॥५॥

मूल अर्थ । छिद्रजाल बन में रूंखों की सघनता ताके जो कुंज तिन के जो छिद्र तिन में होकर तियके तन की दीपति जो कान्ति का समूह दमकता है इस कारण दिन के समय में भी बनकुंज झिंझिया कहिये गडुल्या (दीपक संजुक्त घट ताकी) समान होता है । प्रश्न । दिन के समय दीपक शोभा रहित होता है और छिद्रजाल कहिये मकानात में जो जाली होती है ताके छिद्र का जाल जो समूह सो छिद्र जाल कहलाता है सो बनकुंज में नहीं संभव है । उत्तर । रूंखों की सघनता के बीच तरवरे रहते हैं सोई हैं छिद्र, तिन छिद्रनका मग कहिये रस्ता तामें होकर कढ़ता है तिय के तन दीपति ज्वाला का पुंज तातें दिन के समय में भी बनकुंज झिंझियाके घट के समान होता है दिन के प्रकाश से भी जाके शरीर का प्रकाश अधिक दीखता है तब समय वैशिष्टध्वनी से जानना चाहिये कि रात्रि में बहुत प्रकाश होता है । नायका सहित बनकुंज उपमेय और दीपक सहित झिंझिया का घट उपमान इन की एकता यातें रूपक, झिंझियां का घट जुदा नहीं रक्खा यातें अभेद और दिन में प्रकाशवान यह उपमेय की अधिकाई यातें अधिक अभेद रूपक, उपमेय जो मुखादिक तिनें उपमान जे चन्द्रादिक तिन से एकता कर वर्णन करे तहां रूपकता के दोय भेद, उपमेय को प्रसिद्ध उपमान से जुदोई उपमान कर कहनो सो तद्रूप और प्रसिद्ध उपमान ही कर कहनो सो अभेद फिर एक एक के तीन २ भेद उपमेय की अधिकाई होय तो अधिक और हीनता होय तो न्यून और समता होय तो सम ।

इति अलङ्कार रत्नाकर॥

नायका के स्वकीयादि तीन भेद।

दोहा।

कही नायका तीनविधि,प्रथमहि स्वकिया मान।
परकीया फिर दूसरी,गनिका तीजी जान॥६॥

मूलअर्थ—नायका तीन प्रकार से कही है तामें प्रथम ही स्वकिया, पुनि कहिये फिर दूसरी परकीया और तीसरी गनिका जाननी। प्रश्न। नायका अंगभेद से चार प्रकार की पदमिनी, चित्रनी, संखिनी, हस्तनी और अवस्था भेद से मुग्धा, मध्या, प्रौढा ये तीन प्रकार की तिन में एक २ के चार २ भेद होते हैं, प्रकृति भेद स्वकिया, परकीया, सामान्या, ये तीन प्रकार की फिर समय भेद से प्रोषितपतिका, खंडिता, कलहंतरिता, विप्रलवधा, उत्कंठिता, वासुकसज्या, स्वाधीनपतिका, अभिसारिका प्रवच्छतिपतिका, आगमपतिका और कितनेक कवि देश भेद भी वर्णन करते हैं पर देश भेद में चमत्कार नहीं। देश भेद तो चमत्कार रहित होते हैं तो भी चार प्रकार से नायका के मुख्य भेद होते हैं सो यहां तीन प्रकार की किस तरह कही?। उत्तर। अंग भेदादिक नायकाके तो कोक अर्थात् काम शास्त्र के मत में विस्तार करके कहे हैं और यह शृंगार रस के मत सौं प्रकृति भेद के तीन भेद रक्खे हैं और अवस्था भेद समय भेद हैं सो तो इन तीनों भेदके अंतर्गत वर्णन किया है। प्रश्न। मूल दोहा के प्रथम पद में लिखा है कि नायका तीन विधि सो या पदके आगे स्वकिया परकिया सामान्या इस प्रकार नाम लिखने से भी क्रमसे भी पहली दूसरी और तीसरी जान लेते तो फिर पहिली दूसरी तीसरी कहने का कहा काम था? और लिखा है कि प्रथम ही स्वकिया सो "ही" अक्षर पद में नहीं लिखते तो भी प्रथम स्वकिया कहने से पहिले स्वकिया होजाती और पुनः फिर लिखने से भी पुनः पद दूसरी उक्ति का अर्थ देता है और परकिया पुनि दूसरी ऐसा पद में लिखा है सो पुनः लिखकर फिर दूसरी लिखना विरुद्ध है। उत्तर। इस दोहे का अर्थ इस तरह है कि कही नायका तीन विधि सो इस पद के दोय अर्थ होते हैं एक तो नायका की तीन प्रकार गिन्ती दूसरा यह

कि जिन त्रियन को नायकत्वपना है तिन की विधि यहां कही है कोई वादी यह शंका करे कि स्त्री सब नायका होती हैं। उत्तर। यह है कि मतिराम पहिले लिख चुका है कि जिन के देखने से रस रीति में जो प्रवीण पुरुष हैं तिन के चित्त में रतिभाव उपजता है तिन को नायका कहते हैं और बालक और वृद्ध और मलीन स्त्रियों को नायकत्वपना नहीं रक्खा। उत्तर। दोहे के दूसरे पद में ही लिखा है सो ही कहिये निश्चै प्रथम जो पहिले सुकिया मानों। सुकिया को अर्थ अच्छी क्रिया वाली अर्थात् स्वकी जो कहिये निज पतिकी या कहिये यह नायका परकीया पुन दूसरी इस पद का यह अर्थ है कि पुन कहिये फिर दूसरी को अर्थ जो दूसरे की होय ताको परकीया कहिये गनिका तीजी जानका अर्थ तीसरी नायका को गनिका जानना॥

स्वकिया लक्षण।

दोहा॥

लाजवती निसिदिन पगी, निज पति के अनुराग।
कहत सुस्वकिया सील मय, ताको पति बड भाग॥७॥

मूल अर्थ—निशिदिन पति के अनुराग में पगी कहिये परिपूर्ण और लाजवती जो लाज करके युक्त शील संयुक्त ताहि स्वकिया कहते हैं ताके पति को बड़ो भाग है। प्रश्न। पति के अनुराग जुक्त तो पहले कह चुके थे और फिर पति के वड़ भाग नहीं कहते तो भी ऐसे गुण जुक्त स्त्री जाकें होय तो ता पति के अच्छे भाग तो ध्वनि सेई जान लेते। उत्तर। ताके पति वड़ भाग का यह अर्थ है कि ता नायका के पति कहिये इज्जत और भाग बड़े हैं।

उदाहरण—सवैया।

संचि विरंचि निकाई मनोहर, लाजति मूरतिवंत बनाई।
तापर तोपर भाग बड़े मतिराम लसें पति प्रीति सुहाई।
तेरे सुसील सुभाव भटू कुल, नारिनको कुलकानि सिखाई।
तैंहीं जने पतिदेवतके गुन, गौर सबै गुन गौरि पढाई॥८॥

मूल अर्थ—विरंचि जो ब्रह्मा निकाई कहिये सुन्दरता और मनोहरता के संच कहिये इकट्ठी करके लाज की मूर्त्तिवान तोकों बनाई है ता पर कहिये ता बात पर तोपर जो तेरे पर भाग बड़े जो अच्छे भाग हैं और 'मतिराम' कवि कहते हैं कि पति की प्रीति सुहावनी लसत है तेरे सुसील सुभाव भटू सुसील स्वभाव कहिये सहज सुभाव ही से भटू कहिये हे सखी कुलवंती जो नारि तिन को कुल कानि कहिये कुल की मर्जादा सिखाई तैंहीं जने पतिदेवत के गुन अर्थात् तैंने ही पतिव्रतपने के गुणों को गौरव जने नाम प्रगट किये और गौरि नाम पार्वतिजी ने मानों तुझ को सब गुन पढाये। प्रश्न। ब्रह्माने निकाई और मनोहरताई को तो संचय किया और मूर्त्ति लाजकी किस तरह बनाई? । प्रश्न दूसरा। और तापर का अर्थ तिन गुने पर और तो पर जो तिहारे पर बड़ा भाग कहे सो नायका पर बड़ा भाग कहना तो वाजिबहै परंतु नायकाके अच्छे गुणों पर और नायका पै सामिल बड़ा भाग लिखा सो बड़ा भाग क्या होता है ? गुण जो है सो तो जड़ पदार्थ है भाग्य तो चैतन्य का होता है मति राम कहे पति प्रीति सुहाई और पिछली तुक में पति देवता के गुन लिखे हैं सो एक आशय में दो दफ़े पति का वर्णन किया सो पुनरुक्त दूषण है। उत्तर। संचि विरंचि निकाई मनोहर का अर्थ इस प्रकार है कि विरंचि कहिये विना रंच, नही है रंच, जामें ऐसी निकाई और मनोहर और लाज इन बातों को तैं कहिये तैंने संच कहिये इकट्ठी करके मूर्त्तिवान बनाई कहिये बनके आई है अर्थात निकाई और मनोहरता और लज्जा इन गुणों को विरंच जो ब्रह्मा जी ने संच जो इकट्ठी करके ते मूर्त्तिवंत बनाई कहिये तेरे तईं इन सब गुणों की मूर्त्तिवान बनाई है तो पर भाग कहिये तेरो जैसो भाग बड़े जो बड़ो और मति जो मत तापर कहिये तिन पर मति राम लसैं कहिये श्रीरामचन्द्र तुल्य पति अनुकूल की प्रीति सुहावनी है अर्थात् तो कहिये तोकौं पर भाग जो सोभाग और पति जो इज्जत तापर कहिये तिन पर मति राम कवि कहते हैं कि प्रीति सुहाई कहिये इन गुनों पर तेरी प्रीति सुहावनि है अर्थात् तापर भाग जो तेरे पर भाग और पति कहियेइज्जत तापर कहिये तिन गुनों पर प्रीति सुहाई कहिये पीय को तैं अति सुहावनी है॥ नायका से सखी कहती है तेरे तईं पतिव्रतपने के गुनों की बड़ाई

मानो श्रीपार्वती जी ने पढ़ाई है यहां असिद्ध-विषया-हेतु-उत्प्रेक्षा अलंकार है पतिव्रतपने के गुन नायका में स्वभाव ही से हैं तहां पार्वती जी की शिक्षा को हेतु मान लीनो :–

दोहा ।

उत्प्रेक्षा संभावना, वस्तु हेत फल सध्य ।
पहिली उक्ति अनुक्त है, ताहि न सिद्धि असिद्ध ॥

वार्ता—हेतु उत्प्रेक्षा के दोय भेद सिद्ध बिषया और असिद्ध विषया:–

मुख सम नही यासें मनो, चन्द्रहि छाया छाय ॥

यह असिद्ध-विषया क्योंकि चंद्र मंडल में स्वभाव ही से छाया है तहां नायका के मुख समहू नहीं और क्षोभ को हेतु मानलीनो सो मूल सों चन्द्रमामें है नही कवि ने झूंठी ठहराय लीनी यातें असिद्ध बिषया ।

दोहा ॥

जानति सौति अनीति है, जानें सखी सुनीति ।
गुरुजन जानति लाज है, प्रीतम जानत प्रीति ॥६॥

मूलअर्थ—जानति सौति अनीति है कहिये सौतें तो ता नायका को अनीति जानती हैं और सखी जन हैं ते ता नायका को सुनीति जो अच्छी नीति समझती हैं और गुरु जन जो बड़े हैं ते ता नायका को लाज स्वरूप जानते हैं और प्रीतम जो नायक है सो ता नायका को प्रीति मूर्त्ति जानता है । प्रश्न । गुरु जन लाज जानत हैं यातें गुरु जन के निकट तो बहुत लाज रखती परंतु अन्यत्र निर्लज्ज रहती है और प्रीतम तो याको प्रीतरूप जानत हैं पर यह अंतस में नायक से प्रीति नहीं रखती ऐसी अनीति को निगाह करके सौति जानती हैं इस तरह की सुकिया कैसे होती हैं ?। उत्तर । जानति सौति अनीति है सो अनीति कहिये खोटी नीति को तो सौति समझती है और सुनीति कहिये अच्छी नीति ताको सखी जानती है और लाज को गुरजन समान समझती है और प्रीतमको प्रीति मूर्त्ति जानती है इस अर्थ करके शुद्ध स्व-

किया होती है। पहले अर्थ में उल्लेख अलंकार एक नायका को सखी और सौति और गुरजन और प्रीतम ये सब जुदी २ रीति से समझते है यातें उल्लेखः—

दोहा।

बहुविधि बरनैं एक कौं, बहुगुन को उल्लेख।
तूरिन अर्जुन तेज रवि, सुर गुर बचन बिशेख ॥१॥

और दो अर्थ होने से श्लेष अलङ्कार।

इति अलंकाररतनाकर ॥

स्वकीया भेद ॥

दोहा ॥

त्रिविध सुस्वकिया वरनिये, प्रथम हि मुग्धा नाम।
मध्या पुनि प्रौढा गिनो, बरनत कबि मति राम ॥१०॥

मूल अर्थ—कवि मति राम बरनत हैं कि तीन प्रकार पर स्वकिया जानो, प्रथम मुग्धा नाम पुन मध्या गिनो प्रौढा।प्रश्न। त्रिविध स्वकिया कहके मुग्धा, मध्या, प्रौढा कहते तो भी क्रम से पहिली दूसरी तीसरी भेद से तीनों जान लेते, इन सिवाय पुन अव्यय तो फिर भी संज्ञाओं के बीच रखना वाजिब है पर मुग्धा कहके फिर नाम कहेने की क्या आवश्यक्ता है और पद में लिखा है कि प्रौढा गिनो सो केवल गिनो कहने से सन्देह रहता है कौनसा भेद गिनो। उत्तर। इस दोहे का अर्थ इस प्रकार है कि कवि मतिराम कहता है कि त्रिविध स्वकिया नाम गिनो तामें प्रथम हि मुग्धा जानो पुन मध्या पुन प्रौढा, पुन शब्द पद में एक स्थान रक्खा है परन्तु अर्थ में दो बार लाने से रूप बनता है।

मुग्धा ॥

दोहा ॥

अभिनव यौवन आगमन, जाके तन मैं होय।
ताकौं मुग्धा कहत हैं, कवि कोविद सब कोय ॥११॥

मूल अर्थ—" अभि " उपसर्ग विशेष अर्थ देता है सो विशेष नवीन जोवन का आगमन जाके तन कहिये शरीर में होता है ताको कवि

और कोविद सब ही मुग्धा कहते हैं। प्रश्न। नवीन कहने का क्या कारण? जोवन का आगम कहने से भी नवीन ही जान लेते जोवन का आगमन पुराना कब होता है? । उत्तर। भिन कहिये भेद अभिनव कहिये विन भेद निरंतर जोवन आगमन जाके तन में होय ताको कबि, कोविद सब कोई मुग्धा कहते हैं अर्थात् विशेष नवीन जोवन आगमन कहिये जोवन की आग कहिये अग्नि जाके तन मन में होय ताको कबि, कोबिद सब मुग्धा कहते हैं ।।

उदाहरण—कवित्त ॥

नेक मंद मधुर कपोल मुसकानि लागे,
नेक मंद गमन गयंदन की चाल भो ॥
रंच ऊंचो अंचर उरोजन के अंकुरनि,
बंक डीठि नेन जुग नें सुकबि साल भो ॥
मति राम सुकबि रसीले कछु बैन भये,
बदन सिंगार रस बेलि आल वाल भो ॥
बाल तन यौवन रसाल उलहत लखि,
सौतिन के साल भो निहाल नंदलाल भो ॥१२॥

मूल अर्थ। नेंक कहिये थोरे मंद कहिये धीरे २ मधुर जो मिठास जुक्त कपोल जो गालन में हांसी प्रगट होने लगी गमन कहिये हलनो गयन्द कहिये मदझर हाथी के तुल्य नेंक कहिये थोड़ी २ चाल में मन्दपनो प्रगट भयो रंच कहिये थोरो अंबर जो वस्त्र उरोजन कहिये कुच के अंकुरन कहिये उबसने से ऊंचो रहने लगो वंक डीठ नैन जुग कहिये दोनों नेत्रों की बंक जो कटाक्ष जुत दृष्टि होने लगी सुख भी विशेष कहिये अधिक प्रगट भयो मतिराम सु कवि रसीले कुछ बैन भये सो मतिराम कवि कहता है कि बैन जो बचन तामें रसीले कहिये मधुरताई प्रगट भई बदन सिंगार रस वेल आलबाल भौ बदन जो मुख सो सिंगार रस की बेलि

जो लता ताको आलबाल कहिये थाने की तुल्य भयो । बदन को शृङ्गार रस की बेलिको थानो कहिबो संभवे नहीं यातें लच्छन लच्छना सारोपा-गौनीतादात्मक संबन्ध करके पूर्ण शृङ्गार रस प्रगट करता जानिये बाल तन जोवन रसाल उलहत लखि कहिये बाल जो स्त्री ताको तन जो शरीर रसाल कहिये रस स्थानक तामें जोबन को उलहत कहिये प्रगट होतो देख सौतिन कें तो साल भयो और नन्दलाल जो श्रीकृष्ण से नि-हाल होते भये । लच्छन लच्छना करके साल को अर्थ दुःख और निहाल को अर्थ आनन्द है । प्रश्न । इस कवित्त के दूसरे पद में लिखा है कि सुख बिलास भयो और यहां नायका को जोवनागम वर्णन है तहां नायका को कौनसा सुख प्रगटा? । फिर प्रश्न । एक पद में तो लिखा है कि शृङ्गार रस वेलि आल वाल फिर अगले पद में जोबन रसाल लिखता है इस प्रकार दो वेर लिखने से भी पुनरुक्ति दूषण होता है । उत्तर । और अर्थ तो पहिली रीति से और अन्वय करके इतना विशेष जानो रसाल सुख विशेष नन्दलाल के साथ लगाओ अर्थ बाला के तन जोवन उलहतो देख कें सौतिन कें तो साल कहिये दुःख भयो और रसाल कहिये रसकी सालजो घर ऐसे नन्दलाल जो श्रीकृष्णचन्द विशाल कहिये अधिकसुख कर के निहाल कहिये आनन्दित भये । नायका के शरीर में जोवन प्रगट देख कें सौतिन के हिय में साल हुए और नन्दलाल निहाल हुए यहां असङ्गति अलङ्कारः—

दोहा ।

तीन असङ्गति, काज अरु, कारन न्यारे ठांव ।

इति भाषाभूषण ।।

दोहा ॥

अभिनव यौवन जोति सौं, जग मग होत बिलास ।
तिय के तन पानिप बढ़ै, पिय के नैननि प्यास ॥१३॥

मूलअर्थ—अभिनवयौवन जोति सों कहिये 'अभि' जो उपसर्ग विशेष अर्थ नवीन जोवन की ज्योति कहिये ज्वालासों जग मग कहिये

प्रकाश को विलास होत है तिय के तन पानिप बढ़ै पानिप कहिये स्वच्छता तिय जो स्त्री ताके तन जो शरीर तामें बढ़त है तैसे पिय जो नायक ताके नैन जो नेत्र तामें प्यास जो तृषा तिन को नेत्रन में बढ़नो संभव नहीं तातें लच्छन लच्छना कर के प्यास को अर्थ अभिलाषा। प्रश्न। पहले लिखा है कि जोवन की जोति जग मगत है जग मगने का अर्थ अत्यंत कांति का दमकना जोवन की जोति अत्यंत दमकती है फिर कौनसी हीनता है सो पीछे पानिप बढ़ना लिखा? और पूर्ण जोवनवन्ती नायका के निकट नायक को प्यास बढ़ती है सो स्वकिया नायका के निकट नायक की अभिलाषा क्यों नहीं पूर्ण होती है? । उत्तर। तिय के तन पानिप कहिये निरंतर जोवन की जोति और पानिप बढ़त है तैसे जग मग कहियें लोकमार्ग जुत पिय ताके नैनन विलास की प्यास बढ़त है, प्यास का अर्थ तृषा सो नेत्र में तृषा नहीं होती है तृषा को अर्थ लच्छन लच्छना करके रूपनिहारवे की अभिलापा बढ़ती है। वाचवैशिष्ट्यध्वनि कर के यह अर्थ होता है कि वह नायका अत्यंत सुन्दर है, ताके शरीर में जोवन की कांति बढ़ती है ताको देखके नायक के हृदय में वहुत प्रीति बढ़ती है यहां नायका के शरीर पर जोवन की कांति रूप गुन बढ़ता है तातें नायका के हृदय में प्रीति गुन प्रगट होता है यह उल्लास अलंकार "औरके गुन से और को गुन उपजता है तहां उल्लास अलंकार,"

इति अलंकार रतनाकर ॥

मुग्धाके भेद ॥

दोहा ॥

मुग्धा के द्वै भेद बर, भाषत सु कबि सुजान ।
एक अज्ञातहि जोवना, ज्ञात जोवना आन ॥ १४ ॥

मूलअर्थ—मुग्धा कहिये अंकुरित जोवना तिन के दोय भेद वर जो अच्छे एक अज्ञात जोवना और दूसरी ज्ञात जोवना तिन को सु कवि सुजान भाषत हैं। प्रश्न। ऐसें लिखा है कि अज्ञात ही जोवना सो हि प्रत्यय नहीं लिखते तोभी अर्थ स्पष्ट होता है। उत्तर ये अर्थ ऐसे जानो एक ही कहिये हृदय विषें जोवन अज्ञात हैं आन कहिये दूसरी के हृदय विषे जोवन ज्ञात है।

अज्ञात यौवना ॥

दोहा ॥

निज तन यौवन आगमन, जो नहीं जानत नारि।
सो अज्ञात सु जोवना, कवि बरनत निरधारि ॥ १५ ॥

मूलअर्थ—निज तन जो अपने तन में जोवन को आगम जो नारि नहीं जानती है ताहि कहिये तिन को अज्ञात सु जोवना कहिये अच्छे जोवन वाली कबि बरनत हैं निरधार कर के। प्रश्न। निज तन के जोवन को अज्ञातजोवना नाहीं जानती पर क्या और के योवन को जानती है? दूसरा प्रश्न। सुजोवना कही सो जोवन का तो ज्ञान भी नहीं फिर क्या सुजोवना है?। उत्तर। जो नारि स्त्री जो हृदयमें निजतन कहिये बिना जतन रहती है और जोवन के आगम को नहीं जानती है ताहि कवि अज्ञात यौवना कहते हैं। द्वितीय उत्तर। सु जोवना के सु उपसर्ग को कबि की साथ लै के यह अर्थ करना चाहिये कि सुकवि बरनत हैं ॥

उदाहरण—सवैया ॥

खेलन चोर-मिहीचनी आजु, गई हुती पाछिले द्यौस की नाईं॥
आली कहा कहौं एक भई मति राम नई यह बात तहांईं॥
एकहि भौंन दुरे इक संगहि, अंग सौं अंग छुवायो कन्हाईं॥
कम्पु छुटयो तनु स्वेद बढयो, तन रोम उठे अंखियां भरआईं१६

मूलअर्थ—चोर मिहीचनी का ख्याल खेलने को पिछले दिनों की नाईं नायका कहती मैं गई थी सो हे आली कहा कहूं एक तहां नई बात भई। एक भौंन कहिये घर में मैं दुरी कहिये छिपी उसी घर में एक संग जो एक साथ कन्हाई आकर मेरे अंग से अंग छुवाय कहिये स्पर्श किया ताही छिन कम्पा, प्रस्वेद, रोमांच, आंसू ये सब प्रगट भये। प्रश्न। नायका कहती है कि मैं पिछले दिनों की नाईं खेलने को गई थी, इससे यह जाना जाता है कि ये लरकपन से हमेशह खेलने को जाती थी और नायक भी वैसेही वहां खेलता था फिर इसे अंकुरित

जोवना अच्छी सुन्दरी जान के त्रिया चतुर होके इनके संग एक भौंन में जाकर आलिंगन किया यह नायक उपपति यातें नायका परकीया होती है और मतिराम तीन प्रकार स्वकिया के भेद में पहले मुग्धा कही है यह प्रकरण भी स्वकियाका है तामें परकीया कैसें लिखी ? ।उत्तर। बालपने में विवाह होके नायका आई है सो नायक के पास रहती है, अब जोवन प्रगट होने लगा ताको नहीं जानति है, पद "खेलन चोर सिहीचनी आजु गई हुती पाछिले द्यौस की नाईं" अर्थ—खेलनचोर मिहीचनी कहिये चोर महीचनी ख्याल खेलने वाले ने आय के जगाई हुती कहिये जगाई हुती पीछले द्यौस की नाईं इस कहने से जाना जाता है कि पिछले दिनों में नायक हमेशा इसको जगाता था इसी बात से स्वकिया साबित होती है और परकीया के घर जाकर नायक हमेशः नहीं जगा सक्ता है पद ' एकहि भौंन दुरी एक संगहि अंग सो अंग छुवाय कन्हाई, अर्थ—एकही जो ऐसे कहीं भो जो डर न दुरी कहिये नहीं दुरी फिर एक सङ्गही कहिये एक साथ कन्हाई ने मेरे अंगों से अंग छुवाय कहिये स्पर्श किया नायका के शरीर पर कंपा और प्रस्वेद और रोमांच और आंसू ये चार प्रकार के सात्विक भाव एक साथ प्रगट भये यातें समुच्चय अलंकारः—

दोहा ।

दोष समुच्चय भाव वहु, कछु इक उपजे संग ।
इति अलंकाररत्नाकर ।।

दोहा ॥

लाल ! तिहारे संग मैं, खेलैं खेल बलाय ।
मूंदत मेरे नैंन हो, करन कपूर लगाय ॥१७॥

मूलअर्थ—नायका कहती है कि हे लाल तिहारे सङ्ग में ख्याल बलाय खेले, क्योंकि मेरे नेत्रन को तुम्हारे कर जो हाथ ताकें कपूर लगाय कें मूंदन हो ।।

प्रश्न—नायका का यहां यह बचन है कि तिहारे सङ्ग बलाय खेले इससे जाना जाता है कि नायका इस नायक की विवाहता नहीं है दिल की खुशी से खेलने को आती है सो नेत्र मूंदवे में कपूर के भ्रम को मान कर खेलने से नटती है और यह प्रकरण स्वकिया का है जामें परकिया

क्यों चाहिये ?। उत्तर। लाल तिहारे सङ्ग में इसका यह अर्थ है कि हे लाल। मैं जो तिहारे जो तुम्हारे संग हूं औ तुम वलाय कहिये दुखदाई के ख्याल खेलते हो सो मेरे नेत्रन को तुम्हारे करके कपूर लगाय के मूंदत हो ॥ नायका के नेत्रों को नायक मूंदता है तब नायका के काम उद्दीपन हो कर आंसू सात्विक होता है तातें नायका नायकके हातों में कपूर का भ्रम जानती है। प्रश्न।—आंसू सात्विक लिखे सो जल में कपूरकी गन्ध नहीं होती और नायका ने कपूर कहा सो दूसरा अर्थ करना चाहिये ? उत्तर। दूसरा यह हो सकता है कि करन कहिये दोनों हाथन के "क" कहिये जल सो पूरन लगाय के मेरे नेत्र मूंदत हो। यामें भ्रांति अलंकारः—

दोहा।

समरन भ्रम सन्देह ये, लच्छन नाम प्रकाश।

इति अलंकाररत्नाकर ॥

ज्ञात यौवना—दोहा ॥

निज तन यौवन आगमन, जानि परति है जाहि।
कवि, कोविद सब कहत हैं, ज्ञात योवना ताहि ॥१८॥

मूलअर्थ—निज तन जो अपने तन में जोवम के आगम को जो नायका जानती है ताको कवि कोविद सब ज्ञात जोवना कहते हैं।

प्रश्न—जोवन के आगमन को जानति है इतना लिखने से ज्ञात जोवना होजाती है तो फिर निजतन के लिखने का क्या कास था ?। उत्तर। निजतन जो विना जतन कहिये स्वतः सिद्ध जोवन के आगम को जानलेती है ताहि ज्ञात जोवना कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त।

काननि लौ लागे मुसकानि प्रेम पागे लौने,
लाज भरे लोचन विलसत अनंगतैं ॥
भारु धरि भुजनि डुलावति चलति मंद,
औरें ओप उलहत उरज उतंग तें ॥

मतिराम यौवन पवन की झकोर आयें,
बढ़ति सरस रस तरल तरंग तैं॥
पानिप अमल की झलक झलकन लागीं,
काई सी गई है लरिकाई कढ़ अंग तैं॥१९॥

मूल अर्थ—कानन लौं लागे कहिये श्रवन तक पगे हुये मुसकानि जो हांसी और प्रेम कहिये स्नेह में पागे कहिये पूर्ण, अनंग जो काम से झलकत कहिये दमकत है भार जो बोझ को धारण करके भुजन कहिये बाहों को डुलावत कहिये हिलावति है और मन्द जो धीरे चलत है और ओप उलहत कहिये नवीन शोभा प्रगटत है उरज उतंग तैं कहिये ऊंचे कुचन तैं मति राम कवि कहत है जोवन रूपी पवन की झकोर कहिये फेट से सरस जो अधिक रस की तरल जो चपल तरंग बढती है पानिप जो छवि अमल जो निर्मल करकें झलक झलकने लागी कहिये दमक दमकने लागी तातें काई कहियें कांजी तुल्य लरकाई सो अंग जो शरीर से निकल के दूर भई। प्रश्न—पहले पद में लिखा है कि प्रेम पागे सो प्रेम तो नायक से होना वाजिब है और आप से आप प्रेम नहीं होता है। दूसरो प्रश्न। यह है कि भार धरि भुजन डुलावति सो जोवन के बढने से भुज भारी नहीं होते हैं। उत्तर। अन्वय लौने लाज भरे लोचन कान प्रेम पागे मुसकानिन लो लागे। अर्थ। लौने जो सुन्दर सो लाज से भरे हुये लोचन कहिये नेत्र कान जो श्रीकृष्णचन्द्र तिनके प्रेम पागे कहिये स्नेह में लय होके मुसकाननि लौ लागे कहिये विहसते दरसने लगे। दूसरे प्रश्न का अर्थ। इस पद का अन्वय इस प्रकार है उतंग उरज उलहकें भार धरि भुजनि डुलावति मन्द चलति है। अर्थ। उतंग जो ऊंचे उलहते कहिये उकसते हुये उरज जो कुच तिनके भार कहिये बोझ ताके धर कहिये धारन करके मन्द जो धीरे २ भुज कहिये बांह हिलाती हुई चलती है। यहां जोवन सहित शरीर उपमेय और पवन सहित जल उपमान इनकी परस्पर एकता तातें रूपक अलंकार और उपमेय उपमान की समानता करके वर्णन है यातैं सम अभेद रूपक और लक्षण

पीछे लिख आये हैं अर्थात् मनु जनु वाचक नहीं हैं उत्प्रेक्षा संभव है, यातें गम्योत्प्रेक्षा।

इति अलंकाररतनाकर॥

दोहा॥

इतैं उतैं सकुचत चितैं, चलत डुलावति बांह।
दीठ बचाय सखीनकी, छिनक निहारत छांह॥ २०॥

मूलअर्थ—इतैं उतैं सकुचत चितैं इते उते कहिये यहां वहां सकुचत कहिये सरमाय कें चितैं कहिये चितवन करती है अर्थात् सकुचत चितैं कहिये चित जो मन तामें सकुचत जो सरमाती है और बांह जो भुजान को डुलावति कहिये हिलाती हुई चलती है दीठ बचाय सखीन की जो सहेलिनि की दीठ जो निगाह ताको बचाय के कहिये चुकाय कें छिनक जो थोरीसी बखत छांह निहारती है कहिये अपनी छाया को देखती है।

प्रश्न—लिखाहै कि यहां वहां मन में सकुचत है सो यहां वहां कहने से दोय स्थान पाये जाते हैं यहां कहिये निकट वहां जो दूर सो सकुचने का कुछ कारन होताहै सो निकट सकुचने का तो कौनसा कारणहै ? और दूर का कौनसा है ?। फिर प्रश्न। संकोच हृदय में उपजता है सो हृदय दूर रहता नहीं है। उत्तर। इतैं उतैं जो निकट दूर चितवन करके किसीको देखति है तब बांह झुकाके चलती हुई सकुचित जो सरमाती है। फिर प्रश्न। बांह झुकाके चलने से सरमाती है यह लिखते हो सो तो चलवे में बांह हलने की क्रिया स्वाभाविक है सो या की क्या शरम है ?। उत्तर। यह अर्थ इस तरह है कि इतैं जो निकट उतैं दूर चितैं चितवन करके अर्थात् निगाह देकें सखीन की दीठि को बचाय क्षण मात्र अपनी छाया को निहारती है फिर सकुचित है तसे चलती है तब चलने से बाहें हिलाती हैं॥ यह रीति मुग्धा नायका की स्वाभायिक है यातें स्वभावोक्ति अलंकार, यह अलंकार पहिले आचुका है यातें लच्छन नहीं लिखा हर एक कवित्त या दोहे में एक बेर जो अलंकार पहिले पहल आता है वहां लक्षण सहित लिखते हैं और हर एक कवित्त दोहे में पहले आया हुआ अलंकार फिर आता है तब केवल नाम लिखते हैं सब ग्रन्थ कर्त्ताओं ने यही रीति रक्खी है यातें मैं भी इस ग्रंथ में यही रीति रखता हूं॥

अथ नवौढा ॥

दोहा ।

मुग्धा जो भय लाज जुत, रति न चहत पति संग ।
ताहि नवौढा कहतहैं, जो प्रवीन रस रंग ॥ २१ ॥

मूल अर्थ—मुग्धा कहिये अंकुरित जोवना लाज और भय जुक्त पति के संग रति नाहीं चाहतिहै ताहि कहिये तिसको रस रीतिमें प्रवीन हैं ते नवोढ़ा कहते हैं ।

यहां इतना ही कहना वाजिब है कि मुग्धा कहिये नवीन अवस्था जो स्त्री है सो भय और लाज से रति नहीं चाहती है ताको नवोढ़ा कहिये । और यहां कहा है कि पतिके संग भय लाज जुत रति नहीं चाहती है तो कहा उप पति के संग भय लाज छोड़के रति चाहती है ? । उत्तर । मुग्धा जहां भय लाज जुत कहिये मुग्धा भय और लाज संयुक्त है ताते रति नहीं चाहती है और पति कहिये निज नायक के संग कहिये सामिल रहतीहै ताहि कहिये तिनको रस रंग कहिये रस रीति में प्रवीन जो हैं ते नवोढ़ा कहते हैं ।

उदाहरण ।

सवैया ॥

साथ सखीकेनई दुलही को,भयो हरिकोहियो हेरि हिमंचल॥
आय गयो मति राम तिही घर,जानि इकंत अनंग सौं चंचल॥
देखत ही नंदलालकों बालके, पूरि रहे असुवानि दृगंचल॥
बात कही नगई सुरही गहि,हाथदुहूंसौं सहेलीको अंचल२२॥

मूल अर्थ—साथ सखी के नई दुलही को कहिये सखी जो सहेली तिन की साथ जो संग नई दुलही कहिये नवीन विवाही हुई स्त्री को हेरके कहिये देखकें हरि जो श्रीकृष्ण चंद्र को हिय जो हृदय सो हिमंचल भयो सो हिमंचल को अर्थ हिमालय पहाड़ है सो हृदय को नाहीं संभवे सब लच्छन लच्छना करके हिमंचल को अर्थ शीतलता लीजिये और ध्वनि

से विरह की ताप दूर भई " आय गयो मतिराम तिही घर जान इकंत अनंग से चंचल" मतिराम कवि कहता है कि तिही घर कहिये वो ही घर चंचल कहिये शीघ्रतासे अनंद युक्त आय गये देखतेही नंदलाल कों वाल के वाल जो स्त्री है ताके नंदलाल जो श्री कृष्ण तिन को देख के पूरि रहे अंसुवान दृगंचल पूरि रहे हैं कहिये पूर्ण होरहे हैं दृग जो नेत्रन में चल कहिये चाल के वात कही न गई कहिये बोल न सकी सो रही गहि हाथ दुहू सों सहेली को अंचल, सो कहिये वह नायका रही कहिये मुग्धा ते स्थिर भई दोहू हाथ से सहेली जो सखी ताको अंचर जो वस्त्र सो गहि कहिये पकरके । प्रश्न । यह प्रकरण स्वकिया का है और यहां स्वकिया परकीया की निश्चय नहीं है नायका डरती है सो ढरने में नवोढा तो है पर स्वकिया साबित नहीं होती है क्योंकि एकांत में जो जबरदस्ती के भय से पर पुरुष से कैसे नहीं डरे । फिर प्रश्न । और कहोगे कि नायका के साथ सखी है सो दूसरी सखी के साथ होते पर पुरुष जबरदस्ती नहीं कर सक्ता है सो लिखा है नायक इकंत जान कर आया इससे जाना जा ता है कि सखी भी नायक की भेजी हुई है तब स्वकिया कैसें है ?। फिर प्रश्न । और लिखा है कि नायका के आंखन में आंसू पूरित हो रहे हैं इस के आगे फिर चलना लिखा है सो भी अधिक पद दूषण है । सखी के साथ नई दुलही को हरि हेरति ही घर अनंग से चंचल चले हिय हिम भयो मतिराम नंदलाल को देखत ही बाल कहती है कि ये कंत आय गये जान चल वात कही न गई सो दृगन में आंसू पूरित भये और दोनों हाथों से सहेली को अंचल गह रही अर्थ—सखी के साथ जो सहेली के संग नई दुलही जो बींदणी को हरि जो श्रीकृष्ण हेर कहिये देख क तिही घर कहिये उसी केलि भवन में अनंग कहिये काम से चंचल जो चपल हैं के चल कहिये गई और हियें जो हृदय सो हिम भयो कहिये ता को अर्थ लच्छन लच्छना करके शीतल भयो ध्वनिसे विरह की ताप दूर भई जानिये मतिराम कवि कहते हैं कि ऐसे नंदलाल कहिये श्री कृष्ण चंद के देखत कहिये बिलोकि कें ही कहिये निश्चै वाल, जो स्त्री कहत भई ये कंत आय गये याको अर्थ ये पति आइ गये जान को यह अर्थ सखी से कहे समज इतनी बात तो सखी से कही फिर चल बात कही न गई कहिये चलने की बात कहती थी सो नहीं कही गई

और दृगन में आंसू पूरित भये कहिये नेत्रन में आंसू पूरि रहे और दोनों हाथों से सहेली के अंचल गहि रही कहिये दोनों हाथों से सखी को वस्त्र पकड़ रही । नवोढ़ा नायका प्रीतम को संग नहीं चाहती है सो नायक आय मिले यहां नायका के चित्त की अभिलाषा से उलटा फल हुआ यातें विषाद अलंकार :—

दोहा ।

सो विषाद चित चाहतें, उलटो फल ह्वै जाय ।

इति अलंकार रतनाकर ।।

दोहा ॥

ज्यों ज्यों परसै लाल तन, त्यों त्यों राखै गोय।
नवल बधू डर लाजतैं, इंदु बधू सी होय ॥ २३ ॥

मूलअर्थ—ज्यों ज्यों नायका के तन को लाल परसत है त्यों त्यों नायका गुप्त करती है अर्थात छुपाती है और नवल बधू जो मुग्धा के चार भेद हैं तामें एक नवल वधू होती है जो डर लाज कहिये भय और शरम तें इंद्रबधूजो बीरबहूटी ताके तुल्य होती है । प्रश्न । ज्यों ज्यों लाल नायका के तन को परसत है त्यों त्यों गुप्त करती है सो कहा गुप्त करती है ? और कहोगे कि तन को गुप्त करती है तो एक बेर तन शब्द है तिस के संग लिखते हो कि नायक तन को स्पर्श करता है फिर तन शब्द दोहे में कहां है?। फिर प्रश्न । नायका बीरबहूटी के समान किस तरह से होत है?। उत्तर । पहिले इतना ही चाहिये कि ज्यों ज्यों परसे लाल अर्थात् नायक ज्यों ज्यों नायका को स्पर्श करता है तन त्यों त्यों राखे गोय कहिये नायका त्यों त्यों तन को गुप्त करती है अर्थात् छिपाती है और जिस तरह से इंद्रबधू कहिये मामोलिया जिस को सावन की डोकरी और बीरबहूटी भी कहते हैं सो हाथ के लगाने से वीरबहूटी सकुड़ जाती है तिस तरह नायका तन के परसने से लाज और डर करके सकुचकैं सिमट जातीहै । नायका उपमेय इंद्रबधू उपमान सी वाचक तन सकुचानों यह साधारण धर्म यातें पूर्ण उपमा अलंकार ॥

दोहा ।

उपमेयरु उपमान को, सो है धर्म समान ।
उपमा बाचक पद मिलै, उपमा होय प्रमान ॥१॥

इति अलङ्काररतनाकर ॥

अथ विश्रब्ध नवोढ़ा ॥

दोहा ॥

होय नवौढ़ा कै कछू, प्रीतम सौं परतीति ।
सो विश्रब्ध नवोढा यों, वरनत कवि रस रीति ॥२४॥

मूलअर्थ—नवोढा तैं कुछ कहिये थोरी सी जा नायक सों परतीति क-हिये विश्वास होय सो ताकें विश्रब्ध नवोढा कहके कबि जो रसरीति में निपुण हैं ते वरनत हैं । प्रश्न । मूल अर्थ में लिखा है कि प्रीतम से थोरी परतीति होय सो थोरी सी परतीति कहने में सन्देह है परतीति अच्छी बुरी दोनों तरह की होती है और विश्रब्ध नवोढा को अच्छी परतीति चाहिये सो यहां इस तरह अर्थ करने में नहीं पाई जाती है । उत्तर । इस तरह अन्वय करके नवोढाकें रस रीति सों प्रीतम सों कछुक परतीतिहोय ताको विश्रब्ध नवोढा कबि बरनत हैं ।

उदाहरण—कवित्त ॥

केलिकैं राति अघाने नहीं, दिनही में लला तब घात उपाई।
प्यास लगी कोउ पानी दे जाइयो, भीतर बैठकैं बात सुनाई ॥
जिठानी पठाई गई दुलही, हंसि हेरि हरें मति राम बुलाई॥
कान्ह के वोल मैं कान न दीनो, सोगेह की देहरी पै धरिआई२५

मूल अर्थ। केलि के राति अघाने नहीं कहिये रात्रीमें केलि करके तृप्त नहीं हुए तब लला जो कृष्ण तिनने दिन के समय घात उपाई कहिये कछु छल रीति प्रगट करी और भीतर बैठके यह बात सुनाई कि प्यास लगी कोई पानी दे जाइयो जिठानी पठाई गई दुलही कहिये जिठानी की भेजी हुई दुलहिन गई सो हंसिके और हेरि कहिये देखके

हमें मतिराम बुलाई कहिये मतिराम कवि कहत हैं हमें कहिये मुझे बुलाई सो कान्ह के बोलि में कान न दीनो कान्ह जो श्रीकृष्ण के वोल में तो कान नहीं दियो अर्थात् श्रीकृष्ण के बचन नहीं सुने और केलि भवन की देहरी में धरि आई।

प्रश्न । केलि कर कैं रात्रि में नहीं तृप्त भये तब लला दिन ही में घात उपाई इसमें ध्वनि से यह बात पाई जाती है कि रात्रि में केलि कीनी पर तौभी नायक बहुत कामी है यातें तृप्त नहीं भयो और नवोढा के वर्णन में ऐसी रीति चाहिये कि नायका भय लाज जुक्त है यातें सुख पूर्वक केलि नहीं करने दी अर्थात् रति नहीं करने दी ऐसे इस अर्थ में नहीं निकलता है । पुनि प्रश्न । हमैं मतिराम बुलाई और कान के वोल में कान नहीं दीनो जो श्रीकृष्ण के वचन में तो यानें कान नहीं दिया और लच्छन लच्छना करके कान नहीं देने का अर्थ चित्त लगाकर नही सुना और हमें वुलाई ऐसा वचन नायका ने किस को कहा और गेहकी देहरी पर कहा धरके आई?। उत्तर । इस अन्वय से केलि के राते कहिये केलि के रस्ते में नहीं अघान दिन अर्थात नहीं अघान दिन कहिये नहीं तृप्त होने दिये यामें नायका विश्रब्धनवोढा होती है हंसि हेरि हमैं मतिराम बुलाई सो जिठानी के पठाने से दुलहिन गई मतिराम कवि कहत हैं कि नायका हंस जो हंसि के हरि जो श्री कृष्ण चन्द तिन से कहती है हेरी कहिये हे हरि! हमें बुलाई कहिये मुजे बुलाई तव कान्ह के बुलाने का बचन शब्द कहा यह ध्वनि से जाना जाता है। कानन दीनो कहिये ताको चित्त लगाय के नहीं सुने और गेहकी देहरी पै धर आई कहिये पै जो पांव सो केलि भौन की देहरी तक धर के पीछे लौट आई नायक कैं रति अभिलाषा इष्टकार्य था सो पूर्ण नहीं हुआ और नायका गेहकी देहरी तक आकर हंसि के नायक को ओर देखा यातें तीसराविषम अलंकार ।। जहां इष्ट कार्य की सिद्धि नही होवे और थोरे से इष्ट की प्रीति होय तहां विषम ।

इति अलंकार रत्नाकर ।।

दोहा ॥

प्रीत तुम्हारी सेज़पर, हौं आऊं गोपाल ।
दया गहो बात न कहौ, दुख न दीजिये लाल ॥ २६ ॥

मूल अर्थ। कहो गोपाल! मैं प्रीति से जुक्त तुम्हारी सेज पै आऊं परन्तु तुम दया गहौ कहिये दया रक्खो और बातें कहौ और दुःख न दीजिये लाल जो श्रीकृष्ण जिन प्रति कहती है।

प्रश्न-यहां नायका का वचन नायक प्रति है सो पहिलें एक सम्बोधन में गोपाल कहकें फिर लाल कहने से पुनरुक्त दूषण है। उत्तर। प्रीति युक्ति तुम्हारी सेज पै लाल मैं आऊं परन्तु तुम दया गहौ कहिये दया रखकें गोपाल जो गो नाम है वचन ताको पाल कहिये पालो ये बातें कहो और दुःख न देवो॥ यहां चिन्ता मोह दीनता इन तीनों संचारी भाव का उदय है यातें भाव उदय अलंकारः—

जहां भाव का उदय जु लहै, भावक उदय कवि तासों कहैं।

इति अलंकाररतनाकर॥

दोहा॥

जाके तन में होत है, लाज मनोज समान।
ताको मध्या कहत हैं, कवि मति राम सुजान॥ २७॥

मूलअर्थ—जा नायका के तनमें लाज और मनोज कहिये काम सो समान कहिये बराबर होय ताको मतिराम कवि कहत हैं कि सुजान कवि मध्या कहते हैं।

उदाहरण--कवित्त॥

चित्रमें विलोकतही लालको वदन वाल,
जीते जिहि कोटि चंद सरद पुनीत के॥
मुसकानि अमल कपोलन मैं रुचिर बृंद,
चमकत रोरनकी रुचिर चुनीन के॥
प्रीतम निहार्यौ वांह गहत अचानकही,
जामें मतिराम मन सकल मुनीनके॥

गाढें गही लाज मैन कंठ ह्वै फिरत बैन,
मूल फिरत नैंन वारि वरुनीनके ॥ २८ ॥

मूलअर्थ—चित्र जो चित्राम में लला जो श्रीकृष्ण तिन को वदन जो मुखारविंद तींको वाल जो नायका देखती थी सो नायका कैसी कि जानो शरद पूर्णमा के कोटि चन्द्रमा जीते जिन के कपोलन में रुचिर कहिये हिलकारी मुसकानि जो मन्द हंसी के वृन्द कहिये समूह हैं तरौना जो कर्ण भूषण तिन में चमके कहिये दमके चुनीन कहिये लाल मणि प्रीतम जो श्रीकृष्ण चन्द सो बांह गहत देखो कहिये हाथ पकड़ते देखौ सो प्रीतम कैसो? मतिराम कवि कहत हैं कि जिनको सकल मुनी जन ध्यान करत हैं गाढे गहे लाज में न सो लाज और काम ने गाढे कहिये दृढ पकरी ताके वचन कंठ होंके फिरत हैं और नेत्रन को जल बरुनी जो भापणे ताके मूल छूवैके फिरत हैं।

प्रश्न। चित्र में लाल को वदन बाल देखती थी इतनाई लिखा सो क्या और अंग नही देखती थी ?। दूसरा प्रश्न। शरद पूर्ण के कोटि चंद्रमा नायका जीती सो नायका के सबै अंगमें चंद्रमा की समता नाहीं केवल मुख की समता चन्द्रमा से है। प्रश्नतीजा। कपोलन में मंद हांसी कही फिर समूह कही सो भी मंदताके साथ समूह बनें नहीं। चौथाप्रश्न। चमके तरौरन की रुचिर चुनी इतना ही कहना वाजिब था फिर इस पद के अंत में के बिना अर्थ लिखा। पांचवां प्रश्न। कंठ फिरत बैन सो कंठ सें कौनसा बचन फिरता है ?। छठा प्रश्न। नेत्रन का जल बरुनी के मूल से छूकर पलटता है सो इस का कौनसा कारन है ?। उत्तर। इस तरह सब प्रश्नों का उत्तर कि नायका नायक का चित्र देती थी तहां नायक अचानक आय के बांह पकरी तहां सखी यह चेष्टा देखके अन्य सखी से वृत्तांत कहती है, तामें दोनों सखियों के परस्पर प्रश्नोत्तर हैं कि चित्र में विलोकतही लाल कौं चित्र जो चितराम तामें लाल कहिये श्रीकृष्ण तिन को विलोकत कहिये नायका देखती थी सो बाल कैसी थी कि शरद

पूर्णिमा के कोटि चन्द्रमा से अधिक है वदन कहिये मुख और कपोल जो गालन में रुचिर कहिये हितकारी मन्द हंसी फिर कैसी कि जिन के रुचिर कहिये हितकारी तरोना जो कर्ण भूषण तिनकी चुनियों से वृंद कहिये समूह चमके कहिये दमकत हैं तहां प्रीतम जो नायक अचानचक आय के बांह गहत निहारयो कहिये बांह पकरत देख्यो सो नायक कैसा-कहै कि लह श्रीकृष्ण चन्द तिनके सकल जो सर्वत्र मुनि ध्यान करत हैं तब नायका की कैसी चेष्टा भई जाके कंठकों लाज और मैंन कहिये काम गह-लिया कहिये दृढ पकड़लिया तातैं बैन कंठ से फिरत कहिये बाहर नहीं निकसत हैं, वे कैसे बैन हैं कि सनेह और भय युक्त आदर और अनादर लिये हैं सो आदर लिये बचन हिये से प्रगटते हैं तिन को तो कंठ तक आते लाज पीछा फिराती है और अनादर के वचन हिये से प्रगट कर कंठ तक आते हैं तिन को काम पीछा फेरता है ऐसे हीं नेत्रन में आंसू आनन्द और भय के आते हैं सो आनन्द मई आंसू हैं तिन को तो तरुनी कहिये भापणों के मूल से लाज आगे नहीं निकलने देती और भयजुक्त जो आंसू हैं तिन को बरूनी के मूल से काम नहीं बढने देता है ॥ नायका प्रेम से उमगकर नायक के चित्रको देखती थी तितने साक्षात नायक ही आ मिला दूसरा प्रहर्षनः—

दोहा।

वांछित हू तैं अधिक फल, श्रम बिन लहिये सोय।

इतिअलंकार रत्नाकर ॥

दोहा ॥

केलि भवन की देहरी, खरीबाल छवि नौल।
काम कलित हिय को लहै, लाज कलित दृगकौल॥२९॥

मूल अर्थ—केलि भवन कहिये रति क्रीडा स्थान ताकी जो देहरी सो वाल जो स्त्री सो नौल कहिये नवीन छवि सों खरी है काम जो कामदेव और कलित कहिये पूर्ण है हृदय लाज जो शर्म कलित जो लीन हैं दृग जो नेत्र।

प्रश्न । खरी बाल छवि नील सो छवि नाम शोभा तामें नवीनता कहा होतहैं ? और काम कलित हिये इतना तो वाजिब है परन्तु कोल शब्द का अर्थ कहा है? तैसे ही नेत्रों के साथ भी कोल शब्द लिखो तामें भी संदेह है । उत्तर । केलि भवन की देहरी पै नवल बाल छवि जो शोभा युक्ति खरी है ताको हिय कोल कहिये हृदय कमल तो कामसे लीन हैं और दृग जो नैंत्र कौल कहिये कमल सो लाज युक्त है ।

प्रश्न—दृग कोल कहे सो नेत्रन को तो कमल की उपमा वाजिव है पर हृदय को कमल की उपमा नहीं होत है । उत्तर । जोगपातंजलि शास्त्र के मतसे लिखते हैं कि अष्ट २ कमल हृदय में होत हैं तामें मन रहत है और काम मनोद्भव है यातें हृदय कमल काम से लीन कह्यो ॥ यहां लाज और मोह की संधि यातें भाव संधि अलंकार :—

भाव विरुद्ध जुरै जहं ठौर, भाव संधि भाखें कवि मौर ॥

इति अलंकाररतनाकर ॥

अथ प्रौढ़ा लक्षण ॥

दोहा ॥

निज पतिसौं रति केलिकी, सकल कलानि प्रवीन ।
तासों प्रौढ़ा कहत हैं, जे कविता रस लीन ॥ ३० ॥

मूलअर्थ—निज पति जो निज नायक तासों रति केल कहिये संभोग की सकल जो सर्वत्र कला कहिये रीति तामें प्रवीन है अर्थात् चतुर है तासों प्रौढा कहते हैं जे कबि ताके रस में लीन हैं ते ॥

उदाहरण-सवैया ॥

प्राण-पिया मन भावन संग, अनंग तरंगनि रंग पसारे ॥
सारी निसा मतिराम मनोहर, केलिके पुंज हजार उघारे ॥
होत प्रभात चल्यो चहैं प्रीतम, सुंदरि के हियमें दुख भारे ॥
चन्दसौं आनन दीपसी दीपति, श्याम सरोजसे नैंन निहारे ३१॥

मूल अर्थ—प्रान पिया जो नायक तिन मन भावन जो नायका तिनकी संग अनंग जो काम ताके रंगनि के तरंग पसारे कहिये फैलाये सारी

निसा जो रात्रि तिन में केलि के पुंज जो समूह उघारे कहिये प्रगट किये होत प्रभात जो सूर्य उदय होते प्रीतम जो नायक चल्यो चाहत है तब सुन्दरि जो नायका ताके तन जो शरीरमें दुख भरे चन्द्र जो चन्द्रमा आनन जो मुख दीप जो दियासी दीप्ति भई और श्याम सरोज सो नील कमल से नैंन निहारे कहिये देखे।

प्रश्न—रंग पसारे जो रंग स्वेत पीतादि नहीं यहां रंग को अर्थ लय होना सो ताकों पसारना असंभव है। दूसरा प्रश्न। केल के हजारों पुंज कहे सो केलि तो संभोग क्रिया है तामें हजार पुंज क्या होते हैं ?। प्रश्न तीजा। सुन्दरि के हिय में दुख यहां इतनाई चाहिये भारे शब्द निरर्थक है कदाचित भारी कहो तो अन्त्यानुप्रासतुकांत नहीं मिलेगा। प्रश्न चौथा। श्याम सरोज से नैंन कहे सो नील कमल प्रातःकाल में खुलते हैं और नायका के नयन दुख से मुंदे चाहिये। पांचवां प्रश्न। सखी से भूतकाल की बात कहती है और इस कवित्त में वर्त्तमान क्रिया कही है। उत्तर। इस तरह अन्वय "मनोहर पुंज प्रान प्रिया मन भावन संग रंगके अनंग तरंग पसारे सारी निसा मतिराम हजारें केलि क्रिया उघारे प्रभात होत छतें श्याम प्रीतम चल्यो चाहत है सब सुन्दरी के हिय में दुख भारें चन्द सो आनन दीपसी दीपति सरोज से नैन निहारे"। अर्थ। मनोहर कुंज कहिये सुन्दरता ताका समूह ऐसे प्रान पिया जो नायक तिन को मन जो हिये सों भामिनि जो नायका तिन के संग कहिये लय होके अनंग तरंगे पसारे कहिये अर्थात काम की लहरें फैलावति है मतिराम कबि कहत है हजार प्रकार रति की चेष्टा प्रगट करत है पीछे प्रभात होत छतें श्याम कहिये साम पीतम जो पतिसो चल्यो चाहत है कहिये गयो चाहत है तब सुन्दरी जो नायका ताके हिय जो मन तामें दुख भार कहिये दुख को भार होत है अर्थात दुख भारे कहिये दुःखको भार होत है अर्थात् भा नाम है कान्ति कां सो दुःख की कान्ति रहती है तातें सूर्योदय के चन्द्रमा समान आनन दरसता है और सूर्योदय के दीपक की सी शोभा दरसत हैं और सरोज से कहिये रोज सें युक्ति रुदन करते से नैन दरसते हैं निकट रहने वाली अंतरंग सखी वहरंग सखी से कहती है कि ऐसी दशा सदैव वरतती है यह नायका प्रौढा है यातें नायक से घड़ी भर की भी जुदाई नहीं चाहती है और प्रभात होगया याते नायक बिछुरने लगा यह नायका के चित्त की अभिलाषा से उलटा काम हुआ यातें विषाद अलंकार :—

दोहा ।

सो विषाद चित चाहतैं, उलटो कछु ह्वै जाय ।

इति अलंकाररत्नाकर ॥

दोहा ॥

लपटानी अति प्रेमसौं, दै उर उरज उतंग ।
घरी एकलौं छुटहु पर, रही लगीसी अंग ॥ ३२ ॥

मूल अर्थ—अति प्रेम जो बहुत स्नेह से लपटानी कहिये लपटी उतंग जो ऊंचे उरोज जो कुच सो उर कहिये छाती से लगा कें घरी एक लौं छुटहु पर कहिये एक घरी तक दूर होने पर भी अंग से लगी सी रही कहिये अंगसे मिली सी रही याको प्रयोजन यह है कि अति स्नेह से नायक के हिये में नायका को ध्यान बंधगयो यातें छूटने परभी लगीसी रही ऐसे ही नायका भी दूर होने पर नायक को ध्यान करके नायक के हिय सों मिल रही मानति है ।

प्रश्न । इस अर्थमें नायक का वर्णन नहीं पाया जाता है न जाने सखी सखी से स्नेह युक्त मिलकर यह बात जानति है वा नायकसे नायका मिलकर यह रीति जानति है ॥ दूसरा प्रश्न । एक घरी लौं लखी सो एक घरी पीछे क्या स्नेह घट के ध्यान मिट गया? । उत्तर । दै उर उरज उतंग सो यहां केवल उर कहने से पुष्ट होत है सखी की तो उर उरोज युक्त होत है ।। उत्तर दूजा । अति प्रेम सों उर के विषे उरोज देके ऐसी लपटानी है मानो विधाता ने याको एक ही घरी है अर्थात् एक देह बनाई है ॥ छूटने पर भी दूर होने पर भी लगी सी मालूम होती है यातें विरोधाभास अलंकारः—

दोहा ।

भासै जहां विरोध सौ, यहै विरोधाभास ।
उतरत हू उतरै नहीं, मन में प्रोश निवास ॥ १ ॥

इति अलंकाररतनाकर ॥

अथ मध्या प्रौढा ॥

दोहा ॥

मध्या-प्रौढा मान तैं, तीन भांति पुनि जानि।
धीरा बहुरि अधीर तिय धीरा धीरा मानि ॥३३॥

मूल अर्थ— मध्या और प्रौढा नायका हैं ते मान के विषैं तीन प्रकार की जाननी चाहिये धीरा फिर अधीरा तिय, कहिये नायका फिर धीरा-धीरा माननी।

प्रश्न मान में मध्या और प्रौढा तीन प्रकार की कहिकैं पुनि शब्द कहा है सो निरर्थक है। दूजा प्रश्न। तुकांत अनुप्रास में एक जगह जान और एक जगह मान शब्द है सो दोनों शब्दों का अर्थ एक है इस से पुनरुक्ति है। तीसरा प्रश्न। तिय शब्द एक अधीरा की साथ लिखा है सो और कहा तिय नहीं होत हैं धीरा और धीरा-धीरा। उत्तर। इस प्रकार अन्वय कर के मध्या तिय धीरा बहुर अधीरा बहुर धीरा-धीरा जानो पुनि प्रौढा, धीरा, अधीरा, धीराधीरा।

अथ मध्या प्रौढा धीरा लक्षण ॥

दोहा ॥

वचननि की रचनानि सौं, पियहि जनावत कोप।
मध्या धीरा कहत हैं, ताहि सुमति रस चोप ॥३४॥

मूल अर्थ—बचननि की रचना करके पिय को कोप जनावति है ताको मध्या धीरा कहत हैं सुमति-रस-चोप कहिये श्रेष्ट प्रकार की सुमति जो मति। प्रश्न। तिन को सुमति जो अच्छी मति वारे मध्या धीरा कहते हैं इतना हीं कहना वाजिब था फिर रस-चोप कहा होत है? उत्तर। रस-चोप मतवारे ताको मध्या धीरा कहत हैं सुरस कहिये शृङ्गार रस की चोंप जो ओप।

उदाहरण--कवित्त ॥

तुम कहा करो कांन ! कासतैं अटाकि रहे,
तुमको न दोस सो तो आपनोई भाग है ॥

आय मेरे भौन बड़े भोर उठि प्यारही तें,
अति हर यरन बनाय बांधी पाग है ॥
मेरेही वियोग रहे जागत सकल राति,
गात अलसात मेरो परम सुहाग है ॥
मनहुकी जानी प्रान प्यारे मतिराम यहै,
नैननिही मांहि पाययतु अनुराग है ॥ ३५ ॥

मूल अर्थ–तुम कहा करो हे लाल ! तुम को दूषण नहीं है मेरे भाग में दूषण हैं यातें तुम कामसे अटकि रहे सो काम को अर्थ करिये अटकि रहे कहिये रुकरहे बड़े भोर उठकर मेरे भौन आये कहिये प्रातःकाल उठकर मेरे घर आये प्यारही तैं कहिये स्नेह तैं अति हरि बदन कहिये बहुत हरे रंग की पाग बनाय के कहिये सुधार के बांधी मेरे ही वियोग कर कहिये मेरे वियोग से सकल जो सर्वत्र रात जागत रहे इसी से गात अलसात कहिये शरीर आलस युक्त है यातें मेरो मैं जानती हूं परम सुहाग है । मनहूं की जानी कहिये हे प्रान प्यारे ! आप के हिय की सब बात समझी मतिराम कवि कहत हैं कि आप के नेत्रों में अत्यन्त अनुराग पाया जाता है ।

प्रश्न । जो नायका वचन रचना से पिय को कोप जनावे ताको मध्या धीरा कहत हैं सो इस कवित्त के अर्थ में नहीं निकलता है यहां नायका के वचन से प्रसिद्ध होता है कि नायक किसी आवश्यक कामके लिये रात्रि अन्य स्थान रहकर प्रातःसमय नायका के पास आया है तब विन कहें अन्य स्थान के रहने की नायकके मनमें संका जान कें नायका स्नेह के वचनों से समाधान करती है इससे नायका स्वाधीनपतिका होती है और मध्या-धीरा नहीं होती है । दूसरा प्रश्न । नायका कहती है कि मेरे भैान आये सो अकेली नायका कौ घर कहनेसे परकिया होती है । तीसरा प्रश्न । नायका कहती है मेरे भैान बड़े भोर, आये सो भोर नाम प्रातःकाल अर्थात् अरुणोदय का है सो तिनका बड़प्पन कहा होत है ? । प्रश्न चौथा । अति हर वरन बनाय बांधी पाग है सो अति हर वरन कहिये बहुत आतुर होनो सो आतुरता की साथ बनाय कर पाग बांधनो बनसके नहीं इस का अर्थ अन्वय करके करिये इस तरह अर्थ

हिते प्यार उठ कें बड़े भोर मेरे भौन आये अति हरवरन बनाय बांधी पाग है जागत सकल राति गात अलसात मेरे ही वियोग रहे मेरो परम सुहाग है मतिराम कहत नायका कहती है कि प्रान प्यारे मन हू की जानी नैंननि में अति अनुराग पाया जात है अर्थ पहले पद में काम को अर्थ कामदेव से अटकि रहे हो कहिये हृदय तें प्यार उठकें कहिये स्नेह दूर होके बड़े भोर कहिये बड़े भंवरे सो भंवरा एक फूल पर नहीं ठहरता है अर्थात् बड़े भोर कहिये बड़े छैल मेरे भैान आये कहिये मेरे घर आये सो मेरे घर कहने का कारण यह जानो कि नायक रात्रि समय बाहर रहता है सो नायका मेरा भैान कहके जताती है कि मैं अकेली रहती हूं इससे घर मेरा है तुम्हारा घर होता तो तुम रात्रि समय पराये घर काहे को रहते? अति हर बरन कहिये बहुत आतुर होके (न) बनाय बांधी पाग है कहिये नहीं बनाई हुई अर्थात् बिखरी हुई पाग सिरपे धारी हुई है जागत सकल राति कहिये सारी राति जागे हो ताते गात कहिये शरीर अलसात कहिये आलस युक्त है और मेरे ही वियोग रहे कहिये मेरे (ही) जो हृदय सो हृदयमें वियोग रहता है तोभी मेरो परम सुहाग मानती हूं। मतिराम कवि कहै नायका कहतीहै प्रान प्यारे मनहू की जानी कहिये आप के मन की जानी नैंननि में अति अनुराग जो अनु कहिये दूसरी ताको राग जो स्नेह नैंननि में अति पाइयतु है कहिये प्रसिद्ध दरसत है ॥ नायका ने अपने भाग्य की निन्दा करके नायक की निन्दा प्रगट कीनी जहां काहू की निन्दा तें काहू और की निन्दा निकसै तहां हू व्याज निन्दा अलंकार है:—

इति अलंकाररतनाकर॥

दोहा॥

अजौं उडावत हौ नहीं, पीरन होत सभाग।
ठौर २ या भौंर ने, डसे अंधर दिलदाग ॥३६॥

मूल अर्थ—आजु कहिये अब तक नहीं उडावत कहिये नहीं दूर करत हौ पीर न होत सभाग अर्थात अच्छे भागवारे पीर न होत कहिये दरद नहीं होत है ठौर २ को अर्थ जगह २ यह भोंर कहिये इन भंवरे अधर जो होंठ डसे दंत लगाय तिनको दिल के दाग हैं।

प्रश्न–यह भंवरा कौन है ? । उत्तर । नायक के होठ पर कज्जल लग्यो है ताको देख के नायका भंवरे के मिस नायक को जतावति है । दूसरा प्रश्न । यह भोंर कहने से एक बचन होत है इससे जाना जाता है कि कज्जल एक जगह लग्यो है और अधर ठौर २ डसे कहे सो एक जगह बैठकें एक भंवर बहुत ठौर डस सके नहीं । तीसरा प्रश्न । होठ के डसने का दाग दिल में कैसे हुआ ? । उत्तर । शरीर के हर एक अङ्ग की पीड़ा । दुख मन को होत है । चौथा प्रश्न । मन का दाग़ बाहर नहीं जाना जाता है और नायक के रति समय और तिय के नेत्र चुम्बन का कज्जल लगा है सो नायक के दिल को तो यह प्रिय है इसका अर्थ इस प्रकार अन्वय कर के करो। सभाग इस भोंर ने अधर डसे ताकों अजों न उड़ावत हो पीर नहीं होत है ठौर २ दिल दाग अर्थ सभाग कहिये हे अच्छे भाग वारे इस भंवर ने डसे ताकों अब तक न उडावत हो सो कहा पीर नहीं होत है ? मेरे दिल में तो इसके देखने से ही ठौर२ दाग लगता है नायक के अधर पर कज्जल और दंतों के चिन्ह उघड़ रहे हैं तिन को देख कर नायका के हिय में दाग लगता है यातें असङ्गति अलङ्कार ।

अथ मध्या अधीरा लक्षण ॥

दोहा ॥

मध्या कही अधीर तिय, बोलै बोल कठोर ।
पियहिं जनावति कोप सो, बरनत कवि सिरमौर॥३७॥

मूल अर्थ–तिय जो नायका तिस को मध्या अधीरा कही सो कठोर बोल बोलके पियको कोप जनावति है कवि सिरमोर बरनत हैं ।

प्रश्न ! पिय कों कठोर बोल बोलकें कोप जनावे ताकों मध्या अधीरा कहचुके पीछे लिखा कवि सिरमौर बरनत हैं सो कवि सिरमौर कहा बरनत हैं?। दूसरा प्रश्न । "पिय हि" इस पद में 'ही' अक्षर लिखना व्यर्थ है । उत्तर । अर्थ ऐसे अन्वय करके करो कि कठोर बोल बोलकें पिय कोकोप जनावति है सो पिय ही कहिये निश्चै मध्या अधीर कवि सिरमौर कह कें बरनत हैं ।

उदाहरण-कवित्त ॥

कोउ नहीं बरजे मतिराम, रहो जितही तितही मनभायो ॥
काहेकौं सौहें हजार करो तुम, तो कबहूं अपराध न ठायो ॥
सोवन दीजै न दीजै हमें दुख, योंही कहा रसबाद बढ़ायो ॥
मान रह्योई नहीं मनमोहन!, माननी होय सो मानें मनायो३८।

मूल अर्थ—कोउ नहीं बरजे कहिये कोऊ मने नहीं करे, रहो जित ही तित ही मन भायो कहिये जहां हीं रहो तहां ही मन भायो होय काहे को सोंह हज़ार करो कहिये काहे को हज़ार सपथ करते हो? तुम तो कभी अपराध नहीं किये सोवन दीजिये कहिये मो कों नींद लेने दीजिये हमें दुख कहिये मुझे दुख काहेको देत हो ? योंहीं कहा रसबाद वढायो? कहिये ऐसे हीं कहा रस को वाद वढायो है ? मान रह्योई नहीं मन मोहन।कहिये हे मन मोहन ! मेरे तो मान रह्योई नाई । माननी होय सो माने मनायो कहिये माननी होती है सो मनाये ते मानती है ।

प्रश्न—मन भायो सो कहा मन में भायो है ? जो कहोगे कि कोई पर स्त्री मन में भाई है सो यहां विशेषण पुलिंग है तातें वनें नहीं नायक परस्त्री के पास रति समय जाग कें प्रात समय स्वपत्नी के पास आया तव नायका कहती है मोकों नींद लेने दो सो नायक पास नहीं था जब अकेली नायका काहेसे जागी सो प्रभात समय सोयवो चाहती है? ।तीसरा प्रश्न। रस वाद वढ़ायो सो वादमें रस कहा होत है?। चौथा प्रश्न। नायका कहती है मेरो मान रह्यो नाहीं सो नायक हज़ार सौंहें खायकें मनावति है तव नायकाको अनादर कैसें भयो?। उत्तर ।इस रीतिसे अन्वय करो, मतिराम कवि कहता है नायका कहती है कि जित मन भायों मन प्रसन्न भयो है तित ही रहो दूजो पद निर प्रश्न है ।तीजो पद सोवन दीजै सो नींद लेने दीजै यहां यह अर्थ करना कि नायक किसी अन्य नायका के पास रह कर रात्रिको सयन समय निज नायकाके पास आया जब नायकको पर स्त्री से आशक्तजान क्रोध युक्तकहतीहै कि नींद लेने दीजिये अर्थात सोवन दीजिये मोको दुख न दीजिये अर्थात अध्याहार वृत्ति करकें ऊपर सों पद लाइये सोवनदीजे कहिये रतिदान देतेहो सो विन दीजै कहिये जिनसे प्रीति रखते

हो विनी को दीजिये । न दीजे हमैं दुख कहिये विन प्रीतिमें तो दुख मानती हूं तातें मुझे न दीजिये यों ही बाद बढ़ाने से कहा रस होत है ? यों हीं कहिये विना अर्थ विवाद बढायो है इन से कहा रस उपजतहै ? मन मोहन मान रह्योई नहीं, मन मोहन कहिये तुम परस्त्री के मनको मोहते हो यातें मोकों स्वपत्नी मान कें कहिये जानके न रह्यो अर्थात् मेरे संग नाहीं रहो यातें तिहारी माननी होवेगी सोई मनायवेतें मानेंगीं ।। यहां नायक के अपराध दोषतें नायका को अति क्रोध दोष भयो यातें चौथा उल्लास अलंकार । जहां एक के दोष तें और को दोष ।

इति अलंकार रतनाकर ।।

दोहा ॥

वलय पीठि तरवरन भुज, उर कुच कुंकुमछाप ।
जितैं जाहु मनभावते, तिते विकाने आप ॥३६॥

मूल अर्थ—वलय पीठि कहिये पीठि के विषें वलय जो चूड़ी उघर रहीं हैं भुजान पर तरोना कर्ण भूषण उघर रहेहैं उरके विषें कुचन कें कुंकुम कहिये केसर की छाप उघर रही है तातें हे मन भावते तुम जहां विकाने हो तहांई जाइये ।

प्रश्न— नायक परस्त्री से रति करके निज नायका के पास आया है जब नायक के शरीर पै रति चिन्ह देखकें नायका कहती है तुम्हारी पीठि पर वलय उघर रहे हैं भुजान पर तरोना ऐसे चिन्ह शरीर पर उघरे हैं परन्तु नायका से नायक सन्मुख था जब नायककी पीठि पै वलय के चिन्ह नायकाने कैसें देखे ? ।उत्तर। वलय पीठि कहिये वलयजो चूरियों की पीठि जो पृष्ठ भाग सो तुम्हारे शरीर पर उघर रहे हैं और तरोना भुजान पर उघर रहे हैं उर पर कुच कुंकुम की छाप उघर रही है हे मन भावन। इस चिन्ह से जान पड़ता है आप विक रहे हो, विक रहे को अर्थ मोल विकवो असंभव है यातें विकने का अर्थ लच्छन लच्छनातें आधीन होना सो जिनके तुम आधीन भये हो जाके पास जाइये ।। पीठ पै वलय इत्यादि और ठौर को काम और ठौर यातें दूसरा असंगति अलंकार ।। और ठौर ही कीजिये और ठौर को काम ।।

इति अलंकाररतनाकर ।।

अथ मध्या धीरा धीरा लक्षण।

दोहा ॥

मध्या धीराधीर तिय, ताहि कहत सब कोय।
पियसौं कहके वचन कुछ, रोस जतावे रोय ॥४०॥

मूल अर्थ—मध्या धीराधीर तिय सो मध्या अवस्था धीराधीरा कहिये धीरज और अधीरज मिली हुई तिय जो नायका ताहि कहत सब कोय कहिये ताकों सब कोई कहते हैं पियसों कहके बचन कछु कहिये पिय जो नायक तासों कुछ बचन कहकें अर्थात् थोडे से बोल बोलकें रोस जताबै रोइ कहिये फिर रोइकें रोस जो कोप जतावति है। प्रश्न। इस प्रकार अर्थ करने से पूर्व और पर का अमिलत रहता है सो दूषण है। उत्तर। अर्थ इस तरह अन्वय करके करना चाहिये ॥ अर्थ ॥ पिय सों कुछ बचन कहैं फिर रोइ के रोस जतावै ता तिय को सब कोई मध्या धीराधीर कहते हैं।

उदाहरण—सवैया।

आजु कहा तजि बैठी हौ भूषण?, ऐसें हीं अंग कछू अरसीले॥
बोलत बोल रुखाई 'लिये मति, राम' सुने तें सनेह सुसीले॥
कौन कहौं दुख प्रान प्रिया? अंसुवा न रहें भरि नैंन लजीले ॥
कौन तिनें दुख है तिन कें तुम से मन भावन छैल छबीले ॥ ४१।

मूल अर्थ—आज कहिये या वर्त्तमान दिन में कहा है सो तुम भूषण जो गहने सो तजिकें कहिये उतारके बैठीहो? ऐसीही कहिये इस तरह अंग जो शरीर कछु जो थोरो अरसीले कहिये रस रहित दीखताहै और बोलजो बचन सो भी रुखाई कहिये नीरसता लिये बोलति हो मति राम कवि कहै कि नायक कहता हैं कि मेरे सनेह युक्त सुसील कहिये अच्छे शील के बचन तैने सुने हैं फिर नायक कहत है कि हे प्रान प्रिया जो नायका तुम दुख जो क्लेश क्यों नहीं कहती हो? तुम्हारे लजीले कहिये लाज युक्त नैन जो नेत्र, आंसू कहिये रुदन के जल से भर रहे हैं कहिये पूर्ण हो रहे हैं नायका कहती है तिन तियके कहिये तिस स्त्री कें कौनसा दुख है

तिनकें तुमसे मन भावन कहिये मनको आनन्द दायक छबीले छैल कहिये अच्छे नायक हैं ॥

प्रश्न—नायक नायका से कहता है कि तैं रुखाई लिये बोल बोलती है और पहले पूर्वार्द्ध में नायका को तो कुछ बोलवो दरसतु नाहीं तब नायक को कहनो कैसे संभवै ?। प्रश्न दूसरा। नायक ने नायका के वचनकों रुखाई युक्त और शरीरको रस रहित फिर नायका से कहता है मैं सुशीले जो अच्छे स्वभावसे स्नेह युक्त वचन तुझसे कहे सो तूने सुने सो यहां नायका ने नायक के वचनको तो रूखे और शरीर को रस सहित कहा सो ऐसे वचनों में नायक का कौनसा स्नेह और अच्छा स्वभाव दरसता है ?। उत्तर। इस सवैये का अर्थ ऐसे जानो नायक और नायका के प्रश्नोत्तर। पहले नायक वचन कि आज कहा भूषन जो गहने तजि कें कहिये उतार कें वैठी हो ? तब नायका कहती है ऐसे ही कहिये सुतें जो हीं अंग जो प्रत्येक शरीर सो अरसीछे कहिये आलस जुक्त हैं, फिर नायक कहताहै तें रूखे बचन बोलतीहै। तब नायका कहती है हे सुशीले! अच्छे स्वभाव वाले तैंने किसी अन्य स्त्री के सुस्नेह युक्त बोल सुने हैं तातें मेरे वचन तुझै रूखे लगते हैं। यहां नायक के प्रश्न पर नायका क्रोध भाव सहित उत्तर करती है यातें गूढोत्तर अलंकार :—

दोहा।

गूढोत्तर कछू भाव तैं, उत्तर दीनो होत।
उन वेतस्तरुमें पथिक, उतरन लायक स्रोत ॥ १ ॥

इति अलंकार रतनाकर ॥

दोहा ॥

तुमसों कीजै मान क्यों?, बहु नायक मनरंज।
बात कहत यों बालके, भर आये दृग कंज ॥ ४२ ॥

मूलअर्थ—तुम से जो आप से कीजे मान क्यों ? कहिये मान काहेको करिये ? बहु जो घने नायक सो पति, मन जो चित्त ताको रंजन कहिये प्रसन्न करनेवाले बात जो वचन कहत जो बोलत, बाल जो नायका भर आये कहिये पूरित भये दृग जो नेत्र कंज जो कमल।

प्रश्न—पहले पद में कहा आप से मान क्यों कीजिये ? सो यहां सन मुख वचन है सो किस का बचन है ? और किसने कहा ? । उत्तर कहेंगे कि नायका का वचन नायक से है तब दूजो प्रश्न यह है कि दूजे पद में वहु नायक लिखे हैं सो ताको अर्थ घने पति सो नायका स्वकिया ऐसे विरुद्ध वचन कैसे कहती ? । तीसरा प्रश्न । बात कहत ये बाल से भर आये सो कहा वात ? । चौथा प्रश्न । याको अर्थ ऐसे होत है सो ऐसें कैसे हैं ? । पांचवां प्रश्न । बालके भरआये सो नायका के कहा पूरित भये? । उत्तर । अर्थ इस प्रकार अन्वय कर के करो वह जो बहुत मन रंजन नायक तुम से मान क्यों कीजिये ? बात कहत बालके कंज जो दृग कमलभर आये अर्थात् वहु मन रंजन नायक जो घने मन को प्रसन्न करनेवाले नायक तुम से मान क्यों कीजिये ? अर्थात् आप से रोस काहे को कीजिये ? यह बहु मन रंजन नायक का अर्थ नायका के क्रोध से जाना जाता है, बहु जो घने अध्याहार वृति से पर स्त्री तिन के चित्त को हर्षित करनेवाले पति तुम सों रोस काहे को कीजिये ? यह बात बोलत बाल के कहिये ऐसे बचन्न बोलत समय नायका के कंज दृग भर आये नायक के छिपे हुए अपराध को नायका जान कर नेत्रों में आंसू प्रगट करके जताती है यातें पिहत अलंकार :—

दोहा ।

पिहत छिपी पर बात कों, जान दिखावे भाव ।
प्रातहि आये सेज पिय, हंसि दाबति तिय पांव ॥ १ ॥

इति अलंकाररतनाकर ॥

अथ प्रौढा धीरा लक्षण ॥

दोहा ॥

पियसों प्रगट न रिस करें, रति ते रहें उदास ।
प्रौढ़ा-धीरा जानिये, सोनिज सुमति विकास ॥ ४३ ॥

मूलअर्थ—पिय जो नायक तासों रिस जो क्रोध सो प्रगट कहिये जाहर नहीं करे परंतु रति समय उदास रहे अर्थात् काम क्रीडा में मन

भंग रहे प्रौढा धीरा सो पौढा अवस्था धीरा कहिये धीर्ज लिये जानिये सो कहिये वह निज जो अपनी सुमति कहिये अच्छी बुद्धि विलास कहिये प्रभाव।

प्रश्न—प्रौढा-धीरा जानिये सो कहा जानिये ?। दूसरा प्रश्न। सो निज सुमति विलास इस का अर्थ अपनी अच्छी बुद्धि के प्रभाव परंतु जो निज सुमति विलास किस को कहा ?। उत्तर ऐसें अन्वय कर के अर्थ करिये। प्रिय सों प्रगट रिस नहीं करे रति समय उदास रहे सो प्रौढा धीरा निजसुमति बिलासते जानियो। पिय जो नायक तिन सों रिस जो क्रोध सो प्रगट कहिये जाहर नहीं करे परंतु रति समय उदास रहे सो कहिये वह प्रौढा—धीरा है ताको अपनी अच्छी बुद्धि के प्रभाव से जानिये ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

वैसेहीं चितैकें मेरे चित्त को चुरावति हौं,
बोलत हो वैसेही मधुर मृदु बानिसों ॥
कबि "मतिराम,, अंक भरत मयंक मुखी,
वैसेही रहत गह भुज लतकानसौं ॥
चुंमत कपोल, पान करत अधर रस,
वैसेही निहारियत सकल कलानसौं ॥
कहा चतुराई गिनियत प्रानप्यारी तेरो,
मांन जानियत रूखी मुख मुसकानसौं ॥ ४४ ॥

मूलअर्थ—वैसे ही चितै कें कहिये किसी तरह देखकें मेरे जो हमारे चित्त जो मन चुरावती है कहिये मोहती है बोलति है कहिये बातें करती है वैसी हीं कहिये किसी तरह मधुर कहिये मीठे मृदु कहिये कोमल बानी सें कहिये बोली सें, कवि मतिराम अंक भरत कहिये कोली भरत अर्थात बांह घालत, मयंक मुखी कहिये चन्द्र वदनी, वैसीहीं कहिये किसी तरह रहत कहिये थिर रहत गह कहिये पकर कें भुज लतकान सें कहिये बांह रूपी बेलन सें चुंवत कपोल जो गाल जो चुम्बन करना, पान करत कहिये पीवत अधर रस जो होठ का रस को, वैसे ही जो उस

माफक निहारी जो देखी, रीति जो तजवीज सकल कलान सों कहिये समस्त चेष्टाओं से, कहा चतुराई जो कौनसी प्रवीणताई ठानत जो जमावती हो। प्रानप्यारी जो जिय बल्लभा तेरो जो तिहारो मान सो अहंकार जानिये सो समझिये रूखी जो फीकी मुख जो बदन मुसकानि जो मन्द हंसी सो।

प्रश्न। इस कवित्त में चार जगह 'वैसे' हीं अव्यय लिखा जिन का अर्थ उसी माफक है अर्थात् विसी तरह भी है परंतु किस माफक सो किस माफक अर्थात् कौनसी तरह। दूसरा प्रश्न। पद में लिखा है कि बोलत हो मधुर मृदु सो तो पहले हो चुका पीछे बानी सों लिखा जिनके कर्ण कारक तृतिया विभक्ति का चिन्ह (सो) है ताको अर्थ बानी कहिये बोली करके सो बोली करके कहा क्रिया करती है सो आगे जाहर नहीं। तीसरा प्रश्न। फिर लिखा है कि भुज लतकानसैं यहां भी 'सो' चिन्ह तृतीया विभक्ति कर्ण कारक का है ताको अर्थ जाहर रूपी बेलन करके सो भी पहले माफक यहां भी आगे क्रिया जाहिर नहीं। चौथा प्रश्न। सकलकलान सों यहांभी 'सो' चिन्ह तृतिया विभक्ति करण कारक का है ताकी भी क्रिया ज़ाहिर नहीं। पांचवां प्रश्न। ऊपर के प्रश्नों के माफक मुसकानि सों यहाँभी सो चिन्ह कर्ण कारक विभक्ति का है ताकी भी क्रिया ज़ाहर नहीं। उत्तर। ऐसे अन्वय करके अर्थ करने से उत्तर साबित होता है "मयंक मुखी मेरे चित्त को चुरावति हो वैसे ही चितै कें अर्थात् चितवन मृदुबानी सों वैसी ही मधुर बोलती हो कवि मतिराम अंक भरत भुज लतकान सों वैसे ही गह रहत हो कपोल चुंवत अधर रस पान करत सकल कलानिसों रीति वैसे ही निहारी प्रान प्यारी कहा चतुराई ठानी यातें तेरो रूखो मुख मुसकानि सो मान जानियत है"। अर्थ। हे मयंक मुखी! जो चन्द्रवदनी मेरे जो हमारे चित्त जो मन, चुरावति को अर्थ लच्छन लच्छना करके आधीन करत हो वैसे ही अव्यय चार स्थान में हैं तिनको ऊपर लिखा है चित को चुरावति है इस पद के साथ मिला कर अर्थ करना चाहिये वैसें ही कहिये उसी माफक चितैं कहिये छितवन करती हो अर्थात् निहारती हो मृदु जो कोमल। बानी सों जो बोली करकें वैसे हीं जो उसी माफक मृदु जो कोमल मधुर जो मीठे वचन बोलती हो कबि जो कविता कर्ता मतिराम ताको नाम है अंक भरत जो कोली भरत अर्थात् बांह

घालत समय भुजलतकान सों जो बांह रूपी बेलिन सों वैसी ही कहिये उसी माफ़क गह रहिति कहिये पकरि रहिति है। श्रौर चेष्टा नायका करतीहै परन्तु ऊपर अंक भरवो कह्यो सो अंक भरनो नायक की क्रिया है नायका कहती है, कपोल जो गाल चुंवन करत समय अधर जो होठ तिन को रस जो अधरामृत पीवत कहिये पान करत समय नायक कहताहै तिहारी सकल कलान सों सो समस्त चेष्टाओं से रीति जो तजवीज वैसे ही निहारी कहिये विसी माफ़क देखी है। प्रान प्यारी कहिये हे जिय वल्लभा। तैं कहा चतुराई ठानीयत कहिये काहे सुघराई करती है। ? तेरो जो तिहारो मान जो क्रोध मुख की जो आनन की मुसकानिकी जो मंद हांसी की जो रुखाई जो फीकापन करके जान्यो जात कहिये प्रगट होतहै वारह प्रकार की अर्थ-शक्त्योद्भव ध्वनि तिनमें से स्वतःसंभवी वक्ता की प्रौढोक्ति का अलंकार से अलंकार विंजक यहां नायक को सापराध देखकें नायका अपनै मुखकी फीकाई से नायक के अपराध को जाहिर करती है यातें पिहत अलंकार करके नायका के मुख की फीकाई कारण तातें नायका के मान कारज जो नायक जानकर वचन कहता है यातें अनुमान अलंकारः—

कारण लह लहिये जहां काज। अनुमान अलंकृत यह साज ॥

इति अलंकाररतनाकर।

दोहा।

ढीली बाहन सौं मिली, वोली कछू न बोल।
सुंदर मान जनाय यों, लियो प्रानपति मोल ॥४५॥

मूल अर्थ—ढीली सो खोली वाहन सों जो भुजान करके मिली कहिये लीन भई सुन्दर जो नायका मान जो रोस जनाय के कहिये जाहर करके लियो प्रान सो प्रान जो जीव ले लीनो पति जो नायक ताकों मोल जो कीमत तैं।

प्रश्न। वांह को ढीली राखेगी तव तो बांहें ऊंची भी न होसकेगीं तव मिलना कैसे बने ? बोली कछू न कछू जो थोरे वोल न कहिये नहीं वोले कहकें फिर वोल लिखा है ताको कहा प्रयोजन ?। प्रश्न दूसरा। लियो प्रान सो प्रान लेने का अर्थ मार डालना है सो किस को मारा ? तीसरा प्रश्न। पति मोल सो नायकका कहा मोलहै ?। उत्तर। यह अन्वय

करो कि वाहन सें ढीली मिली कछु घोल न बोले ऐसे मान जनाय सुंदरि प्रानपति मोल लियो।अर्थ।वाहन सें जो भुजान करके ढीली मिली कहिये सुस्तसी मिली यहां ध्वनि सें जानों कि भुज माला पिय के कंठ पर डाली परन्तु नायक के उर से अपने कुच नाहीं मिलने दिये अर्थात नाहीं लीन किये कुछ जो थोरे बोल जो वचन न बोले जो ना कहे ऐसें जो इस तरह मान जो रोस जनाय कहिये प्रगट करकें सुन्दिर जो नायका तानें प्रान पति जो नायक ताको मोल लिया कहिये आधीन किया नायक को सापराध देख के नायका ढीली भौंह से मिली यातें नायक के निज अपराध कों नायका जताती है यातें पिहत अलंकार और ध्वनि करके अलंकार से अलंकार विंजक तातैं विभावना दूसरी, मान कर जो विरुद्ध कारण तातें नायक अधीन यह कारज भयो यातें पांचवी विभावना ।

दोहा ।

काहू कारण तें जवैं, कारज होय विरुद्ध ।
करत मोहि संताप यह, सखी सीत कर सुद्ध ॥ १ ॥

इति अलंकार रतनाकर ।

अथ प्रौढा अधीरा लच्छण ॥

दोहा ।

डर देकैं प्रिय को प्रिया, दै सुमन की मारु।
प्रौढा अधीरा कहत हैं, ताहि सुकवि मति चारु॥४६॥

मूल अर्थ—डर देकैं जो भय दिखाकें प्रिय को जो नायक को प्रिया दे जो नायका दे सुमन की मारु कहिये पुष्पन की ताड़ना अधीरा कहते हैं, सो प्रौढा अधीरा को अर्थ प्रसिद्ध कहत हैं कहिये बोलत हैं ताहि कहिये तिने सुकवि जो अच्छे कवि मति जो बुद्धि चारु कहिये श्रेष्ट ।प्रश्न। डर देकें जो डराकें प्रिय को प्रिया दे जो भय दिखा कें नायक को नायका दे सो नायका कहा दे ? प्रिया दे जो दान में नायका को गिनो ऐसा अर्थ रक्खोगे तो देने वाले और चाहिये सो असंभव है । दूसरा प्रश्न। सुमन की मार सो फूलन की कहा मार ? । तीसरा प्रश्न । प्रौढा अधीरा कहत हैं सो कहा कहतहैं? ।चौथा प्रश्न। ताहि कहिये तिनको सो किनको?

पांचवां प्रश्न । सुकवि मति चारु सोअच्छा कबि बुद्धि श्रेष्ट कहा है?। उत्तर । अर्थ ऐसे अन्वय करोकि प्रिय को डर देके प्रिया सुमन की मारदे ताहि चारुमति सु कबि प्रौढा अधीरा कहत हैं प्रिय को जो नायक कों डर देकें जो भय दिखाकें प्रिया जो नायका सुमन की जो फूलन की मार दें अर्थात् ताड़ना दें ताहि जो ताको चारुमति जो अच्छे बुद्धिमान सुकबि जो अच्छे कबि प्रौढा अधीरा कहते हैं ।

उदाहरण–कवित्त ।

जाके अंग अंग की निकाई निरखत आली,
बारनें अनंग की निकाई कीजियतु है ॥
कबि 'मतिराम, जाकी चाह ब्रज नारिन को,
देह अंसुवान के प्रभाह भीजियतु है ॥
जाके बिन देखें न परत कल तुमहूं कौं,
जाके बैन सुनत सुधा से पीजियतु है ॥
ऐसे सुकमार प्रिय नंद के कुमार कों यों,
फूलन के मारन की मार दीजियतु है ॥४७॥

मूल अर्थ–जाके जो जिन के अंग अंग की जो प्रत्येक अवयव की निकाई जो सुन्दरताई निरखत जो दिखात वारने जो नोछावर अनंग की जो कामदेव की निकाई जो सुन्दरताई कीजियत है कबि मतिराम प्रसिद्ध है जाकी जो जिन की चाह जो अभिलाषा ब्रजनारिन की जो बृजवनितानकी देह जो शरीर अंसुवान के प्रभाव भीजियतु है जो रुदन के जल में भीजति है जाको बिन देखे न परत कल तुमहू कों जिन के बिना देखे नहीं परत है कल कहिये जक तुम को जाके बैन सुनत सुधा से पीजियतु है जिनके बोल सुनने से अमृत सो पान करती हो ऐसे सुकुमार प्रिय नन्द के कुमार कों ऐसे कोमल नायक प्यारे नन्द नन्दन को फूलन की माल की मार दीजियतु है पुष्प मालन की ताड़ना देती है पिछले कवित्त दोहानमें सिद्ध अर्थ करके प्रश्नोत्तर किये हैं जैसे ही सब ग्रंथ में प्रश्नोत्तर हो सकते हैं कारण यह है कि अन्वय किये बिन अर्थ साबित न बने और बाजे अर्थ करने

वालों से साबित अन्वय नहीं होसके इसलिये अन्वय करने की रीति जताई है अब सब ग्रंथ में पहले अन्वय करके अर्थ करेंगे और जिस कवित्त दोहे में अच्छे प्रश्नोत्तर पहले सीधा अर्थ करके फिर अन्वय से बनेगा तहां पहले सीधा अर्थ कर अन्वय करेंगे । ऊपर लिखा जिस कवित्त में भी सीधा अर्थ नहीं किया है परन्तु अन्वय करके दिखाता हूं । अन्वय । हे आली ! जाके अंग अंग की निकाई निरखत अनंग की निकाई वारने कीजियतु है जाकी चाह करकें बृज नारिन की देह अंसुवान के प्रभाव भीजियतु है तुमहू को जो जाके बिना देखे कल नहीं परती है जाके बैन सुनत सुधा सो पीजियतु है ऐसे पिय नन्द के कुमार सुकमारन को का फूलन की मारन की मार दीजियतु है । अर्थ हे आली ! जो हे सखी जाके जो जिन के अंग २ की जो प्रत्येक शरीर की निकाई जो सुन्दरताई निरखत जो दिखात तिन पै अनंग की जो कामदेव की निकाई जो सुन्दरताई वारने कीजियतु कहिये नोछावर कीजियतु है जाकी जो जिनकी चाह जो अभिलाषा करके बृज नारिन की जो बृज वनिताओं की देह जो शरीर अंसुवान के जो नेत्र जल के प्रभाव भीजियतु है सो चलने से भीजती है तुम हूं को जो तुम्हारे ताईं भी जाके जो जिनके बिना देखें जो विन अवलोकें कल जो जक नहीं परती है जो नाहीं रहती है जाके कहिये जिनके बैन जो बचन सुनत जो कानन में परने से सुधा सो जो अमृत सो पीजियत कहिये पान करती है ।

प्रश्न—कान द्वारा अमृत पान करनो असंभव है और बचन को तो शब्द गुण है और अमृत में रस गुण है ।उत्तर। ध्वनि से यह शब्द जानो कि जिनके बोल सुनने से तोकों अमृत पान करने के माफक आनन्द होत है ऐसे जो ऊपर लिखे तामाफक मनोहर पिय जो नायक नन्द के कुमार जो नंद नन्दन सुकुमार जो कोमल तिनको कहा फूलन की मार जो पुष्पन की माला की मार दीजियत सो ताड़ना देती है नायका की अभिलाषा नायक को वश करने की है तहां नायक कोप करकें फूल माला की मार देती है यातें विषाद अलंकार ।

दोहा ॥

जहां २ सखि देत तू, फूल मालकी मारु ।
तहां तहां नंदलालके, उठैं रोम तन चारु॥४८॥

मूल अर्थ—प्रथम अन्वय जहां २ तू हे सखी ! फूलमार की मार देत है तहां २ नन्दलाल के रोम उठे तन चारु जहां २ कहिये जिस २ स्थान कहे सखी तू ! जो हे सहेली ! तू फूल माल की जो पुष्पन माला की मार देती कहिये ताड़ना देती है तहां २ जो तिस २ जगह नन्दलाल के जो नन्दनन्दन के रोम उठे कहिये रोमांच होत हैं चारु तन कहिये सुन्दर शरीर पै।

प्रश्न। जिस २ जगह नायका मार देती है सो किसके देती है? । दूसरा प्रश्न। तहां २ नन्दलाल के रोमांच काहे को होत हैं ? । उत्तर। इस तरह अन्वय करोकि 'हे सखी तू नन्दलाल के चारु तन पैं फूल माल की मार जहां २ देती है तहाँ रोम उठे, इस अन्वय में फूल माल की मार नन्दलाल के शरीर पै देना साबित होत है। नायका नायककी प्रीति दृढ करने के लिये डरपाके फूल माला की मार देती है तातें नायक के शरीर पर रोमांच सात्विक होता है यहां रोमांच सात्विक के होने से यह जाना गया कि नायका फूलमाला की मार देती है वह नायक को सुहाती है यहां वाचवैशिष्ट ध्वनि करके फिर यह ध्वन्यार्थ होता है कि नायक के हृदय में रस प्रगट हुआ और प्रीति दृढ भई इतने नायका ने जा बात का उद्यम किया सो बिना ही श्रम सफल हुआ तीसरा सम अलंकारः—

दोहा।

श्रम विन कारज सिद्धि जब, उद्यम करतें होय।

इति अलंकार चंद्रिका।

अथ प्रौढा धीरा अधीरा लक्षण ॥

दोहा ॥

रति उदास ह्वै नाहकों, डर दिखरावे बाम।
प्रौढ अधीराधीर तिय, बरनत कवि "मतिराम,,॥९६॥

मूल अर्थ—रति जो काम क्रीडा उदास हो सो मन भंग हो नाह को जो पति को डर दिखलावे जो भय बतलावे बाम जो नायका प्रौढा जो अवस्था धीरा धीर कहिये धीरज और अधीरज मिली हुई तिय जो नायका कवि मतिराम वर्णन करता है।

प्रश्न। रति उदास हो सो रति काम क्रीड़ा एक क्रिया है सो क्रिया का उदास होना असंभव है उदास होना और हर्षित होना जो क्रिया के कर्त्ता को होता है। दूसरा प्रश्न। वाम नायका का नाम है और तिय भी नायका का नाम सो एक अभिप्राय में एक अर्थ दोय बार आने से पुनरुक्ति दूषण होताहै। उत्तर अर्थ करने में अध्याहार वृत्ति से जहां कुछ वाहर से पद ले आना संभवे तहां बाहर से पद लाके अर्थ दिखाना चाहिये अर्थ जौनसी वाम रति से उदास होके नाह को डर दिखावे ता तिय को कवि मतिराम प्रौढा धीरा अधीरा वर्णन करतेहैं इस प्रकार अर्थ करने से प्रश्न दूर होता है।

उदाहरण—सवैया ॥

प्रीतम आये प्रभात प्रिया घर,
राति रमैं रति चिन्ह लिये हीं ॥
वैठ रही पलका पर सुन्दरि,
नैंन नवाय कें धीर धरें हीं ॥
वांह गहैं "मतिराम,, कहैं नर,
ही रिस माननी के हठ कें हीं ॥
वोली न बोल कछू सतराय कैं,
भौंह चढाय तकी तिर छैं हीं ॥ ५० ॥

मूल अर्थ—प्रीतम जो नायक आये कहिये पधारे प्रभात जो प्रातःकाल प्रिया जो नायका के घर जो भवन राति जो निसा रमे जो रमन कर के रति चिन्ह लिये ही सो काम केलि के निशान युक्त वैठ रही पलका पर सुन्दरि पलंग पर सुन्दरि जो नायका वैठरही अर्थात् नायक को देखकें खड़ी नहीं हुई नैंन जो नेत्रन सों नवायके जो नीचे करकें धीर जो धीरज धरे ही जो धारन करके वांह जो हाथ सों गहे कहिये पकरे न रही जो नाहीं रही रिस जो रिस माननीके कहिये मानवती के हठकें हीं जो रोकने से ही वोली न वोल कछु धीरे से वचन नहीं कहे सतराय कहिये रूखापन युक्त वक्र भौंह

जो भौंहन चढाय कैं तकी कहिये देखि तिरछे ही जो कुटिलता से। धीरज धारना और क्रोध को रोकना प्रीत बाधक था तो भी क्रोध प्रगट होना कारज सिद्ध हुआ यातें तीसरी विभावनाः—

दोहा।

प्रीत बाधक के होत ही, कारज पूरन मान।

इति अलंकाररतनाकर।

दोहा ॥

आवत उठ आदर कियो, बोली बोल रसाल।
बांह गही नंदलाल जब, भयेबाल दृग लाल ॥५१॥

मूल अर्थ—नायक को आता देख कें उठ के आदर किया और रस संजुक्त बचन बोली तब नायक ने बांह गही तिस समय नायका ने नेत्र लाल किये। यहां बचन बैशिष्ट-ध्वनि से यह अर्थ हुआ कि नायक कों अपराध जुक्त देखके नायका कों क्रोध प्रगट हुआ तातें लाल नेत्र भये यहां अनुमान अलंकार नायका के नेत्रों में ललाई कारण तातें क्रोध कारज जाना गया।

अथ जेष्ठा कनिष्ठा ॥

दोहा ॥

बरनत जेष्ट कनिष्टका, जँहँ द्वै व्याही नार।
प्रथम पियारी दूसरी, घट प्यारी निरधार ॥५२॥

मूलअर्थ—बरनत कहिये कहत हैं जेष्ठ (जेष्ठा) जो बड़ी कनिष्ट (कनिष्ठा) जो छोटी जहां कहिये जिते द्वै ब्याही नारि जो दो विवाहिता स्त्री प्रथम पियारी जो पहली प्रिय दूसरी घटप्यारी सो घट अन्तःकरण में प्रिय।

प्रश्न। वरनत जेष्ट कनिष्टिका सो कहा बडी छोटी बरनत कहिये कहत हैं। दूसरा प्रश्न। जहां द्वै व्याही नारि सो जहां शब्द तहां शब्द से संबंध रखता है सो पद में जहां शब्द नही होवे तो ऊपर से लाना चाहिये परन्तु यहां ऊपर से भी तहां शब्द लाना संभवे नहीं यातें जहां शब्द निरर्थ होता है। तीसरा प्रश्न। पहलें प्यारी दूसरे अन्तःकरण मे प्यारी सो दूसरे अंतःकरण में प्यारी कही जब प्रथम प्यारी कौनसे अंग में है?

प्यार तो अन्तःकरण ही में होत है प्यार सहित होवे ताको प्यारी कहते ही हैं। अन्वय करके उत्तर । "जहां द्वै व्याही नारि होवें तहां जेष्ठा और कनिष्ठा वरनत हैं सो निर्द्धार प्रथम प्यारी और दूसरी घट प्यारी" । अर्थ । जहां द्वै व्याही नारि कहिये जिन नायक के दोय विवाहिता स्त्री होवें तहां जेष्ठका और कनिष्ठका सो बड़ी और छोटी वरनत कहिये कहत हैं निर्द्धार कहिये निश्चै प्रथम प्यारी कहिये नायक को प्यारी होय ताको प्रथम जेष्ठका है सो जानो घट प्यारी जो जातें नायक को घटतो प्यार हो ताको दूसरी जो कनिष्टका है सो मानो उदाहरण के कवित्त में जेष्ट कनिष्टका को लिवाह और तरहसे हैं इसलिये या दोहे का अर्थ यह भी जानो कि प्रथम पियारी जो बड़ी तासों जाहर में प्यारी कहिये स्नेह नायक अधिक रखता है निर्द्धार जो निश्चय दूसरी जो छोटी सो घट प्यारी कहिये घट जो अन्तःकरण तामें प्रिय है क्योंकि बड़ी नायका की खातिर प्रत्यक्षमें नायक अधिक रखता है परन्तु अन्तःकरण में छोटी सों स्नेह अधिक रखता है।

उदाहरण—कवित्त ॥

वैठी एक सेज पै सलोनी मृग नैनी दोऊ,
आये तहां प्रीतम सुधा समूह वरसे ॥
कवि "मतिराम,, ढिग वैठे मन भावन,
दोहुन के हीय अर विंद मोद सरसे ॥
आरसी दै एक को कह्यो जो निज मुख देखो,
जासें विधुवारज विलास वर दरसे ॥
दरपसों भरी वह दरपन देख्यो तोलों,
प्यारे आन प्यारी के उरोज पान परसे ॥५३॥

मूलअर्थ—वैठी एक सेज पै सलोनी सो लावण्यता अर्थात् सुन्दरता [illegible] जो विछायत पै वैटी है मृगनैनी दोऊ मृग जो हिरन ता समान [illegible] तिन के एसी नायका दोऊ कहने से दोय आये तहां प्रीतम तहां [illegible] तिस जगह प्रीतम जो आये कहिये पधारे सुधा समूह वरसे सुधा जो

अमृत समूह जो घने बरसै कवि मतिराम ढिंग बैठे मन भावन सो मति राम कबि कहत हैं ढिग जो नजदीक बैठे मन भावन जो नायक दुहु के जो उभय के हिय अरविंद जो हिय के कमल मोद सरसे सो हर्ष से प्रफुल्लित भये। आरसी जो काच सो देकें एक सों कह्यो जो एक से ऐसे कह्यो निज मुख देखो सो अपनों मुख देखो जामें कहिये जिन में विधु जो चन्द्रमा बारज जो कमल वर दरसे सो श्रेष्ठ दरसे, दर्प सों भरी सो गर्व सों भरी वह जो वह नायका जिन को मुख देखने को नायक आरसी दीनी है सो दर्पन जो काच ताको देखत ही लौं जो तब लग प्यारो जो नायक तिन प्रान प्यारी जो अन्तःकरणमें प्रिया नायका ताकेउरोज पान परसे।

प्रश्न—प्रीतम सुधा समूह बरसे सो नायक घनें अमृत कैसे बरसे ?। दूसरा प्रश्न। दोनें के हिये अरिविन्द मोद सरसे कह्यो सो दोनें नायका के हिय कमल में मोद प्रगट्यो किधों नायक और एक नायका के प्रगट्यो ?। उत्तर। ऐसें अन्वय करकें अर्थ करना चाहिये कि "सलोनी मृग नैनी दोऊ तहां प्रीतम आय ढिंग बैठै सुधा समूह बरसे कवि मतिराम मनभावन सी दोहुन के हिय अरिविंद मोद से सरसे आरसी ले एक सों कह्यो जो निज मुख देखो जामें विधु वारज विलास वर दरसै दरप सों भरी वह दरपन में देखै तौलौं प्रान प्यारो प्यारी के उरोज पान परसे',

अर्थ—सलौनी जो लावण्यता युक्त मृगनैनी जो हिरन के से नेत्र हैं जिन के ऐसी दोऊ नायका एक सेज पर बैठी तहां जो तिस जगह प्रीतम जो नायक आये कहिये आयकें ढिंग बैठ जो समीप बैठके सुधा समूह बरसे सो सुधा जो अमृत समूह सो समूह अर्थात् निज मुख बरसे सो बरसनेका अर्थ श्रवना सोतो यहां असंभव है तब लच्छन लच्छना करके बरसने का अर्थ प्रिय वचन कहना जानो ध्वनि से यह अर्थ निकलता है कि अमृत वृष्टि का सा सुख प्रिय वचन सुन के उपजत है और मन भावन जो नायका दुहुन के कहिये उभय के हिय अरिविन्द मोद सरसे सो हिय कमल में मोद जो हर्ष उपजै। नायक ने कनिष्टा नायका को दरपन दिखाने का मिस करके अपना मन सुहाया निज कार्य जेष्टा नायका का उरोज मर्दन करके सिद्ध किया यह पर्यायोक्ति अलंकार का दूसरा भेदः—

दोहा।

मिस कर कारज साधिये, जो कुछ चितहि सुहात।

इति अलंकार रतनाकर।

दोहा ॥

वैनी गूंदत एक की, नंद लाल चित लोल ।
चूमत प्यारी के मधुर, विहसत गोल कपोल ॥५५॥

मूल अर्थ—वैनी कहिये शीश के केश जो रेशम के डोरों और पुष्पादिक सामग्री से गुंथी जाती है ताको कहते हैं सो नंदलाल कहिये श्री कृष्ण चन्द उक्त क्रीड़ा से एक नायका की वैनी गूंथत हैं और चित जो मन लोल जो चंचल होके प्यारी जो हितकारी ताके गोल जो अच्छे गोरदार कपोल जो गाल ताकों चुंवत कहिये चुंवन करते हैं तव मधुर जो मिठास जुक्त विकसत कहिये प्रफुल्लित होत हैं ।

प्रश्न—एक की नंदलाल वैनी गूंथत हैं और चंचल मन होके प्यारी के कपोल चुंवन करत हैं इस अर्थ से एक नायका को वर्णन है और यह दोहा जेष्टा कनिष्ठा के उदाहरण का है यातें दोय नायका चाहिये । दूसरा प्रश्न । दूजो मधुर गोल कपोल विकसत हैं सो मधुर मिठास जुक्त गाल फूले हैं सो गाल में कहा मिठास है और कैसे फूलत है ? ।

उत्तर । वैनी एक की गूंथत है सो एक की कहने से दूसरी का भी संबंध आता है सो कपोल चुंवन करने की क्रिया दूसरी प्यारीके संग माने जेष्टा कनिष्ठा के लक्षण प्रथम दोहे में कहे हैं जामें बड़ी नायका की खातिर प्रसिद्ध में अधिक रक्खे और अंतःकरण का स्नेह छोटी से अधिक इस लक्षण के अनुसार अर्थसे वैनी बड़ी नायका की गूंथत हैं जाकी जाहर में खातिर अधिक जे वैनी गूंथवे को बड़ी नायका की पीठ पीछे वैठे हैं तव वाकी दीठ वचाय कें छोटी नायका के गाल चुंवन करत हैं ध्वनि से यह अर्थ जानो कि जेष्टा से कपट रखकें कनिष्टा से उपभोग करते हैं यातें नायक के अन्तःकरण की प्रीति कनिष्ठा से अधिक है कपोल मधुर कहे सो कपोलन में मधुर हांसी प्रगटत है ॥ जेष्टा नायका की वैनी के गूंथने का मिस कर के नायक अपना मन सुहाता कार्य कनिष्ठाका नायकाका कपोल चुंवन कर के सिद्ध करता है यह पर्यायोक्ति अलंकार का दूसरा भेद ।

दोहा ।

तिलक मनोरप्रकाश यह, अपनी वुधि अनुमान ।
सु किया भेद वनाय कें, वरन्यो प्रथम विधान ॥१॥

इति स्वकीयाप्रकरणम् ।

अथ परकीया वर्णन ॥

दोहा ॥

प्रेम करै पर पुरुष सौं, परकीया सो जांन ।
दोय भेद ऊढा प्रथम, बहुरि अनूढा मांन ॥५६॥

मूल अर्थ—जो नायका पर पुरुष सो कहिये अन्य पुरुष से प्रेम करै कहिये स्नेह करै सो परकीया जानो ताके दोय भेद प्रथम ऊढा कहिये पहले ऊढा और अनूढामान कहिये पीछे अनूढा मानो यहां मान शब्द विधि क्रिया के लिये रक्खा है ।

प्रश्न—जो नायका अपना विवाह होने से पहले पर पुरुष से प्रीति करती है सो अनूढा परकीया कहाती है तब सीधी रीति से पहले अनूढा कह कर फिर ऊढा कहनी चाहिये और मतिराम ने बिलोम वर्णन किस रीति से किया ? । उत्तर । लोक रीति से विवाह बाल अवस्था में होता है और जोवन अवस्था बिना स्त्री पुरुष की प्रीति नहीं होती सो वाल अवस्था में विवाह होकर जोवन अवस्था में पर पुरुष से प्रीति करै सो ऊढा और किसी विशेष कारण से जोवन अवस्था तक अविवाहिता रह कर पर पुरुष से प्रीति करै सो अनूढा और प्रथम सामान्य वर्णन कर के पीछे विशेष चाहिये इस रीति से पहले ऊढा कह कर फिर अनूढा कही है ।

अथ ऊढा लक्षण ॥

दोहा ॥

ब्याही औरही पुरुष सौं, औरही सौं रसलीन ।
ऊढा तासौं कहत हैं, जे पंडित परवीन ॥ ५७ ॥

मूल अर्थ—और ही पुरुष से जो अन्य पुरुष से ब्याहे जो ब्याह कर के और ही पुरुष जो अन्य पुरुष से रस लीन जो आशक्त होय ताकों जे श्रेष्ट पंडित हैं ते ऊढा कहते हैं ।

प्रश्न—और पुरुष से ब्याही ऐसे लिखा है सो जिस पुरुष से ब्याह होय सो नायका का निज पति होता है उसे अन्य पुरुष कैसे लिखा ? उत्तर । कवि की उक्ति परकीया नायका जिस पुरुष से आशक्तहो उस की विवाहिता नही किन्तु और की विवाहिता होती है और जिस की विवाहिता होती है उसे उपपति और होता है ।

उदाहरण—सवैया ॥

क्यों इन आंखन से निरसंक ह्वै,मोहन को तन पानिप पीजै?॥
नेक निहारैं कलंक लगैं यह,गाम गंगार में कैसे ह्वै जीजै?॥
होत रहै मन यों मति राम!कहूं, बन जाय बड़ो तप कीजै॥
ह्वै वनमाल हिये लगिये अरु,ह्वै मुरली अधुरारस लीजै ५८॥

मूल अर्थ—नायका सखी से कहती है कैसे इन नेत्रों से संका रहित होकैं नायक के तन के स्वरूप को पीसकें। स्वरूप का पान करना नहीं संभव है लच्छन लच्छना कर के पीवे को अर्थ निहारवो नेक निहार कलंक लगे यह गांम गंवार में कैसे ह्वै जीजे ?।

अर्थ—थोराही देखने से दूषण लगावत है ऐसे गंवार गांम में कहा कर्त्तव्यता कर के चैन से रह सकें ? होतरहे मन यें मतिराम कहूं वन जाय वड़ो तप कीजे। अर्थ। मतिराम कवि संवोधन इस प्रकार चित्त होता है कि काहू वन में जाय के वहुत तपस्या करें ह्वै वन माल हिये लगिये अरु ह्वै मुरली अधुरा रस लीजे। अर्थ। ता तपश्चर्या के फल से वन माल होके नायक के हृदय से लपटें और मुरली होकर अधुरन का रस चक्खें।

प्रश्न—विवाहिता परकीया को ऊढा लिखा है सो विवाहितापना इस सवैया में कैसें आता है ? उत्तर—ऐसे विवाहिता जानी जाती है कि जो यह अविवाहिता होती तो तपस्या के फल से इसी नायक से अपना विवाह चाहती सो और से विवाह हो चुका तव स्त्री का पुनर्विवाह नहीं होता और यह अत्यन्त आशक्त होकर आठ पहर नायक से हिल मिल चाहती है तव तपस्या के फल से वनमाल और मुरली का उपालम्वन करके कहती है इस से ऊढा जाननी चाहिये यहां चिंता शंका व्यभिचारी भाव शृंगार रस को अंग है यातें प्रेय अलंकार जैसे :—

भाव अंग जहं रस को होय। भाव भाव को कै अंग सोय॥
अलंकार कहिये प्रेय तास, याहि कहत कविभाव प्रकाश॥१॥
प्रेय अलंकार को कोई भाव अलंकार कहते हैं।

इति अलंकार रतनाकर।

दोहा ॥

कंथ चौक सीमंत की, बैठी गांठ जुराय ।
पेख्न परोसी कौं प्रिया, घूंघट में मुसकाय ॥ ५६ ॥

मूल अर्थ—सखी सैं सखी वचन कंथ जो पति ताके संग सीमंत चैाक पुत्रोत्सव सूर्य की पूजन करने के लिये चैाक में मंडल बनावें उसे कहते हैं तहां गठजोरा बांध के बैठी है और परोसी को देखकें प्रिया जो नायका घूंघट की ओट राख के हंसती है । प्रश्न । इसे परकिया कैसे जानी ? उत्तर । परोसी को देख कें नायका हंसती है इससे ध्वन्यार्थ यह है कि वह परोसी से आसक्त है और परोसी से पुत्र उत्पन्न कर के पति से गांठ जोरी है फिर परोसी को देख के हंसती है ॥ नायक की ओर घूंघट की ओट का मिस कर के जोर से दृष्टि मिला कर हंसती है यह अपना कार्य सिद्ध किया यातें पर्यायोक्ति अलंकार का दूसरा भेद ॥

अथ अनूढा लक्षण ॥

दोहा ।

अन व्याही कहु पुरस से, अनु रागिनी जो होय ।
ताहि अनूढा कहत हैं, कवि कोविद सब कोय॥६०॥

मूल अर्थ—जो नायका विवाह होने के पहले काहू पुरुष सों आसक्त होय ताको कवि और पंडित सब कोई अनूढा कहते हैं । स्पष्ट ।

उदाहरण—कवित्त ।

गोप सुता कहैं गोर गुसाइन!
पाय परों विनती सुन लीजे ।
दीन दयानिधि दासी के ऊपर,
नेक सुचित्त दया रस भीजे ॥
देह जो व्याह उचाह के मोहन,
मात पिता हू को सो मन कीजे ।

सुंदर सांवरो नंद कुमार,
बसे उर जो बर सोबर दीजै ॥६१॥

मूलअर्थ—गोपसुता कहती है हे गोर गुसाइन ! मैं आपके पाइन में परती हूं मेरी विनती सुन लीजै दीन जो गरीब तापर दयानिधि जो कृपा के समुद्र दासी पै नेक सुचित्त जो थोरे से अच्छे चित्त होके दया के रस से भीजिये और माता पिता हू को ऐसो मन कीजिये सो मुझे उछाह सों मोहन को व्याह दें सुंदर सांवरो नंद को कुंवर जो स्नेह मेरे हिय में बसे हैं सो मुझे पति दीजिये ।

प्रश्न । पहले दयानिधि कह चुकी सो दयानिधि का बहुत अच्छा चित्त होता है सो जिन का बहुत अच्छा चित्त होय तिन सों थोरासा अच्छा चित्त रक्खो ऐसी प्रार्थना नहीं चाहिये । दूसरा प्रश्न । नायका कहती है मुझ पर थोरासा अच्छा चित्त रख के दया के रस से भीजिये सो दया के रस से भीजने का अर्थ हद्द से ज़ियादः दया करना सो थोड़े से अच्छे चित्त के साथ कैसें बने? । उत्तर । अर्थ ऐसे अन्वय करके करीये अन्वयः-गोप सुता कहती है हे गोर गुंसाइन ! मैं पांय पर के विनती करती हूं सो आप नेंक सुचित्त होकैं सुनिये नेंक सुचित्त को अर्थ थोरे से थिर चित्त होके सुनिये दीन दयानिधि दासी के ऊपर दया रस भीजिये यहां अभिलाषा संचारी शृंगार रस को अंग है यातें प्रेय अलंकार ।

दोहा ।

मैं सुनि आई नंद घर, अब तू होहु निसंक ।
राधे ! मोहन व्याह सौं, जैहै धोय कलंक ॥ ६२ ॥

मूल अर्थ—सखी नायका से कहती है कि मैं नंद जी के घरे सुनि आई हूं अब तू निसंक होहु हे राधे ! मोहन के व्याह सें तेरा कलंक धुय जैहैं ।। श्री राधिका जी से श्रीकृष्ण का विवाह होना सखीने कहा यहां विनाही जतन श्री राधिकाजी को वाँछित फल हुआ यातें प्रथम प्रहर्षन अलंकार ।।

दोहा ।

तीन प्रहर्षन जतन बिन, वांछित फल जो होय ।
इति अलंकार रतनाकर ।

अथ परकीया के भेद ॥

दोहा ॥

पर किया के भेद षट, गुप्ता प्रथम बखान ।
बहुरि विदगधा, लच्छता, मुदुता, कुलटा मान॥६३॥

मूल अर्थ—परकीया नायका के छः भेद होते हैं तिन में से पहला भेद गुप्ता सराहिये और (२) विदग्धा (३) लक्षता (४) मुदता (५) कुलटा जान ।

। प्रश्न । परकीया के छै भेद होते हैं तिन षट ही भेद में पर कीयापन समान है तब प्रथम गुप्ता यहां प्रथम पद क्यों लिखा? दूसरा प्रश्न । गुप्ता वखान सो गुप्ता में वखानवे लाइक कहा बात है?

उत्तर—परकीया में प्रथम गुप्ता कहने का कारण यह है कि लोक मर्यादा कुल मर्यादा के भय से सब परकीया उपपति की प्रीति गुप्त रखनी चाहती हैं इसलिये परकीया में प्रथम भेद गुप्ता ही है । दूसरा उत्तर । गुप्ता वखान सो उपपति से प्रीति कर के गुप्त रखती है यातें परकीया में गुप्त सराहवे लाइक है ।

दोहा ।

और अनु सयना कही, तिन के विमल विवेक ।
बरनत कवि मतिराम यह, रस शृंगार के सेक ॥६४॥

मूल अर्थ— अनुसयना नायका कही है जिन का अच्छा विवेक है सो मतिराम कवि कहता है कि शृंगार रस के सींचनेवाले कवि कहते हैं ।

प्रश्न—अनुसयना में विमल विवेक कौनसा है? । उत्तर । ऐसे अन्वय करके अर्थ करना चाहिये कि "विमल विवेक करके शृंगार को सींचने वाले जे कवि हैं ते और अनुसयना कहते हैं" ।

अथ गुप्ता लक्षण ॥

दोहा ॥

सुरति छिपाव करे जु तिय, सोगुप्ता उर आन।
वरनत कवि मतिराम यह, चतुराई की खान ॥६५॥

मूल अर्थ— जो नायका रति को छिपाती है ताको चतुराई की खान हृदय में समझ कर वाको गुप्ता कहकें वर्णन करता हूं। स्पष्ट।

उदाहरण—सवैया ॥

लेन गई हुती बागन फूल अंध्यारी लखें डर बाढयो महाई॥
रोम उठे तन कंप छुटे "मतिराम,, भई श्रम की सरसाई॥
वेलन में उरझी अंगियां छतियां अति कंटक के छितछाई॥
देह में नेक संभार रही न यहां, लग भाग मरूं कर आई ६६॥

मूल अर्थ— मैं वागों में फूल लेने को गई थी तहां अंधियारी देख कें वहुत भय उपजा और रोम खडे हुए और शरीर धूजने लगा और प्रस्वेद की सर साई कहिये अधिकताई वढी और वेलनमें अंगियां उरझी और हृदय पर वहुत कांटों के घाव लगे और शरीर में थोडी भी संभार नहीं रही और मरूं कर के यहां तक भाग के आई हूं।

प्रश्न—वेलन में अंगियां उरझी ऐसे लिखा है सो अंगियां के ऊपर सारी का पल्ला रहता है और भीतर अंगियां रहती हैं सो भीतर का वस्त्र नहीं उलझता है और यह भी रीति है कि जो वस्त्र ढीला या लटकाऊ रहता है सो उलझता है और अंगियां उरोजन पै चुस्त रहती है सो उलझना असंभव है। उत्तर। ऐसे अर्थ करना चाहिये कि यों कहिये ऐसी अवस्था होकें वेलन में अंग उरझे और छाती पै वहुत कंटक के घाव लगे दूसरा। प्रश्न। यहां तक भाग मरूंकर किस लिये कहा है?। उत्तर। मरूंकर का यह तात्पर्य कि जो कोई काम वहुत कष्ट से होता है तहां यह लोकोक्ति है कि यह काम हमने मर मर कर किया है। जो कोई काम कठिनताई से होता है तहां यह लोकोक्ति है कि यह काम हमने मर कर किया तातें नायका के वचन में लोकोक्ति अलंकार है।

दोहा ।

लोकोक्ति कछु बचन जो, लीजे लोक प्रमाद ।
नैंन मूंद षट मास लौं, सहिये विरह बिषाद ॥ १ ॥

इति अलंकार रत्नाकर ।

दोहा ॥

भलो नहीं यह केवरो, सजनी ! गेह अराम ।
वसन फटै कांटिक लगै, निसि दिन ? आठौं जाम॥६७॥

मूल अर्थ—हे सखी ! घर के बाग में यह केवरा अच्छा नहीं है रात दिन आठों याम वस्त्र फाटते हैं और कांटे लगते हैं ।

प्रश्न । राति दिन कहने से आठ पहर जाने गये फिर आठ पहर कहने का क्या कारण है? । उत्तर । इस में प्रश्नोत्तर है नायका कहती है कि कांटे लगते हैं और वस्त्र फाटते हैं तब सखी कहती है कि रात में कांटे लगते हैं याकि दिन में? तब नायका कहती है कि जहां घर के बाग में कांटे वाला रूंख होता है तहां आठों पहर यही हाल होता है यहां सखी और नायका के परस्पर प्रश्नोत्तर हैं याते प्रश्नोत्तर अलंकार ॥

अथ विदग्धा भेद ।

दोहा ॥

द्विविद विदग्धा कहतहैं, कवि कर बिमल विवेक ।
वचन विदग्धा एक हैं, क्रिया विदग्धा एक ॥६८॥

मूल अर्थ—कवि विमल विवेक कहिये निर्मल बुद्धि कर कें दो प्रकार विदग्धा को बरनत हैं विदग्धा कहिये चतुर सो एक बचन में चतुराई उपपति सों प्रीति दृढ रने को करती है और एक क्रिया करकें करती है ।

अथ विदग्धा लक्षण ॥

दोहा ॥

करै बचन सौं चातुरी, वचन विदग्धा जान ।
करै क्रिया सौं चातुरी, क्रिया विदग्धा मान ॥६९॥

मूल अर्थ– जो नायका वचन कर के चतुराई करती है ताको वचन विदग्धा जानिये और जो नायका क्रिया कर के प्रवीणताई करती है वह क्रिया विदग्धा मानिये।

प्रश्न–वचन और क्रिया करकें चतुराई कर ने से विदग्धा होती है सो विदग्धा परकीया का भेद है सो चतुराई करने से परकीया होवेगीं तौ स्वकीया कैसी मूर्ख होती हैं?। उत्तर। विदग्धा का अर्थ चतुर है सो चतुराई स्वकीया में भी होती है परन्तु उस को परकीया की नाईं निज पति से मिलने के लिए चतुराई नहीं करनी पड़ती इस से यह भेद परम्परा से परकीया में माना गया है॥

उदाहरण–कवित्त।

आई है निपट सांझ गयां गई घर मांझ,
ह्वांतें दौर आई मेरो कह्यो कान्ह कीजिये॥
हूं तो हूं अकेली और दूसरो न देखियत,
बनकी अंधेरी मांझ अधिक भय भीजिये॥
कवि "मतिराम,, मन मोहन सौं पुनि पुनि,
राधिका कहत बात सांच पै पतीजिये॥
कबकी हूं हेरत न हेरैं हरि! पावत हौ.
बछरा हिरानौं सो हिराय नैंक दीजिये॥७०॥

मूल अर्थ–निपट सांझ आई कहिये खरी संध्या होचुकी और गाएं घर भीतर गईं मैं वहांसे भागकर आई हूं हे कान्ह! मेरा कह्यो करिये मैं अकेली हूं और दूसरो नहीं दीखतु है याको अर्थ यह वन निर्ज्जन स्थान है और अंधेरी मिल रही है यातें बहुत भय करके भीजिये। भीजिबे को अर्थ प्रस्वेद स्वातक से शरीर भीजियत है मन मोहन से जो श्री कृष्ण चंद्र से राधिका जो श्री लाड़िली जी पुनि २ जो वारंवार कहती है मैं सांच कहती हूं तापै प्रतीत करिये बछरा गम्यो है याकौं मैं कव की जो बहुत समय से हेरती हूं पै हेरने से नहीं पावत है सो हे हरि! तुम हिराय दीजिये अर्थात सुधवाय दीजिये। मन मोहन कहके प्रीति प्रगट करती है और संकेत स्थान की निर्जनता और अंधेरा बतला कर उद्दीपनता प्रगट

करती है कार्य सिद्धि करने के लिये नायक को अपनें साथ लेजाती है यातें पर्यायोक्ति अलंकार का दूसरा भेद।

दोहा।

मिस कर कारज साधिये, जो कुछ चितहि सुहात।

इति अलंकाररत्नाकर।

दोहा॥

खेत तिहारो धानको ?, यौं बूझो मुसकाय।
इहैं हमारो हैं कह्यो, सघन ज्वार दरसाय॥७१॥

मूल अर्थ—नायका को खेत में देख कें नायक ने मुसकाय कें पूछा कि धान का खेत तुम्हारा है ? तब नायका ने पीछा उत्तर दिया कि यह सघन ज्वार दीखती है सो हमारी है।

प्रश्न—इस अर्थ मैं नायका का साधारन वचन है कुछ भी चतुराई और नायक से प्रीति का दृढ़ करना नहीं पाया जाता है। उत्तर। ऐसें अर्थ करना चाहिये कि नायक ने कहा कि धान का खेत तुम्हारा है? तब नायका ने मुसकाय कें कहा कि हमारा ही है और घन जो मेघ सघन कहिये बहुत उमड़ रहे हैं सो ज्वार जो अग्नि की ज्वाला के समान दरसाते हैं कहिये दीखते हैं इसमें यह व्यंग पाया जाता है कि धान का खेत संकेत है और मैं उद्दीपन सामग्री से कामातुर हूं सो आप नहीं मिलोगे तो दुखी रहूंगी। नायका नायक के प्रश्न का उत्तर रति इच्छा भाव सहित देती हैं यातें गूढोत्तर अलंकार।

उदाहरण—सवैया॥

बैठी त्रिया गुर लोगनमैं, रतितैं अति सुन्दर रूप बिसेखी॥
आये तहां"मतिराम,,सुजान, मनोभवसौं बढ़ क्रांति विसेखी॥
लोचनरूप पियोही चहैं अरु,लाज न जात नहीं छवि पेखी॥
नैन नमाय रही हियमालमैं,लालकी मूरति लालमैंदेखी॥७२॥

मूलअर्थ—नायका गुरु लोगन में जो बूढी और बडेरी स्त्रियों के संग में बैठी थी जो रति नाम कामदेव की स्त्री से भी अति सुन्दर थी अर्थात विशेष रूपवाली थी। तहां सुजान जो नायक आये उनकी भी

कामदेव से बढके क्रांति की विशेषता थी तब नायका के लोचन जो नेत्र में नायक के रूप कों पीवे की कहिये निहारवे की अभिलाषा बढी परन्तु नैनों से लाज दूर नहीं होती है इससे सन्मुख नहीं निहार सकी और हियमाल जो छाती पर जड़ाऊ मानिक की माला थी तामें नायक का स्वरूप उघरता था ताकों नेत्र नमाय कैं अवलोकन किया ।

प्रश्न । रति से अति सुन्दर कहने से वहुत स्वरूप होचुका फिर रूप की विशेषता का कहना पुनरुक्ति दूषण है । दूसरा प्रश्न । ऐसे ही नायक को भी मनोभव से बढकर क्रांति विशेष कहने में पुनरुक्ति दूषण आता है बढ और विशेष का एक ही अर्थहै । तीसरा प्रश्न । लाज नहीं दूर होती है सो लाज नहीं दूर होगी तो परकीयापना नहीं सावित होगा । पूर्वार्द्ध का अर्थ इसप्रकार करना चाहिये कि नायका गुरुलोगन में वैठी थी सो स्वरूप में भी विशेष थी और रति जो प्रीति से उछाह कर कें वहुत सुन्दर दीखती थी तहां सुजान जो नायक मनोभव नाम कामदेव से बढ कैं जो उमंग कैं, विशेष हैं क्रांति जिन की ते आये हैं और लाज न आत सो नायक तैं लाज नहीं है पर और स्त्रियां निकट हैं तिनकी लोक लाज से नायक के सन्मुख नहीं निहार सकी ॥ लज्जा से नीची दृष्टि का मिस करके अपना वांछित कार्य्य नायक का स्वरूप हृदय के गहने पर माणिक जड़ा हुआ था तामें देखा यहां पर्यायोक्ति अलंकार का दूसरा भेद ।

दोहा ॥

चढी अटारी वाम वह, कियो प्रनाम अखोट ।
तरुन किरनतैं दृगनकौं, कर सरोज की ओट ॥७३॥

मूलअर्थ—सखी से सखी वचन, वह वाम अटारी पै चढी तब नायक को देखकैं नैत्रन में आडी हस्त कमल की ओट रखकर नायक से न खोट प्रनाम किया न खोट का तात्पर्य यह है कि वहि रंग सखी से नैत्रन से सूर्य की किरण का मिस रख कर मस्तक से हाथ लगा के नायक से प्रनाम किया और उपपति की प्रीति छिपाने से अखोट अपना ऐब जाहर नहीं होने दिया कर ओट से दृगन को सूर्य की किरण बचाने से दुराया हुआ नायका ने नायक से प्रणाम किया याते व्याजोक्ति अलंकार:—

दोहा ।

व्याजोक्ति कछु और विधि, कहैं दुरे आकार ।
पद । लाल दये इत पाग के पेच उतै बिन्दली उन बाल सुधारी ।
इति अलंकार रत्नाकर ।

अर्थात दूसरा व्याजोक्ति अलंकार भी यहां लगता है ।

अथ लच्छता लक्षण ॥

दोहा ॥

होत लखाय सखीन कौं, पिय सौं जाको प्रेम ॥
ताहि लच्छता कहत हैं, कवि कोबिद कर नेम ॥७४॥

मूल अर्थ —जा नायका को नायक से प्रेम होय ताको लच्छन कर के सखी जाने ता नायका को लच्छता कहते हैं छिपी हुई प्रीति जाहर होय।

उदाहरण—सवैया ॥

आई हो पांय दिवाय महावर,कुंजन तें कर कें सुख सैंनी ॥
सांवरे आज सवारयो दै अंजन, नैंनन कूं लख लाजत ऐनी॥
बातके बूझतही"मतिराम,, कहा करिये यह भौंह तनैंनी ॥
मूंदि न राखत प्रीति भटू!यह,गुंदी गुपालके हाथकी वैनी७५॥

मूलअर्थ—पाइन कैं महावर जो इलता लगाय कैं कुंज भवन से सुख सैन करके आई हो और सांवरे जो कन्हैयाजी ने आज वर्त्तमान समय में अंजन जो कज्जल संवारयोहै नैत्रों को देख के ऐनी जो हिरनी भी लज्जित होती है वात के बूझते ही कहा यह भौंह चढाती हो ? हे सखी यह गोपाल के हाथ की गुथी हुई वैनी है सो प्रीति को ढकी नहीं रहने देगी साध्यवसाना लच्छना करके वैनी में चुगल का आरोप यातें अर्थशक्त्योद्भवध्वनि के द्वादश भेद होते हैं और तिनमें सेकवि निबद्ध बक्ता की प्रोढोक्ति वस्तु से अलंकार या प्रकार ।

दोहा ॥

सतरोही भौंहन नहीं, दुरैं दुरायो नेह ।
होत नाम नंदलालके, तो मृनालसी देह ॥७६॥

मूलअर्थ—नंदलाल को नाम सुन के तेरी देह मृनाल सी होती है सो तू सतराय के भौंह चढा के सनेह को दुराती है पर नहीं दुरैगो मृनाल जो कमल की नाल तामें कांटेसे होते हैं तैसे तेरे शरीर पैं रोम खड़े होते हैं।

प्रश्न। विना पूछे नायका सहज सुभाव में भौंह काहे को चढाती थी ?। उत्तर। इसका अर्थ यह कि सखी कहती है कि तेरी प्रीति कन्हैयाजी से है तब नायका सतराय के भौंह चढाती है तब सखी कहती है नंदलाल के नाम को सुनते ही तेरे शरीर के रोम खड़े हुये हैं सो तेरी प्रीति छिपी नहीं रहेगी यहां लुप्तोपमा अलंकार नायका उपमेय मृनाल उपमान सी वाचक रू खड़ा होना धर्म ताका लोप है यातें धर्मलुप्ता।

दोहा।

याचक धर्म रु बरननी, अरु चौथो उपमान।
एक बिन द्वै बिन तीन बिन, लुप्तोपमा प्रमान ॥१॥

इति अलंकार रतनाकर

अथ कुलटा लक्षण॥

दोहा॥

जो चाहत बहु नायकन, सरस सुरत पर प्रीति।
तासों कुलटा कहतहैं, लख गृंथन की रीति ॥७७॥

मूलअर्थ—जो नायका बहुत नायकन को चाहती है और सरस जो अधिक है जाकी प्रीति सुरत पर जो संभोग कर ताको ग्रंथन को मत देखकर कुलटा कहते हैं।

उदाहरण—सवैया॥

अंजन दे निकसैं नित नैनन, मंजन कैं अति अंग सवारैं॥
रूप गुमान भरी मगमैं, पगही के अंगूठा अनोट सुधारैं॥
जोवन के मदसौं "मतिराम,, भई मतवारिन लोग निहारैं॥
जात चली यह भांति गली, बिथुरी अलकैं अंचरा न संभारैं७८

मूल अर्थ—नैनन में अंजन जो कज्जल देकर नित जो हमेशा निकलती है मंजन जो स्नान करके अति शरीर को संभालती है रूप के गुमान में जो सुन्दरताई के गर्व में भरी हुई मग कहिये रस्ता ताके बीच पग के अंगूठा से अनोट को सुधारती है जोबन के मदसौं मतवाली होके लोग जो पुरुष तिन को निहारती है अलकें छुटी हुई हैं और अंचरा जो चीर तिन की भी सुधि नहीं रखती है सो ऐसी प्रीति सौं गली में चली जाती है अलकें छुटी हुई और शरीर उघड़ा हुआ लोगन को निहारती हुई इस रीति से गली में चली जाती है यह कुलटा का स्वाभाविक धर्म है यातें स्वभावोक्ति अलंकारः—

दोहा ।

सभा उक्ति जहां बरनिये, बरनत जात सुभाव ।

इति अलंकार रतनाकर ।

दोहा ।

मोहि मधुर मुसकानि सौं, सबै गाम के छैल ।
सकल सैल, बन, कुंज, मैं, तरुनी सुरति की सैल७९॥

मूल अर्थ— मधुर मुसकानि सों सबै गांम के पुरुषन को मोहि कैं तरुनी ने सहल करने के लिये समस्त पहाड़ और बन कुंज को संभोग स्थान किये हैं यहां एक नायकाके समस्त सैल और बन कुंज संभोग स्थान ठहराये यातें तीसरा विशेष अलंकार ।

दोहा ।

वस्तु एक को कीजिये, बरनन ठोर अनेक ॥

इति भाषा भूषण ।

अथ अनुसयना लक्षण ।

दोहा ॥

केल करे जहं कंथ सौं, सो थल मिट्यो निहार ।
कही अनूसयना सु यौं, सोच करे बरनार ॥८०॥

मूल अर्थ— कंथ से केलि करने के स्थान को नाश हुआ देख कें जो वर नारि कहिये श्रेष्ट नारि सोच करै तिस को कवि अनुसयना कहते हैं।

प्रश्न—इस दोहे का यह अर्थ है कि जो श्रेष्ट नारि सोच करती है सो अनुसयना कहिये सो अनुसयना परकीया होती है सो परकीया में कैसा श्रेष्टपना है?।

उत्तर—इस दोहे का ऐसे अन्वय कर के अर्थ करना चाहिये कि कंथ सों जहां केलि करै सो वर थल जो श्रेष्ट थल नाश हुआ देख कें जो नारि सोच करै ताहि अनुसयना कहते हैं।

उदाहरण—कवित्त॥

आई ऋतु पावस अकास आठौं दिसन मैं,
सोहत स्वरूप जल धरन की भीर को॥
"मतिराम" सु कवि कदंबन की बास जुत,
सरस वढ़ावैं रस परस समीर को॥
भौंन ते निकस बृषभान की कुमार देख्यो,
ता समें सहेट को निकुंज गिर्‌यो तीर को॥
नागरी के नैंननि तैं नीर को प्रवाह वढ्यो,
निरख प्रवाह वढ्यो जमुना के नीर को॥८१॥

मूल अर्थ— पावस ऋतु जो वर्षा ऋतु आई और जल धरन की जो बद्दलन की भीर के स्वरूप आठों दिशा आकाश में शोभित भये और कदंबन की सुगंध सहित समीर जो पवन का स्पर्श रस को अधिक वढाने लगा तिस समय वृषभान की कुमरि जो श्री राधिकाजी ने भवन से जो घर से निकस कें देखा तव जमुना जल का प्रवाह वढा तव वहां थल तीर के सहेट का निकुंज गिरा ताको निरख के नायका के नेत्रन से जल का प्रवाह वढ़ा।

प्रश्न—सहेट का कुंज गिरा देख के नायका को दुःख होना था सो होचुका फिर जमुना जल का प्रवाह वढा देख कर नायका के नेत्रों मे जल

का प्रवाह किस लिये बढ़ा ?। उत्तर। " भौन ते निकस वृषभान की कुमारि देखो ता समें सहेट को निकुंज गिरयो तीर को " इस पद का यह अर्थ है कि श्रीराधिकाजू ने अपने भवनमें से निकस कें सहेट को देखो तिस समय कुंज का कोना जल तीर की ओर का गिर पड़ा फिर जमुनाजल का प्रवाह बढ़ने लगा तब तिस को देख कैं नायका को यह सोच हुआ कि अब संपूर्ण कुंज बहजायगी श्री जमुनाजलका प्रवाह और नायका के नेत्रों में जल का प्रवाह एक साथ ही बढा यातें सहोक्ति अलंकार।

दोहा।

सो सहोक्ति सब साथ ही, बरनें रस सरसाय।

इति अलंकार रतनाकर।

दोहा॥

ग्रीष्म ऋतु में देख कैं, बन में लगी दुबार।
एक अपूरब बात यह, मन मैं जरत गिवा सुनार॥८२॥

मूल अर्थ–सखी की उक्ति सखी से ग्रीष्म ऋतु में बन के भीतर दवलगी देखकर सुनार कहिये श्रेष्ठ नार है सो मन में जलने लगी यह एक अपूर्व बात भई। प्रश्न। यहां भी परकीया को श्रेष्ठ कैसे लिखा ?।उत्तर। यहां सखी से सखी का वचन है'सुनार' कहने का तात्पर्य यह है कि किसी नायका का प्रसंग एक सखी ने बताया है तब दूसरी सखीने कहा कि बन में दव लगी देख कें सुनार कहिये वह नार मन में जलने लगी। प्रश्न। ग्रीष्म ऋतु कहने का कौन तात्पर्य है ?। उत्तर। और सब ऋतु में धानों की खेती रहती है और ग्रीष्म ऋतु में अन्नादि नहीं रहे तब केवल बनही संकेत होता है सो जलने लगा तब वह बहुत दुखी हुई॥ दवलगने का कारण बन में, और जलना कारज नायका के मन में यहां कारण और कारज जुदे २ स्थान में है यातैं प्रथम असंगति अलंकार।

दोहा।

तीन असंगति काज अरु; कारण न्यारेठांव॥

इति भाषाभूषण।

अथ दूसरी अनुसयना लक्षणं॥

दोहा॥

होनहार संकेत को, जहां अभाव उर आन।
सोच करे जो नायका, बिय अनुसया बखान॥८३॥

मूल अर्थ— जो नारि होमहार जो होने वाले संकेत का जहां अभाव उर में आन के सोच करे ताको बिय कहिये दूसरी अनुसयना कहते हैं।

उदाहरण—सवैया॥

वेलन सौं लपटाय रही है, तमालन की अवली अति कारी॥
कोकिल केकी कपोतन के कुल, केलि करें जहां आनंद भारी॥
सोच करे ज़िन होहु सखी, "मतिराम,, प्रबीन सबै नर नारी॥
मुंजल बुंजल कुंजन में घन, पुंज सखी! सुसरार तिहारी॥८४॥

मूल अर्थ—वेलन से तमालन की अवली जो पंक्ति लपटाय रही है अति कारी जो बहुत स्याम है कोकिल के और केकी जो मोर के और कपोतन के कुल जहां केलि कर रहे हैं तहां भारी आंनद है हे सखी! जिन सोच करे जो मत सोच करे सुखी होहु तिहारी ससुरार में सब नर नारी प्रवीन हैं और मुंजल और विंजुल और सघन ऐसे जहां कुंजों के पुंज कहिये समूह हैं।

प्रश्न। सखी कहती है कि वहां के नर नारी प्रवीम हैं सो नर प्रवीन कहने से तो नायका को यह धीरज जताई कि तुम्हारे रूप गुण से आशक्त होवेंगे परन्तु नारी प्रवीन वहां की कही सो नारी प्रवीन होवेंगीं तो नायका की चवायन करेगी तव नायका को क्या फ़ायदा?। उत्तर। मतिराम प्रवीन सबै नर नारी इस पदका यह अर्थ है कि सखी नायका से सम्बोधन देकें कहती हैकि हे नारी। वहां के नर सब प्रवीन हैं अर्थात दूती नायका से कहती है कि तुम्हारी ससुरार में भी नारी प्रवीन हैं सो वहां भी बहुत सी दूती मिलजांयगी। नायका सासुरें जाती है

सब पीहर में संकेत स्थान थे छूटने से तो विषाद भाव का उदय यातें भाव उदय अलंकार ।

दोहा ॥

केलि करे मदमत्त जहां, घनमधुपन के पुंज ।
सोच न कर तव सासुरे, सखी ! सघन बन कुंज ॥८५॥

मूल अर्थ– हे सखी ! सोच न कर तेरे सासुरे में सघन कुंज हैं और घने मधुप जो भैारन के पुंज कहिये समूह मधु जो मकरंद से मस्त होकर के केलि करते हैं इस दोहे में भी ऊपर के कवित्त के मुवाफिक विषाद संचारी भाव का उदय यातैं भाव उदय अलंकार।

अथ तृतीया अनुसयनां लक्षणम् ॥

दोहा ॥

प्रीतम गये सहेट कौं, जाने हेत ही पाय ॥
तृतीया अनुसयना कही, हूं न गई पछिताय ॥८६॥

मूल अर्थ—नायक सहेट में गयो होय ताको नायका हेत जो कारण पाय कर जाने ताहि तीसरी अनुसयना कहते हैं होंन गई ऐसें पछिताये स्पष्ठ ।

उदाहरण—कवित्त ॥

सांझ समै "मतिराम,, काम बस बंसीधर,
बंसीवट तट पै बजाई जाय बांसुरी ॥
सुमर सहेट बृषभान की कुमारि उर,
दुख अधिकानो भयो सुख को बिनाशरी ॥
शरसौ समीर लाग्यो, शूलसी सहेली सब,
विषसो विनोद लाग्यो, बनसो निवासरी ॥
ताप चढ़ आई तन पीरी पर आई मुख,
आंखिन के ऊपर उमग आये आंसुरी ॥८७॥

मूल अर्थ— सांझ की समय मैं कामदेव के वश होकर वंशीधर कहिये कन्हैयाजी ने वंशीवट के तलें जाकर वंशी बजाई तब सहेट को याद कर कें वृषभान की कुमारि के हिय मैं दुख अधिक उपज्यो और सुख को नाश भयो और सरसौ जो तीर सो समीर लाग्यो, और शूल सी सर्व सहेली लागी, विष सो विनोद लाग्यो. और वन सो निवास लाग्यो, तन पै ताप चढ आई, और मुख पर पीलाई पड़ी आंखिन पै आंसू उमड़ आये।

प्रश्न । नायक ने काम वश होके वंशीवट के निकट जाय कर वंशी बजाई ताकौं सुन कर नायका विकल भई । प्रश्न दूसरा । नायका विकल भई तब उसी समय नायक के पास क्यों नहीं गई? । उत्तर । सांझ के समय नायका घर के कामके वश थी अर्थात् घर काम में रुक रही थी तातैं नायक के पास न जासकी और बंशी का शब्द सुन कर दुःखी हुई । नायकने अपने आनंद के लिये सांझ समय वंशीवट के ढिंग नायका से संकेत कर रक्खा था यह भला उद्यम किया था पर अकेला नायक संकेत में गया और नायका नहीं जासकी सो वंशी की आवाज को सुन कर संकेत समयकी नायका को सुधि हुई तब उसी भले उद्यम से बुराफल दुःख प्रगट हुआ। यातैं तीसरा विषम अलंकार ।

दोहा ।

और भलो उद्यम कियैं, होत बुरोफल आय ।

इति अलंकाररत्नाकर ।

दोहा ॥

छरी सपल्लव लाल कर, लखत माल की हाल ।
कुम्हिलानी उर साल धर, फूल माल ज्यौं बाल॥८८॥

मूल अर्थ— लाल के हाथ में सपल्लव हाल की जो तुरत की तोरी हुई तमाल की छरी लखकर बाल उर में साल धर के फूल माल ज्यों कुम्हिलानी ।

प्रश्न । तुरत के तोरे हुए फूलों की माला प्रफुल्लित रहती है फिर समय पाकर कुम्हिलाती है सो यहां समय नहीं लिखा । उत्तर । ऐसा अर्थ करना कि तमाल की डाल की सपल्लव छरी लाल के कर में लख के उर साल कहिये हिये में साल धर फूलमाल ज्यों बाल कुम्हिलानी सो

धर कहिये ज़मीन पर परके फूलमाल कुम्हिलावे तैसे बाल कुम्हिलानी फूलमाल उपमान नायका उपमेय ज्यों बाचक कुम्हिलानी धर्म यातें पूर्ण-उपमा अलंकार ।

दोहा ।

उपमेय रु उपमान जहां, सो हैं धर्म समान ।
उपमा बाचक पद मिलै, उपमा होय प्रमान ।

इति अलंकार रत्नाकर ।

अथ मुदिता लक्षणं ॥

दोहा ॥

चित चाही सुन बात लख, मुदित होय जो बाल ।
तासौं मुदिता कहत हैं, कबि "मतिराम,, रसाल ॥८९॥

मूल अर्थ—चित चाही बात को सुन कैं और लख कैं जो बाल मुदित जो आनंद युक्त होती है ताकों रसाल कहिये रस के घर ऐसे जे कबि हैं ते मुदता कहते हैं ।

उदाहरण कवित्त ॥

मोहनतैं कछु द्योसन तैं,
"मतिराम,, बढ्यो अनुराग सुहायो ॥
बैठी हुती तिय माय के मैं,
सुसरार को काहू संदेसो सुनायो ॥
नाहके ब्याह की चाह सुनी हिय,
मांहि उछाह छबीली के छायो ॥
पौढ रही पट औढ अटा,
दुख को मिसलै सुख बाल छिपायो ॥ ९० ॥

मूल अर्थ—मोहन सौं कितनेक दिनों में अनुराग जो स्नेह बढ कर सुहायो है वह तिय जो नायका माइके कहिये पीहर में बैठी थी तहां सुसरार जो सासरे से किसी ने आय कर नायका सैं तेरे पति के विवाह

की चाह है यह संदेस कहा सो सुनि कें उस छबीली के हिय में उछाह छागया जब दुःख का मिस लेकें अटारी पै पट ओढकर पैाढ रही और उस सुख को छिपाया ॥ इस कवित्त में यह प्रश्न था कि नायका पीहर में बैठी थी तहां सासुरे सें किसी ने आय के संदेसा सुनाया तब उस संदेसा सुनानेवाले ने तो नायका से यह नहीं कहा कि तेरे पति के पुनर्विवाह की अभिलाषा है और नायका ने नाह के विवाह की चाह कहां से सुनी ? परन्तु मैंने अन्वय कर के पहिले ही स्पष्ट अर्थ लिख दिया है इस लिये यहां प्रश्न नहीं ठहरता है ऐसे और भी बहुत से कवित्तों में और सवैयों में और दोहों में प्रश्नोत्तर थे वे भी स्पष्ट अर्थ करके मिटा दिये और बड़े २ प्रश्नोत्तर लिखे। हैं यहां युक्ति कर के सखी गन से नायका सुख को छिपाती है यातैं छेकापन्हुति अलंकार।

दोहा।

छेकापन्हुति जुक्ति कर, परसों बात दुराय।

इति भाषाभूषण।

दोहा ॥

बिछुरत रोवत दुहुन कौ, सखी यह रूप लखैन।
दुख अंसुवा पिय नैन हैं, सुख अंसुवा तियनैंन ॥६१॥

मूल अर्थ—सखी से सखी वचन, बिछुरे हुए दोऊ रोवत हैं तिन का यह रूप है सो ऐसा और न देखा। दुख के आंसू तो पिय के नैंनन में हैं और सुखके आंसू तिय के नैनन में हैं ये किसी और से आशक्तथीं बिछुरती समय नायक को दुख और नायका को सुख अर्थात् नायका के हृदत में कपट यह अन मिलते को संग है यातें विषम अलंकार :—

दोहा।

विषम अलंकृत तीनि विधि, अन मिलते को संग।

इतिअलंकार रतनाकर।

दोहा।

परकीया के भेद जुत, वरन्यो द्वितीय विधान।
ग्रन्थ मनोहर सिंह हित, निज मति कवि हरिदान ॥२॥

इति परकीया प्रकरण।

अथ गनिका प्रकरण ॥

गनिका लच्छण ॥

दोहा ॥

धनदे जाके संग मैं, रमें पुरुष सब कोय ।
गूंथन को मति देख कैं, गनिका जानहु सोय ॥६२॥

मूल अर्थ—सब कोई पुरुष धन देकर जाके संग रमते हैं ता नायका को ग्रंथन का मत देख कें गनिका कहिये । स्पष्ट ।

उदाहरण—कवित्त ॥

लाल कर चरन रदन छद नख लाल,
मोतिन की रदन रही है छबि छाय कैं ॥
कबि "मतिराम,, मुख सुब्बरन रूपरहि,
रूप खान मुसकानि शोभा सरसायकैं ॥
आनन कौं इंदु जान आंखैं अरबिंदमान,
इंदरा रजनि दिन रहत सुभाय कैं ॥
नायक नवल क्यौं न देय धन मन ऐसे,
सुतनु कौं सुतनु अतनु धन पायकैं ॥६३॥

मूल अर्थ—सखी वचन सखी से, लाल जो अरुण हैं जाके कर जो हाथ और चरण जो पग और रदन जो दांत तिनको छदन जो ढांकनेवाले ऐसे रदनच्छद नाम होठ सो भी लाल है और दांतों से मोतियोंकी आभा दरसती है और मुख सुवरन रूप रहे सो मुख में सुवरन जो अच्छे वरन अक्षरों का स्वरूप रहता है अर्थात् अच्छे बचन बोलती है और स्वरूपकी खान है मुसकानि में शोभा बढाती है आनन जो मुख चन्द्रमा समान है और जाके नेत्र कमल से हैं इंदरा जो लक्ष्मी ताके समान रातदिन शोभा-यमान है । चौथे पद का अर्थ अन्त में करैंगे ।

दूसरा अर्थ यह है कि लालनाम मानिकका है सो सखी नायकासे कहती है कि तेरे हाथ, पग, होठ और नख इन अंगों की ललाई तो मानिक को रद्द करती है सो मानिक नायक के पास होगा तो तेरे अंगों की ललाई से दब जायगा और मोतियों की छबि तेरे दांतों से छिपती है और सुवर्ण तेरे मुख के श्रेष्ट वर्ण से छिपता है और तू रूप की खान है सो रूपे की खान तेरे मुसकानि की शोभा से दबती है और चंद्रमा लक्ष्मी का भाई है और कमल लक्ष्मी का सदन है सो तेरे मुख को चंद्रमा और तेरे नेत्रों को कमल जान के रात दिन तेरे पास स्वभाव से लक्ष्मी रहती है। चैाथे पदका अन्वय ऐसे सुतन नवल नायक सुतन अतनु धन पाय कैं मन धन क्यों न देय ? ऐसे सुतन को कहिये पहिले तीन पद में कहे तैसे श्रेष्ट तन को नवीन नायक श्रेष्ट तन और अतन जो कामदेव और धन पायकें मन और धन क्यों न देय ? अर्थात् देगा। नायका के दांत मोतियों के समान और मुख कंचन के समान और आनन चंद्रमाके समान और नेत्र कमलके समान इस प्रकार बहुत गुण करकैं नायका का बहुत विधि वर्णन किया यातें प्रथम उल्लेख अलंकार :—

दोहा।

बहु विधि बरनैं एक को, बहु गुन को उल्लेख ॥

इति अलंकार रतनाकर।

दोहा ॥

लसत गूजरी ऊजरी, विलसत लाल इजार।
हियै हजारनि के हरै, बैठी बाल बजार ॥६४॥

मूल अर्थ—ऊजरी नाम चमकीली गूजरी नामक हाथ का गहना है और लाल इजार जो कसूमल पाइजामा है बाल बजार में बैठ कर हजारों का मन हरती है।

द्रव्यमान मनुष्यों का हिया हरना और जो द्रव्य दे तिन सें क्रीडा करना यह सामान्या नायका की स्वाभाविक रीति है यातें यहां स्वभावोक्ति अलंकार ॥ इति सामान्या प्रकरण ॥

———

अन्य संभोगितादि भेद ॥

दोहा ॥

अनसौं रति हुय दुःखिता, प्रेम गर्विता जान ।
रूप गर्विता और पुनि, मानवती उर आन ॥६४॥

मूल अर्थ—अन्य-संभोग-दुःखिता, प्रेम-गर्विता, रूपगर्विता और मानवती इन चार नायका का अब क्रम से वर्णन आवे गा । स्पष्ट ।

अथ अन्य-संभोग-दुःखिता लक्षणम् ॥

दोहा ॥

निज पति के रति चिन्ह जो, लखे और तिय देह ।
अन संभोग दुःखिता, करै पेच सिर तेह ॥६५॥

मूल अर्थ—निज पति के जो अपने पति के रति चिन्ह और स्त्री के शरीर पर देख के ताके सिरतेह नाम क्रोध करै ताकौं अन्य सुरत दुःखिता कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

याही कौं पठाई भलो काम कर आई बडी,
तेरी ये वड़ाई लखे लोचन लजीले सौं ॥
सांची क्यों न कहो कछु मोकों किधौं आपहिकौं,
पाइं बगसीस लाई वसन छबीलेसौं ॥
"मतिराम,, सुकवि संदेसो अनुमानियत,
तेरे नख सिख अंग हरष कटीलेसौं ॥
तू तौ है रसीली रस बात न बनाय जानैं,
मेरे जान आई रस राखकैं रसीले सौं ॥६६॥

मूल अर्थ—नायका की उक्ति दूती सों भलो काम कर के आई तुझे इसीलिये पठाई जो भेजी थी तेरी यह बड़ी बड़ाई लजीले लोचन से जो

नेत्रन से दीखती है मुझे सांच क्यों न कहती है ? छबीले जो छबि वाले सें बगसीस पाय कर वस्त्र मेरे लिये लाई है किधौं तेरे ही लिये लाई है ? अनुमान करने से संदेसा जो धोखा उपजता है तेरे नखतें शिख पर्य्यन्त कटे हुए अंग से हर्ष उपजता है और तूं रस की बातें बनाय जानती है और रसीली है सो मेरे जानने में रसीले जो श्रीकन्हैयाजी से रस राख कर आई है।

प्रश्न–नायका ने दूती को नाकय के पास भेजी थी और वह दूती पीछी आई है तब नायका कहती है कि तैं रसीले से रस राख कर आई सो यह भला काम किया और यह तेरी बड़ी बड़ाई है सो लजीले लोचनें से दीखती है सो ऐसा कहने से नायका कुछ दुःखित नहीं जानी जाती है और अन्य-संभोग-दुःखिता वह होती है जो निज पति के रति चिन्ह और स्त्री के शरीर पर देखकर दुःखी होती है। उत्तर। इस कवित्त में विपरीत लच्छना करके नायका के कहने का विलोम आशय निकलता है याही को पठाई भलो काम कर आई कहिये तेरे शरीर में जो कामदेव था तिस का तूं भला करकें आई लजीले लोचन जो दूती में लाज नहीं होसी है इसलिये नायका कहती है कि तेरे निर्लज्ज खिसौंस सहित नेत्रों से तेरी बड़ी बुराई दीखती है और सम्पूर्ण वही अर्थ है। नायका ने दूती को नायक के बुलाने के लिये भेजी थी सो दूती नायक सें क्रीड़ा करकें आई सो रति चिन्ह देख के मायका नें अपने नायक से दूती की क्रीड़ा जानी। यहां दूती के शरीर पर रति चिन्ह कारज तातें क्रीड़ा कारण को नायका जानगई यातें अनुमान अलंकारः—

कारण जहं लहिये लह काज। अनुमान अलंकृत यह साज।

इति अलंकार रतनाकर।

दोहा ॥

कहत तिहारो रूप यह, सखी पैंड़ को खेद।
ऊंची लेत उसास है, कसित सकल तन स्वेद॥९७॥

मूल अर्थ—हे सखी ! तिहारो यह रूप पेंड जो रत्ता की खेद को कहता है ऊंची उसास लेती है और सकल शरीर पर पसीना हो रहा है यहां भी पूर्वोक्त कवित्त के तुल्य कारण से कारण जाना गया यातें अनुमान अलंकार । इति ।

दोहा ।

तिलक मनोहर सिंह हित, तृतीय विधान बनाय ।
गनिका दुख अन सों रता, जाहिर कही जनाय ॥३॥

इति अन्य-संभोग-दुःखिता प्रकर्ण ।

अथ प्रेम गर्विता लक्षण ॥

दोहा ॥

निज नायक के प्रेम कौं, गरब जनावै बाल ।
प्रेम गरविता कहत हैं, तासौं परम रसाल ॥९८॥

मूल अर्थ—निज पति के प्रेम को जो नायका गरव जनाती है ताको परम रसिक जन प्रेम गर्विता कहते हैं, स्पष्ट ।

उदाहरण—कवित्त ॥

मेरे हंसे हंसत है मेरे बोले बोलत है,
मोही कौ जानत तन मन धन प्रानरी ! ॥
कवि मतिराम भौंह टेढ़ी किये हांसी हू मैं,
छोड़ देत भूषन बसन खान पानरी ! ॥
मोतैं प्रान प्यारी प्रान प्यारे कें न और कोऊ,
तासों मान कीजे कहो काहि को सयानरी! ॥
मैं न कामनी के मैं न काहु के न रूप रीझे
मैंन काहु के सिखायें आनों मन मानरी! ॥९९॥

मूल अर्थ—मेरे हंसने से हंसता है और मेरे बोलने से बोलता है और तन, मन से धन और प्रान सब मुझे समझता है और हंसी में भी

जो मैं भौंह चढाती हूं तो भूषन जो गहना और बसन जो वस्त्र और खान जो खाना और पान जो पीना सब छोड़ देता है। प्रान प्यारे कें मुझ सी प्रान प्यारी और कोई भी नहीं है तासों रिस करिये कहो यह कौनसा सयानप है? मैंन-कामनी सो कामदेव की स्त्री को आदि देकें किसी के रूप में नहीं रीझते हैं और मैं भी किसी के कहने से मन में मान नहीं आनोंगी।

प्रश्न—नायका के हंसने से हंसता है और बोलने से बोलता है तो इसमें उदासीन भाव पाया जाता है क्योंकि जिससे बहुत प्रीति होती है तो उससे आपही उपज कर हंसता बोलता है और जिससे कम स्नेह होता है उसके भी बोलने से तो बोलता है।

उत्तर—इसका यह अर्थ है कि नायका कहती है कि जिससे मैं हंस कर बोलती हूं उससे वह भी बोलता है और जिस से मैं नहीं बोलती हूं उससे नहीं बोलता है। और। प्रश्न। हांसी में भी भौंह टेढी करती हूं तो भूषन और वस्त्र और खाना और पान सब छोड़ देता है सो भूषन और वस्त्र धारन करने की और समय होती है और खान पान की और समय होती है सो हांसी में भौंह चढाती है तब सब दिन भर भौंह टेढी काहे को रखती है ?

उत्तर—इसका यह अभिप्राय है कि मैं हांसी में भी जब भौंह चढाती हूं तब वह दीवानासा होजाता है सो दीवाने को सब बात का ज्ञान नहीं रहता है नायका कहती है कि मुझ से प्रान प्यारे कें और प्रान प्यारी कोई नहीं है और तन और मन और धन और प्रान मुझे जानताहै और मैं हंसी में भी भौंह चढातीहूं तब खान और पान और भूषन और बसन सब छोड़ देता है सो यहां नायका को नायक के प्रेम का अति गर्व है यातें बचन वैशिष्ट ध्वनि करके नायका के बचन सें यह बात पाई गई कि मेरी समान नायक को प्रिय मैं ही हूं और दूसरा कोई भी पदार्थ मेरी समान नायक को प्रिय जहांन में नहीं है यातें अनन्वयाअलंकार।

दोहा।

उपमे रु हि उपमान जब, कहत अनन्वय ताहि।
तेरे मुख की जोर कौ, तेरे ही मुख आहि ॥१॥

इति अलंकार चंद्रिका।

दोहा ॥

औरन के पाइन दियो, नायन जावक लाल!
प्रान पियारी रावरी, परखत तुम्हें रसाल ॥१००॥

मूल अर्थ— हे लाल! और नायकन के पाइन के नायन ने जावक लगाया और रावरी कहिये तुम्हारी निज प्राण प्यारी है सो तुम्हारी परीक्षा करती है।

प्रश्न—वह नायका नायक की कौनसी परीक्षा करती है? । उत्तर। यह परीक्षा करती है कि नायन के पास से इलता नही लगवाकर नायक के प्रेम की परीक्षा करती है कि नायक अपने हाथ से इलता लगावे या नहीं यह परीक्षा करती है ॥ सखी नायका से कहती है कि तुम्हारी प्रान प्यारी ने नायन के हाथ से अपने पाओं में जावक नहीं लगवाया है और तुम्हारी परीक्षा करती है कि नायक मेरे पाओं में अपने हाथ से जावक लगावे या नहीं लगावे यह नायका के मन में दुबिधा है यातें विकल्प अलंकार जहां निश्चयात्म होने में दुबिधा रहती है तहां विकल्प अलंकार होता है।

दोहा।

है विकल्प यह कै वहे, यह बिधि को बरतंत।
कर है दुख को अंत अब, जम के प्यारो कंत ॥ १ ॥

इति अलंकार रतनाकर।

अथ रूप गर्विता लक्षण।

दोहा।

जाकें अपने रूप को, अति ही होय गुमान।
रूप गरविता कहत हैं, तासौं परम सुजान ॥१०१॥

मूल अर्थ—जा नायका कैं अपने रूप का ही जो हृदय में बहुत गुमान होय ताकौं परम सुजान रूप गर्विता कहते हैं ॥स्पष्ट॥

उदाहरण—सवैया॥

सोय रही रत अंत रसीलि, अनंत बढाय अनंग तरंगन ॥
केसर खौर रची तिय के तन, प्रीतम और सुवास के संगन॥

जाग परी 'मतिराम, सरूप, गुमान जनावत भौंहके भंगन॥
लालसोंबोलत नाहिंनबालसु, पोंछत आंख अंगोछत अंगन१०२

मूल अर्थ— रत के अंत रसीली जो नायका सोय रही अनंत जो जाको अंत नहीं अनंग जो काम की तरंगें बढाय कें प्रीतम ने तिय के केसर की खोर करी और शरीर,कें सुगंध लगाई इतने समय में वह जाग पड़ी तब लाल से जो नायक से नहीं बोली और आंख को जो नेत्रन को और शरीर को पोंछने लगी और भौंह चढा कर गुमान जताया।

प्रश्न—इसमें रूप गर्वितापन कैसे जाना गया ?।उत्तर। रूप का गर्व ऐसें जाना गया कि इस में यह गर्व है कि केसर का रंग मेरे रंग के समान नहीं है और सुगंध मेरे शरीर की सुगंध के समान नहीं है सो मेरी सहज शोभा नायक अंग राग लगा कर विगाड़ता है यह समझ कर नायका ने गर्व किया यातें रूप गर्विता हुई ।। नायका के चित्त में हर्ष बढाने के लिये नायक ने अपने हाथ से नायका कें केसर की खोर कीनी यह नायक ने भला उद्यम किया तातें नायका दुःखी हुई यह बुरा फल हुआ यातें तीसरा विषम अलंकार ।।

दोहा ॥

कैसें आऊं हूं वहां, है जित नंद किशोर ।
दिन हूं में मुख चंद्र को, लख ललचात चकोर॥१०३॥

मूल अर्थ— जहां नंदकिशोर कन्हैयाजी हैं वहां हूं किस रीति से आऊं? मेरे मुख चंद्र को देख कें दिन में भी जो निश्चय करके चकोर ललचाते हैं।

प्रश्न—दिन में चकोर के ललचाने से नायका कें स्वरूप का गर्व तो जाना गया पर चकोर के ललचाने से नायक के पास आने में नायका कें कौनसा विघ्न होता है ? । उत्तर। नायका की उक्ति से दिन में भी मेरे चंद्र मुख का प्रकाश रहता है सो रात्रि में बहुत प्रकाश होगा मैं गुप्त नहीं रहसकती हूं यातें नायक को मेरे पास लेआउ दिन प्रति दिन बाधक है तौभी मुख चंद्र को चकोर ललचाते हैं यातें तीसरी विभावना ।

दोहा ।

प्रति बाधक के होत ही, कारज पूरन मान ।।

इति अलंकार चंद्रिका ।

अथ मानवती लक्षण ।

दोहा ॥

करे ईर्षा से जु तिय, मन भावन से मान ।
मानवती तासों कहत,कवि "मतिराम,,सुजान ॥१०४॥

मूल अर्थ– जो नायका मन भावन से जो नायक से किसी ईर्षा कर कें मान करे ताको परम सुजान हैं ते मानवती कहते हैं स्पष्ठ अर्थ ।

उदाहरण--सवैया ॥

सो मन मोहन होत लटू मुख, जाके भटू! बिधु की छबि छाजै॥
खोल कें नैनन देखैं जो नेक तो,स्याम सरोज पराजय साजै॥
जो बिहसै मुख सुंदर तो "मतिराम,, बिहान को बारज लाजै॥
बोलेअलीमृदु मंजुल बोल तो,कोकिल बोलनको मद भाजै१०५

मूल अर्थ–जाको मुख चंद्रमा समान है ऐसा मन मोहन जो नायक है सो लटू होत है कहिये आधीन होत है भटू जो हे सखी । तें नेत्र खोल कें नेक जो थोरासा निहारे तौ श्याम सरोज जो नीलोत्पत कमल भी पराजय होते हैं जो सुन्दर मुख से कहिये अच्छे मुख से थोरीसी विहंसै कहिये हंसे तो प्रातः समय के भी कमल लज्जित होवें फिर कोमल और सुन्दर बचनें से जो तें बोले तो कोयलें के बोलने का भी गर्व दूर होय ।

प्रश्न–यहां सखी के बचन से जाना जाता है कि नायका हंसकर बोलती नहीं है पर लाज से नहीं बोलती है या क्रोध से नहीं बोलती है यहां इस प्रकार संका है कि जाने सखी क्रोध को छुड़ाती है या मान को छुड़ाती है? । उत्तर । जो नायका नायक से नही बोलती तो जाना जाता कि लाज से नहीं बोलती पर यहां सखी से नही बोलती है इस से जाना जाता है कि नायका क्रोध युक्त है यातें माननी स्पष्ठ ।

यहां श्याम सरोजादिक उपमान ते नेत्रादिक उपमेय से अनादर होता है यातें तीसरा प्रतीप :—

दोहा ।

अन आदर उपमेयतें, जब पावै उपमान ।

इति भाषाभूषण ।

दोहा ॥

सुन चित दै मन माननी ! बिन अपराध रिसांन ।
नेह जरावनको महा, दीप जोति जिय जान ॥१०६॥

मूल अर्थ—सखी वचन नायका से मेरी बात को तू मन चित दे के सुन तू बिना अपराध रिस करती है सो रिस प्रीति को जलाने के लिये दीपक की बड़ी ज्वाला सी है ।। विनाही अपराध रिस करना यातें प्रथम विभावना अलंकारः—

दोहा ।

होत छः भांति विभावना, कारन बिनही काज ।

इति अलंकाररतनाकर ।

दोहा ।

गर्वितादि के भेद सब, नृपति मनोहर हेत ।
वेद विधान वनाय कैं, बरन्यें प्रश्न समेत ।।४।।
इति गर्विता प्रकरण ।

अथ दस नायकाओं के नाम ॥

दोहा ॥

प्रोषित-पतिका, खंडिता, कलहंतरिता जान! ।
विप्र—लब्ध, उत कंठिता, वासुकसज्या मान! ॥१०७
स्वाधिनपतिका, कहत कवि, अभिसारिका सुजान ।
कही प्रवच्छति प्रेयसी, आगत पतिका बाम ॥१०८॥

दसों अवस्था भेद सौं, दसों नायका जान ।
तिनके लच्छन लच्छ अब, आछे कहूं बखान॥१०९॥

मूल अर्थ—प्रोषित-पतिका १, खंडिता २, कलहंतरिता ३, विप्रलब्धा४ उतकंठिता ५, वासुकसज्या ६, स्वाधीनपतिका ७, अभिसारिका ८, प्रवच्छत पतिका ९, आगतपतिका १०, कवीश्वरों ने दश नायका कही हैं तिन के लच्छ और लच्छन अब मैं अच्छे बखान करके कहता हूं ।

अथ मुग्धा-प्रोषित-पतिका लच्छण ॥

दोहा ॥

जाको पिय परदेश मैं, बिरह विकल तिय होय ।
प्रोषित-पतिका नायका, ताहि कहत सबकोय॥११०॥

मूल अर्थ—जिस नायका को पति बिदेश में होय और वह विरह करके विकल होय ताकों सब कोई प्रोषित पतिका कहते हैं । स्पष्ट ।

मुग्धा प्रोषित-पतिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

बार कितेक सहेलिन के कहि, कैसेहु लेत न बीरी संवारी॥
राखत रोक कहै"मतिराम,,चलैं अंसुवा अंखियान तैं भारी॥
प्रान पियारो चल्यो जब तें, तबतैं कछु औरही रीति निहारी॥
पीरी जनावत अंगन मैं, कहि पीर जनावत काहे न प्यारी? १११

मूल अर्थ—कई वार सहेली कहती है तो भी कैसे हूं बीरी संवार कें नहीं लेती है, नेत्रन से भारी जो बहुत आंसू चलते हैं तिन को रोक कें राखती हैं, जब से प्रान पियारो जो नायक चल्यो है तब से कुछ औरही रीति देख पड़ी है अंगन में पीली होगई है तो भी हे पियारी ! तू कहिकें पीर क्यों नहीं जनाती है ? ।

प्रश्न—यहां प्रोषित पतिका तो स्पष्ट है पर मुग्धा और मध्या दोनो समान जानी जाती हैं । उत्तर । सखी से भी पीर नही जनाती है यातें

मुग्धा। दूसरा प्रश्न। कैसे हूं बीरी न लेत इतनाही कहना जुरूर था फिर संवारी क्यों लिखा ?। उत्तर। नायका चित्रनी है सो चतुराई से संवार कर वीरी लेती थी सो नायक के विरह से चतुराई भूल गई। तीसरा प्रश्न। आंख से भारी आंसू चलते हैं तिन को रोक के रखती है सो भारी कहिये बडे आंसू चलते हैं वे रोकने से नहीं रहसक्ते हैं। उत्तर। चलै अंसुवा अंखियान ते भारी। अर्थ। री कहिये लाज सहित आंखों में आंसू चलने की भा कहिये झलक ताकों रोक के राखती है। नायक विदेश गया है तब तैं नायका की और ही चेष्टा हो गई जहां और अव्यय आता है तहां भेदकातिशयोक्ति अलंकार होता है :—

दोहा।

अतिशयोक्ति भेदक सबै, यह बिधि बरनत जात।
औरे हंसबो देखबो, औरै याकी बात ॥१॥
औरें ओप कनीन कन, गनी धनी सिरताज।
मनी धनी के नेह की, बनी छनी पट लाज ॥२॥

इति अलंकाररतनाकर।

दोहा ॥

पिय वियोग तिय दृग जलधि, जल तरंग अधिकाय।
वरुनि मूल बेला परस, बहुर्‍यो जात बिलाय ॥११२॥

मूल अर्थ—पिय के वियोग से तिय के नेत्र रूपी जलध जो समुद्र से जलकी तरंगे अधिकाती हैं सो वरुनी जो भांपनी के मूल से स्पर्श होकर वे लहरें विलाय जाती हैं।

प्रश्न—यहां भी मुग्धा और मध्या समान जानी जाती हैं। उत्तर। नायक के विरह से आंसू चलते हैं तिनको नेत्रों में ही रोक लेती है और किसी सखी से कुछ दुख नहीं जताती है यातें मुग्धा। दूसरा प्रश्न। तरंग अधिकाय पहिलें कहके मूल वेला कही सो तरंग और वेला को एक अर्थ तातें पुनरुक्ति। उत्तर। ऐसे अर्थ करना चाहिये पिय के वियोग से नेत्र रूप समुद्र से जलकी तरंग अधिकाती है जैसे मूल वेला नाम औषधि है

परसकें समुद्र की लहरें बिलायजाती हैं तैसे बरुनी नाम भांपनियों के मूल से परसकें नेत्रों के जलकी लहरें बिलाती हैं। समुद्र उपमान और नेत्र उपमेय को एकता करकें वर्णन किया यातें रूपक और प्रसिद्ध समुद्र जुदा नहीं रक्खा यातें अभेद और उपमेय उपमान की समानता है यातें सम अभेद रूपक ।

अथ मध्या प्रोषित पतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

चंद के उदोत होत नैंन चंद्र क्रांत कंत,
छायो परदेश देह दाहन दगतु हैं ॥
उसीर गुलाब नीर कर्पूर परसतु,
बिरह अनिल ज्वाल ज़ालन जगतु हैं ॥
लाज ते कछु न जनावे काहू सखी हू सौं,
उरको उदार अनुराग उमगतु हैं ॥
कहा करों? मेरी बीर! उठी है अधिक पीर,
सुर भी समीर सीरो तीर सौ लगतु हैं ॥११३॥

मूल अर्थ—कांत परदेश है तब तैं चंद्रमा के उदय होते ही चंद्रिका जो किरनें तिनकी कांति जो उजाला छाय कर नेत्रन को और शरीर को दगत है जो जलावत है उसीर खसका और गुलाब का जो जल और कपूर ये स्पर्श होकर विरह अनल ज्वाला को जगावत हैं। हृदय का उदार अनुराग जो सनेह उमगत है तो भी किसी सखी हू से कुछ भी नहीं जनाती है और कहती है हे सखी! कहा करूं अधिक पीर उठी है यातें शीत मन्द सुगंध पवन तीर के समान लगने सें प्रोषितपतिका और मध्या सें लाज और काम समान होता है सो उद्दीपन सामग्री से दुखी होती है इससे काम और किसी से नहीं जनाती है इससे लाज समान होकर मध्या-प्रोषित-पतिका जानिये ।

प्रश्न—देह दाहन दगतहै सो देह में दाह नही है तब कहा दगतहै?। उत्तर। देह दाहन कहिये दहन हुई है जिन की देह ऐसो कामदेव सो

दगत है । दूसरा प्रश्न । ज्वाल जालन जगत है सो ज्वालकी ज्वाला नहीं है तब कहा जगताहै? । उत्तर । बिरहाग्नि ज्वाला जलावनको जगातीहै। चन्द्रमा कर्पूर इत्यादि शीतल पदार्थ हैं ते नायका को तपायमान करते हैं यहां शीतलता कारण से विरुद्ध कार्य नायका को तपायमान करते हैं याते छटी विभावना :-

दोहा ।

काहू कारण से जबै, कारज होय विरुद्ध !

इति अलकाररतनाकर ।

दोहा ॥

बहू! दूबरी होत क्यों,? यौं जब बूझो सास ।
उत्तर कढ्यो न बाल मुख, ऊंचे लेत उसास ॥११४॥

मूल अर्थ—सासु ने ऐसे पूछा हे बहू!दूबरी क्योंहोती है? जब नायका ने उत्तर नहीं दिया और मुख से ऊंचा उसास लिया सो विरह की विथा से दूब्री होती है । याते प्रोषित-पतिका और लज्जित होके उत्तर नहीं दिया और काम से दुखी होके ऊंचा उसास लिया यामें लाज काम सम।न हैं याते मध्या ॥ यहां लाज और विषाद संचारी भाव की संधि है याते भाव संधि अलंकार ।

अथ प्रौढा प्रोषित-पतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

विरह तिहारे लाल! विकल भई है बाल ,
नींद, भूख, प्यास, सगरी बिसारियतु है ॥
चौरी कैसी बात चंद्रमा हूते छिपाय जात,
वसन न तानकें बयार बारियतु है ॥
कहै "मतिराम,,कला धर कैसी कला,
छीन जीवन विहीन मीनसी निहारियतु है ॥

बार २ सुकमार फूलन की मार ऐसी,
मार के मरोरन मरोर मारियतु है ॥११५॥

मूल अर्थ—सखी बचन नायक सों ॥ हे लाल ! तिहारे विरह से वह बाल बिकल हो रही है, नींद, भूख और प्यास सब भूल गई है और चोरी की बात के समान चन्द्रमा से छिप कर रहती है और बसन तान कैं पवन से भी बची रहती है और कला हीन चन्द्रमा के समान हो रही है और बारंवार वह सुकमार जो नायका फूलन की मालाके समान है ताकें मार जो कामदेव सो मरोर कें मारता है यामें सब प्रकार से प्रीति की अधिकता है यातें प्रौढा और बिरह विकलता से प्रोषितपतिका है ॥ यहां फूलन की माला उपमान और नायका उपमेय 'सी' बाचक सुकुमारता धर्म इन चारों अंग कर के उपमा पूर्ण है यातें पूर्णोपमा अलंकार ।

दोहा ॥

चंद्र किरन लगि बाल तन, उठति आंच यौं जाग ।
दुपहर दिन कर कर परसि,ज्यौं दरपन मैं आग ११६

मूल अर्थ—दुपहरके दिन कर की जो सूर्य की कर जो किरन के स्पर्श से अग्नि चस्मा से जैसे बासदे प्रगट होता है ऐसें बाल जो नायका के तन में चन्द्रमा की किरन से आंच जग उठती है ॥ चन्द्रमा की किरन और नायका उपमेय सूरजकी किरन और काच उपमान अग्नि प्रगट होना साधारण धर्म यों बाचक इन चारों अंग से उपमा पूर्ण है यातें पूर्णोपमा अलंकार ।

अथ परकीया प्रोषित–पतिका उदाहरण॥

सवैया ॥

ह्यां मिल मोहनसों "मतिराम,,सु केलि करी अति आनंदवारी॥
तेई लता द्रुम देखत दुःख, चले अंसुवा अंखियान ते भारी॥
आवत हौं जमुना तट कौं, नाहिं जान परे बिछुरे गिरधारी॥
जानत हौं सखी आवन चाहत, कुंजनतै कढि कुंजविहारी ११७

मूल अर्थ—मोहन से जो नायक से मिल के यहां भारी आनंद से केलि कीनी है तेई द्रुम और लता देखने से दुःख उपजता है और नेत्रन से वहुत आंसू चलते हैं यहां जमुना की तट पर आती हूं तव गिरधारी का जुदा होना नही जान पड़ता है सो हे सखी । ऐसे जानती हूं कि इन कुंजनतें निकल कें कुंजविहारी जो श्याम मिलेंगे जमुना के तट बन में संकेत था तिस को देख कर नायका विलाप करती है सो वन संकेत से परकीया और दुःखी होने से प्रोषितपतिका है ।

प्रश्न—यहां मोहन से मिल कें अति आनंद से केलि करी यह तो ठीक परंतु "वारी" शब्द क्यों लिखा ? दूसरा प्रश्न । यहां जमुना की तीर आने से गिरधारी का वियोग नहीं जान पड़ता है सो वियोग नहीं जान पड़ता है तव पहले लिखा है कि तेई वन के बेल वा द्रुम देख कर दुःख होता है और नेत्रों से आंसू चलते हैं सो वियोग ही जान पड़ता है तो दुःख काहे का होय? और आंसू क्यों चलते हैं ? । उत्तर पहिले प्रश्न का । यहां मोहन से मिल कें अति केलि करी आनंद वारी कहिये यह नंदजी की वारी है ताके द्रुम लतान के देखने से दुःख होता है । दूसरे प्रश्न का उत्तर । जमुना की तीर पर आने से गिरधारीजी बिछुरे हैं सो जान नही परत कहिये कुछ सुध नहीं रहे । और प्रश्न। नायका कहती है कि हे सखी । मैं जानती हूं कि कुंजन सें कढि के कुंजविहारी आना चाहते हैं सो नायका को यह प्रतीत होती है कि कुंजन तें कढि कें कुंज विहारी आना चाहते हैं सो पहिले दुःख के आंसू काहे को लिखे ? ।उत्तर। हे सखी । मैं जानती तो यहां आना नहीं चाहती अब इन कुंजन तें कढि यह विहार की कुंज है नायका कों वन सें आती है तव भूत काल की वात प्रत्यक्ष दिखलाई देती है यातें भाव अलंकार ॥

दोहा ।

भाव जो भूत भविष्य को, प्रत्यक्ष जु कहै वनाय ।
वृंदावन में आजु वह, लीला देखी जाय ॥१॥

इति अलंकाररत्नाकर ।

दोहा ॥

लाज छुटी गेह्व छुट्यो, सुख सौं छुट्यो सनेह।
सखि कहियौ वा निठुर सौं, रही छूटबो देह ॥११८॥

मूल अर्थ– लाज, घर, सुख, और स्नेह ये सब छूटे हैं सखी वा निठुर से जो निर्दई से कहियो अब तो देह जो शरीर छूटना रहा है।

प्रश्न—नायका कहती है कि स्नेह छूटा फिर सनेह छूटने पर क्यों दुःखी होती है ?। उत्तर। ऐसे अर्थ करना चाहिये कि सनेह के सुख से लाज और घर छूटा अर्थात् नायक के स्नेह का सुख मान कर आशक्त भई तब लाज छूटी और घर भी छूटा और हे सखी ! अब उस निर्दई से कहियो देह छूटबे रही है। लाज छुटी और गेह छुटो और सुख छुटो यहां छुटना यह शब्द और छुटने का अर्थ दूर होना इस शब्द और अर्थ की वारंवार आवृति है याते तीसरा आवृति दीपक अलंकार :—

दोहा।

पद अरु अर्थ दुहून की, आवृति तीजी लेख।

इति अलंकाररत्नाकर।

अथ सामान्या प्रोषित-पातिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

आली सिंगारत है हठ सौं,पर लागत अंग अंगार सिंगारौ॥
पीरी परी तन मैं "मतिराम,,चलै अंखियानतें नीर पनारौ॥
सो उनहीं मन भावन नायक, आवत जो बहुते धनवारौ ॥
बार बिलासिन कौं बिसरै,न बिदेश गयो पियप्रानपियारो११६

मूल अर्थ– आली जो सखी हट से सिंगार कराती है पर सिंगार कराया हुआ वाके अंग को अंगार के समान लगता है और शरीर में पीरी होगई है और नैनन से जलका परनाला चलता है वो मन

भावन वो नायक बहुत धनवाला आता था वो नहीं है सो वार बिलासन जो गनिका प्रान प्यारे पीको बिदेश गये कौं नहीं विसारती है ।। नायका को बहुत धन वाला नायक प्रान को पियारा था वह विदेश को चला-गया यह नायका के चित्त की अभिलाषा से उलटा काम हुआ यातें विषाद अलंकार।

दोहा ॥

धन के हेत बिलासनी, रही सांवरैं बेस ।
जो तिय के हिय मैं बसे, सो पिय बसे बिदेश॥१२०॥

मूल अर्थ— वह बिलासिनी जो बिलास करने वाली नायका है सो धन के हेत वेस जो पोशाक संवारकर रहती है और वाके हिय में बसने वाला नायक विदेश में वसता है ।। यहां हिय में वसता है सो बिदेश में बसता है यह बात बिरुद्ध है यातें बिरोधाभास अलंकार :—

दोहा।

बरनत लगे बिरोध सो, अर्थ सबै अबिरोध ।
प्रगट बिरोधाभाष यह, समझत सबै सुबोध ॥ १ ॥

इति कविप्रिया।

अथ खंडिता लच्चण ॥

दोहा ॥

पिय तन औरैं नार के, रति के चिन्ह निहार ।
दुखित होय सो खंडिता, बरनत सुकवि विचार॥१२१॥

मूल अर्थ—नायक के शरीर पै और नायका के रति चिन्ह देख कर दुखी होय ताकौं सुकवि विचार करकें खंडिता वर्णत हैं। स्पष्ट अर्थ।

अथ मुग्धा खंडिता उदाहरण॥

सवैया ॥

लाल तुम्हें कहूं और तियाकी,लख्यो अंगियामैं लगावत चोबैं॥
ता छिनतैं "मतिराम,, न खेलत,बूझें सखीनहु सौं दुख गोवैं॥

लेख करे नख सौं पग को नख,सीस नवाय कें नीचेही जोवैं ॥
बाल नवेलिन रूस न जानति, भीतर भौंन मसूसन रोवैं ॥१२२॥

मूल अर्थ—हे लाल ! तुम्हे काहू और स्त्री की अंगिया में चोवा जो अतर जिस समय लगावत देखा तिस समय से वह नहीं खेलती है और सखी जन बूझती हैं, तासें दुख को छिपाती है, और हाथ के नख सैं पग के नख को लिखती है अर्थात् पग के नख पर कुछ लकीरें बनाती है और सीस नवाय कर नीची देखती है वह नवीन वय की नायका है सो मान नहीं कर जानती है यातैं घर के भीतर जाकर मसूसन जो हुचकी खाकर रोती है और सखियों के पूछने से दुख को छिपाती है यातैं लाज अधिक और रूस नहीं जानती है इत्यादि बचन से मुग्धा और नायक को और स्त्री की अंगिया में चोवें लगावत देखा यातैं खण्डिता सो ऐसे मुग्धा खण्डिता । स्पष्ट ।

प्रश्न—हाथ के नख से पग के नख को लिखती है सो पग के नख को चित्र की तरह पृथ्वी पर लिखती है या पग के नख ऊपर कुछ लकीरें लिखती है ?

उत्तर—हाथ के नख से जमीन पर लेख करती है और पग के नख को सीस नवाय कर देखती है और अपने पति कैं और नायका से आलिंगन करते देखा यह चित्त की अभिलाषासे उलटा कारज हुआ यातैं बिषाद् अलंकार ।

दोहा ॥

बाल सखिन की सीखतैं, मान न जानत ठान ।
पिय बिन आगम भौंन मैं, बैठी भौंहें तान ॥१२३॥

मूल अर्थ—बाल जो नायका मान नही कर जानती है यातैं नायक आने के समय विनाही भवन में भौंहें चढाकर वैठी है, मान नहीं कर जानने से मुग्धा और भैांहें चढाने से खंडिता इस प्रकार मुग्धा खंडिता है॥ सखी मान करना सिखाती है तऊ नायका मान करना नहीं सीख सकी यहां मान करने की सखीगण शिक्षा देती हैं यह हेतु तातैं नायका मान करना नहीं सीख सकी यह कारज पूर्ण नहीं हुआ यातैं विशेषोक्ति अलंकारः—

दोहा।

विशेषोक्ति जब हेत सौं, कारज उपजै नाहिं ॥

इति भाषा भूषण।

अथ मध्या खंडिता ॥

उदाहरण–कवित्त ॥

जावक लिलार, ओठ अंजन की लीक सोहै,
खये न अलीक लोक लीकन बिसारिये ॥
कवि "मतिराम,, छाती नख चित जगमगे,
डगमगे पग सूधे मग में न धारिये ॥
कस के उघारतहौ पलक पलक यातैं,
पलका पै पौढ श्रम रातिको निवारिये ॥
अटपटे बैंन कुछ बात न कहत बनैं,
लटपटे पेच सिर पाग के सुधारिये ॥१२४॥

मूल अर्थ—नायका वचन नायक सें लिलारके विषें जावक जो इलता और होठ पर कज्जल की लीक शोभित हो रही है इन अलीक जो खोटी लीक को खय जो नाश करिये और लोक लीक को नहीं विसराइये छाती पर नख के छित जो घाउ जगमगात हैं और पग भी डगमगते हैं मगमें सीधे नही धर सकते हो और पलकें भी कसके जो खेंच के उघारते हो इसलिये पलक भर पलंग पर पौढि कर राति के परिश्रम को निवारण करिये अटपटे वचनों से वात कहने में नहीं वनती है और पाग के पेच भी लट पटे जो खुले हुए हैं तिन को सुधारिये।

प्रश्न—इस में खंडितापना तो पाया जाता है पर मध्यापना जुदा नहीं निकलता है प्रौढा और मध्या दोनों समान हैं। उत्तर। कठोर वचन कहकें पिय को कोप जनावे सो मधया अधीरा होती है सो यहां भी कठोर वचन के कहने से अधीरा और पिय के शरीर पै रति चिन्ह देखने से खंडिता सो इस प्रकारप्रौढा नहीं है और मधया है।। लिलार पै जावक और होठ पै अंजन यहां और ठौर को काम और ठौर यातें दूसरा असंगति अलंकारः—

दोहा ।

और ठौर ही कीजिये, और ठौर को काम ।

इति अलंकाररत्नाकर ।

दोहा ॥

कोऊ करो कितेक यह, तजो न टेव गुपाल ! ।
निस औरन के पग परो, दिन औरन के लाल! ॥१२५॥

मूल अर्थ—कोऊ कितने ही उपाय करो तऊ गुपाल ! तुम यह टेव नहीं तजो निसि जो राति के समय औरनके पग परते हो और दिन औरन के लाल हो ।

प्रश्न—एक अभिप्राय में पहले गोपाल कह कर फिर लाल कहा है याते पुनरुक्ति दूषण है । उत्तर। इस दोहे का यह अर्थ है कि हे लाल ! तुम रात्रि के समय में और स्त्रीके पांव परते हो और दिनमें और होजाते हो कोई कितनाही कहे तो भी "गो" नाम वचन ताको पालना के यह टेव तुम नहीं छोड़ते यहां भी कठोर बचनों के बोलने से मध्या अधीरा खंडिता है यहां उपाय करनेसे टेक नहीं छोड़ता इस हेतुसे कार्य सिद्ध नहीं याते विशेषोक्ति अलंकार ॥

अथ प्रौढा खण्डिता उदाहरण ॥

सवैया ॥

प्रीतम आये प्रभात प्रिया, मुसकाय उठी दृग से दृग जोरैं ॥
आगें ह्वै आदर सौं मतिराम, कहै मृदु बैंन सुधारस बोरैं ॥
ऐसे सयान स्वभावनहीं सौं, मिली मन भावन सौं मन भोरैं॥
मान गौ जान सुजान तबै,अंगिया की तनी न छुटी जब छोरैं१२६

मूल अर्थ— प्रीतम जो नायक प्रभात समय आयो तब नायका मुसकाय कर उठी और सन्मुख आकर नेत्रन से नेत्र मिलाय और सुधा के रस से बोर दिये हुए कोमल बचन बोली ऐसें सयानपस्वभावसे मन भावन सौं भौरे जो भोले मन से मिली और अंगिया की तनी छोरने से नही छूटी तब सुजान जो नायक मान जान गयो ।

प्रश्न—इस अर्थ में खंडिता तो है परंतु प्रौढापना किसी विशेषता से जुदा नहीं पायाजाता है मध्या और प्रौढा दोनों समान हैं। उत्तर। प्रौढा धीरा का यह बचन लिखा है कि प्रिय से रिस प्रगट नहीं करती हैं और रति से उदास रहतीहै सो यहां भी नायक से रिस जाहिर नहीं कर के रति से उदासपना जनाती है यातें प्रौढा धीरा खंडिता है। प्रश्न। भोले मन से नायक से मिली सो भोले मन की तो मुग्धा होती है और यह प्रौढा है सो बहुत चतुराई सहित है। उत्तर। "मिली मन भावन सों मन भोरे,, ते यह अर्थ है कि मनमें भो रहिकें मिले तैसे नायक से मिली अर्थात गाढे आलिंग से नहीं मिली और जैसे सकुचती हुई मिले तैसी मिली॥ अंगिया की तनीं छोरने से नहीं छूटती है यहां भी हेतु से कार्य सिद्ध नहीं यातें विशेषोक्ति अलंकार॥

दोहा॥

आदर कर पिय सौं मिली, तिय हिय राख सयान।
दृढ़ कस बांधी कंचुकी, समझायो मन मान॥ १२७॥

मूल अर्थ— तिय हृदय मैं सयानप राख कें पिय से आदर कर के मिली और अंगिया की कसें दृढ बांध कर अपने मन का नायक को मान समझाया पूर्वोक्त सवैया के अनुसार इस दोहे में भी प्रौढा धीरा खंडिता है॥ नायकके छिपे हुए अपराध को नायका जानकर अंगियाकी दृढ कस बांधी इस भाव से नायक को जताती है यातें पिहित अलंकार।

अथ परकीया खंडिता॥

सवैया॥

रावरे नेह को लाज तजी, अरु गेह के काज सबै बिसराये॥
डार दियो गुरु लोकन को डर, गाम चवाय मैं नाम धराये॥
हेत कियो हम जो तो कहा तुम, तो "मतिराम,, सबै बिसराये॥
कोऊ कितेक उपाय करो कहुं, होत हैं आपने पीउ पराये॥१२८॥

मूल अर्थ—आपकी प्रीति के कारण लाज तजी और घर के सब काम बिसारे गुरू लोकन को भी डर दूर कियो और गाम की चबाइन जो निन्दा में नाम धरवाया हमने जो ऐसे दुःख सह कर भी हेत किया तो कहा हुआ ? आपने तो सब विसराय दिया कोउ कितने ही उपाय करो तो भी पराये पीय आपने नहीं होते हैं । परकीया खण्डिता स्पष्ट ॥ नायका के चित्तकी अभिलाषा से उलटा काम हुआ यातें विषाद अलंकार ॥

दोहा ॥

हम सौं तुम सौं लाल इत, नैंनन ही को नेह ।
उत प्यारी के दृगन के, सलिल सींचियत देह १२६॥

मूलअर्थ—हे लाल ! हमारे तुमारे तो यहां नेत्रन का ही स्नेह है और वहां जो तुमारी प्यारी है तिनके नेत्रन से सलिल जो जल से देह सींची जाती है ।

प्रश्न । नायका कहती है कि हमारे तुम्हारे ही जो निश्चय कर के त्रन का सनेह है यातें वहां जो तुमारी निज प्यारी है तिन के नेत्रों से सलिल से देह सीची जाती है अर्थात् वह रुदन करती है तब नायक इसी परकीया से आशक्त है और अपनी नायका से विमुख है तो यह परकीया खण्डिता कैसे ठहरी ? उत्तर । नायका कहती है कि हमारे निश्चय करके तुमारे नेत्रन का ही स्नेह है अर्थात् हृदय का स्नेह नहीं है और वह जो तुमारी निज प्यारी है तिन के नेत्रन को देखने से सलिल से देह सींची जाती है इसका अर्थ लच्छन लच्छना करके उस को तुम जब देखतेहो तब तुम्हारे हृदय की विरहाग्नि दूर होती है और तुम्हारी तृषा मिटती है नेत्रों का स्नेह है और हृदय का नही है सो थोड़े से इष्ट की प्राप्ति यातें तीसरा विषम अलंकार ।

अथ गनिका खंडिता ॥

सवैया ॥

ह्यां हमसों मिलबो ठहराय कें,सैंन कहूं अनसें निस कीजे ॥
भोरहिं आय बनाय कें बातनि,चातुर ह्वै विनती बहु कीजे॥

ऐसीहि रीति सदा"मतिराम,,सु,कैसे पियारे जू प्रेम पतीजै॥
सोहैं न खाइये जाइये ह्यां ते,न मानहुं जो धन लाखन दीजै१३०

मूलअर्थ—नायका वचन नायक से यहां हमारे से मिलना ठहरा कर राति में सयन किसी और के पास करते हो और प्रभात में आय कर चतुराई से बातें बनाय कर बहुत विनती करते हो और सदा तुम्हारी ऐसी ही रीति है सो हे प्रीतमजू ! तुम्हारे प्रेम की प्रतीत किस प्रकार कीजिये ? अब सौहैं नहीं खाइये और आप यहां से जाइये मैं तो लक्खों भी धन दोगे तो न मानूंगी।

प्रश्न—गणिका कहतीहै कि " धन देने से न मानूंगी" तो यह बात विरुद्ध है क्योंकि गणिका केवल धन से ही प्रीति रखती है। उत्तर। यह अर्थ है कि सौंह मत खाउ और यहां से जाउ न मानूंगी मैं धन लक्षन दोगे जहां तक अर्थात् लाख धन न दोगे जहां तक मैं नहीं मानूगी ॥ यहां धन देना कारण तातैं मान लेना कार्य सिद्ध नहीं यातैं विशेषोक्ति अलंकार।

दोहा ॥

कंत कहा सौंहन करो?, जान परयो अब नेह।
देन कह्यो सो विन दियें, जान न पैहो गेह ॥१३१॥

मूल अर्थ— हे कंत ! सोहैं काहे को करते हो ? अब आप का स्नेह जाना गया, पर जो देने किया था सो बिना दिये घर को नहीं जाने पाओगे। नायक सोहैं खाता है सो भी नायका कहती कि मैं तुम्हारा स्नेह नही मानूंगी सो यहां भी कारण से कार्य पूर्ण नहीं होता है यातैं विशेषोक्ति अलंकार।

अथ कलहंतरिता लक्षण ॥

दोहा ॥

कह्यो न माने कंतको, पुनि पीछे पछिताय।
कलहंतरिता नायका, ताहि कहत कविराय ॥१३२॥

मूल अर्थ– जो नायका पहले कंत के कहनेको नहीं माने फिर पीछे पछितावे ताको कविराय कलहंतरिता कहते हैं ।

मुग्धा कलहंतरिता उदाहरण ॥

सवैया ॥

गौने की चूनरी वैसिय है,
दुलही अबही ते ढिठाई बिगारी ॥
वेउ मनावन आये हैं आपन,
हाथ सौं जात न पाग संवारी ॥
पाइ परो "मतिराम„ लला,
मनुहार करी कर जोर हहारी ॥
आपही मान्यो मनायो न कान्ह को,
आपही खात न पान पियारी ॥१३३॥

मूल अर्थ–गौने की जो मुकलावे की चूनरी वैसेई है कहिये मैली भी नहीं भई और हे दुलही ! तें जो तैंने अब ही ढिठाई जो निर्लज्जताई बिगारी है, लला वेहू मनावन को आये और पाइं परे और हाथ से पाग नहीं संवारी जात ऐसें कर जोर कें मनुहार करी, हा हा री ! कान्ह को मनायो नहीं मान्यो हे पियारी अब आप ही कहा, पान क्यों नहीं खाती हो ? ।

प्रश्न–दुलही तैंनें ढिठाई जो निर्लज्जताई को विगारी सो निर्लज्जताई के विगारने का यह अभिप्राय है कि बहुत लाज को धारन कीनी तब तो यह नायका की तारीफ है और सखी निन्दा कर के कहती है । उत्तर । निर्लज्जताई को विगारी इस का अर्थ विपरीत लच्छना कर के यह जानो कि तैंने बहुत ढिठाई को सुधारी है ॥ और पूर्वोक्त सब अर्थ है॥ नायक के मनाने को नहीं माना और दुख पाकर पान नही खातीहै यातें कलहंतरिता और दुःख की बात लज्जायुक्त होकें सखी से नहीं कहती

है यातें मुग्धा कलहंतरिता है ।। यहां भी मनाने से नहीं मना यातें विशेषोक्ति अलंकार ।

दोहा ॥

आई गौने काल ही, सीखी कहा सयान ? ।
अबहीं तैं रूसन लगी, अबही तैं पछितान॥१३४॥

मूल अर्थ—अभी कल के दिन तो तू मुकलावे आई है और आज रूसने लगी, फिर पछिताने लगी यह सयानप कहां सीखी? कलगौने आई यातें मुग्धा और रूसती है और पछिताती है यातें कल हंतरिता है ।। सखी के बचन में यह संदेह पाया जाता है कि काल की गौने आई हुई अभी ऐसा सयानप कहां से सीखी ? यह संदेहहै यातें संदेह अलंकारः—

दोहा ।

सुमिरन भ्रम संदेह यह, लच्छन नाम प्रकाश ।।

इति भाषा भूषण ।

इन तीनों अलंकारों के लच्छन नाम ही में पाये जाते हैं । यथा नाम तथा गुण ।

मध्या कलहंतरिता ॥

सवैया ॥

पाइन आन परे तो परे रहे, केती करी मनुहारन झेली ॥
मान्यो मनायो न मैं "मतिराम,, गुमान में ऐसी भई अलबेली॥
प्यारो गयो दुखमान कहो,अब कैसें रहूं यह राति अकेली?॥
आपते लाय मनाय कन्हाईको,मेरो नलीजिये नाम सहेली१३५

मूल अर्थ—पाओं में आइ कर परे तो परेई रहे और कितनी मनुहार कीनी पर मैंने नहीं झेली और गुमान में ऐसी अलवेली हुई सो मनायो नही मान्यो, प्यारो दुख पाइ कर गयो, अब इस राति में अकेली मैं कैसे रहूं?सो हे सहेली । मेरा नाम तो नहीं लीजिये और तू अपने मन से कन्हाई को मनाइ लाउ।

प्रश्न—गुमान में अलवेली बैठ रही है और नायक दुख पाय कर

गयो फिर नायका कहती है कि मैं अकेली कैसे रहूं ? सो नायका अलबेली होकर दुःख नहीं मानती तब अकेली क्यों नहीं रहती ? । उत्तर । अर्थयह है कि प्यारो गयो और मैं दुःख पाकर राति में अकेली कैसे रहूं? । यहां सखी से कहती है कि मेरा नाम नहीं लेना यातैं लाज और कन्हाई को मनाउ लाउ यह बात कहने से प्रीति, ऐसें लाज और प्रीति, समान होने से मध्या और मनायो नहीं मानो फिर पछिताकर नायक को बुलाती है यातें कलहंतरिता है ॥यहां बितर्क, चपलता, दीनता, बिषाद की सबलता है यातें भाव सबलता अलंकार :—

भाव अनेक जु उपजै आय । भाव सबलता कहत बनाय ॥

इति अलंकार रतनाकर ।

दोहा ॥

जो तू कहै तो राधिका, पिय हि मनाबन जाउं॥
वहां कहौंगी जाय कैं, सखी तिहारो नाउं ॥१३६॥

मूल अर्थ—हे राधिका ! तू कहे तो पिय को मनावे जाऊं पर वहां जाय कर सखी ! तिहारो नाम कहूंगी । यहां भी सखी के बचन से यह बात पाई जाती है कि नायका नायक के मनाने के लिये सखी को भेजती है पर यह कहती है कि तें अपने मन से नायक को बुलाय लाना और मेरा नाम नहीं लेना तब सखी कहती है कि नायकके मनानेको जाऊंगी पर वहां जाकर तेरा नाम लूंगी यामें भी पूर्वोक्त कवित्त के समान मध्या कलहंतरिता जानिये ।। नायक के मनाने के लिये नायका सखी को भेजती है पर कहतीहै कि तू वहां जाकर मेरा नाम नहीलेना और सखी कहतीहै कि मैं मनाने के लिये जाऊंगी पर वहां जाकर तेरा नाम लूंगी । नायका अपनी ओर से मनाने को गुप्त रखना चाहिती है और सखी प्रगट किया चाहती है यातें नायका के चित्त की अभिलाषा से उलटा काम है याते खिषाद अलंकार ।।

सवैया ॥

ठाढे भये कर जोर के आगे, अधीन ह्वै पाइन सीस नवायो॥
केती करी बिनती "मतिराम,, पै मैंन कियो हठ तें मन भायो॥

देखत ही सगरी सजनी तुम, मेरो तो मान महा मद छायो॥
रूठ गयो उठ प्रान पियारो,कहा करिये तुम हू न मनायो१३७

मूल अर्थ—नायका वचन सखी से—हाथ जोड़ कर आगे खड़े भये और आधीन होकर पाइन में सीस नवाया और कितनी बिनती कीनी पर मैंने हठ से मन चाहा नहीं किया और तुम सगरी सजनी देखतीथीं और मेरा मान महा मद छायाहै प्रान पियारा रूस उठ गया और कहा कहिये तुमने भी नहीं मनाया ।

प्रश्न—इस सवैया के अर्थ में कलहंतरिता तो पाई जाती है पर किसी विशेषता से प्रौढा नहीं जानी जाती है इस अर्थ में मध्या और प्रौढा दोनों समान हैं । उत्तर । नायका कहती है कि तुम सब सखियां देखतीं थीं और नायक रूठ कर उठ गया तो तुमने नहीं मनाया ऐसा सब सखियों से नायका का वचन है इसमें लाज नहीं पाई जाती है यातें प्रौढा ।। यहां नायका के अति मान दोष से नायक को क्रोध दोष हुआ यातें उल्लास अलंकार । जहां एक के दोष तें और को दोष जहां उल्लास अलंकार का चौथा भेद ।।

दोहा ॥

पीतम जब पाइन पर्‌यो, तब अति भई सरोस ।
कह्यो न मान्यो कंतकौ, हमें दीजिये दोस ॥१३८॥

मूल अर्थ—जब नायक पाइन में परा तब अति सरोस भई कंत का कहा नहीं माना अब हमें दोष देती हो यामें भी प्रौढा कलहंतरिता स्पष्ट ।। नायक का कहना नायका ने आपही नहीं माना और दोष सखी को देती है नहीं मानता यह अपराध कारण नायका में और दोष लगाना कारज सखी में यातें जहां कारण और कार्य न्यारे २ स्थान पर होते हैं तहां असंगति अलंकार का पहला भेद ।।

परकीया कलहंतरिता ॥

सवैया ॥

जाके लिये गृह काज तज्यो न,
सखी सखियानकी सीख सिखाई ॥

बैर कियो सिगरे ब्रजगाम सौं,
जाके लिये कुल कानि गमाई ॥
जाके लिये घर बाहर हूं,
"मतिराम„रहे हंसि लोक लुगाई ॥
ता हरिसों हित एकहि बार,
गंवारि मैं तोरत बार न लाई ॥१३९॥

मूल अर्थ—जिन के वास्ते घर का काम तजि दिया और सखियों के सीख के सिखाने से भी नहीं सीखसकी और सिगरे ब्रजगाम सों बैर किया जाके लिये कुल की कानि को भी गमाई जाके लिये घर से बाहर हूं और लोग लुगाई सब मेरी हंसी अर्थात् निन्दा करते हैं तिन कनहैया से मैं गंवारि ने एक ही बेर में स्नेह तोरबे को देर नहीं लगाई।

प्रश्न—न सखी सखियान की सीख सिखाई यहां यह अर्थ होता है कि हे सखी! सखियानकी सीख मैंने नहीं सिखाई सो नायका किसी और को सीख सिखाती थी क्या?। दूसरा प्रश्न। बैर कियो सगरे ब्रज गामसों सो ब्रज तो देश है गाम नहीं है। उत्तर दोनों प्रश्नों का। नायका कहती है कि ब्रज के सारे गामों से मैंने बैर किया अर्थात् ब्रजके जितने गाम हैं सब से मैंने बैर किया यातें हे सखी! मुझे किसी सखी ने सीख नहीं सिखाई॥ यहां चिन्ता संचारी भाव शृङ्गार रस को अंग है यातें प्रेय अलंकार।

दोहा॥

जोरत हू सजनी बिपति, तोरति विपति समाज॥
नेह कियो बिन काज पुनि,तेह कियो बिन काज१४०

मूल अर्थ—हे सजनी! जोड़ने में भी विपति जो दुख है और तोड़ने में भी विपति समाज सो दुख का समूह है, विना कार्य स्नेह करके फिर उससे बिना ही कार्य तेह जो क्रोध किया।

प्रश्न—नायका कहती है कि स्नेह करने में भी दुख है तो स्नेह काहे को किया?। उत्तर। इस पद का यह अर्थ करना कि पति जो इज्जत

बिना होना पड़ता है अर्थात उपपति से प्रीति करती है उस नायका को लोक परकीया कहते हैं और बिना पति की समझते हैं और स्नेह तोड़ने में दुख का समूह है परकीया कलहंतरिता स्पष्ट । नायकाके क्रोध दोष तें नायक का स्नेह टूटना यह दोष हुआ यातें उल्लास अलंकार, फिर नायक का स्नेह टूटा इस दोष से नायका को दुख उपजा यह दोष हुआ यातें उल्लास अलंकार है ।

सवैया ॥

जाते लही जग बीच बड़ाई मैं, मेरे बियोग जो होत है छीनों ॥
मोहि गिनै "मतिराम,, जो प्रान के, मेरे सदां ही रहे जो अधीनों ॥
मेरे लिये नितही उठिकें, गहनों जु गढाय कें लावे नवीनों ॥
प्रान पियारो सो पाइ न लाग्यो री, मैं हंसि कंठ लगाइ न लीनो १४१

मूल अर्थ—जिन नायक से जगत में मैंने बड़ाई पाई और वह मेरे वियोग से क्षीण होता है और मुझे प्राण के समान समझता है और सदैव मेरे आधीन रहता है और नित मेरे लिये उठकर नवीन गहना गढाकर लाता है वह प्रान का प्यारा मेरे पैरों में पड़ा तो भी मैंने हंस कर कंठ से नही लगा लिया ।

प्रश्न—"गहनो जु गढाय कें लावे नवीनों" तुरत का गढा हुआ गहना नवीन होता है फिर नवीन पद क्यों लिखा? । उत्तर । नायका कहती है कि मेरे लिये गहना नवीन नवीन प्रकार का गढाकर लाता है और नवीना कहिये नायक नवीन वय है अर्थात् तरुण है ।। यहां भी नायका के चित्त की अभिलाषा से उलटा काम हुआ यातें विषाद अलंकार ।

दोहा ॥

जासों किये सनेह मन, रही न एको साध ।
तासों भई सरोस हौं, सजनी बिन अपराध ॥१४२॥

मूल अर्थ—एक जाके स्नेह को मैं मन में साध कर जो दृढ़ करके नही रही तासैं हे सजनी ! मैं बिनाही अपराध रोस युक्त हुई ।

प्रश्न—नायका कहती है कि मैं एक इसी नायक के स्नेह पर दृढ़ नहीं रही तो इसमें कुलटापन सिद्ध है पर गणिकापना लालच बिना नहीं होता। उत्तर। ऐसे करना अर्थ कि जाके किये स्नेह मन रही न एको साध जाके स्नेह से मन की एक भी साधना शेष नहीं रही अर्थात सकल अभिलाषा मेरी सिद्धि भई। बिना अपराध रोस करना यह कारण बिना कार्य यातें प्रथम विभावना।

अथ विप्र लब्धा लक्षण ॥

दोहा ॥

मिलन आस कर जाय तिय, मिले न पिय संकेत।
बिप्र लब्ध सो जानिये, विरह बिकल बिन चेत१४३॥

मूल अर्थ—जो तिया मिलनेकी आस करके जाय और संकेत में पिय नही मिलै और विरह से विकल होके बिना चेत होय सो विप्रलब्धा जानिये। स्पष्ट।

अथ मुग्धा विप्रलब्धा उदाहरण ॥

सवैया ॥

आलिनि को सुख मानिवेकौं पिय,प्यारे की सेज गई चल आगे॥
छाय रह्यो हियरा दुख सौं,जब देखे न ह्वां नंदलाल सभागे ॥
काहू सों बोल कछू न कह्यो,"मतिराम,, न चित्त कहूं अनुरागे॥
खेलति खेल सहेलनि में पर,खेल नवेलीकों जेलु सो लागे॥१४४॥

मूल अर्थ—हे सखी! अच्छा सुख मानिवे के लिये प्यारे पी की सेज चलके गई वहां आगे सभागे जो अच्छे भाग्य वाले नन्दलाल को नहीं देखा तब से हृदय पै दुःख छाय रहा है और किसी से कुछभी वोल नही कहती है और चित्त का भी कहीं अनुराग नहीं लागता है और सहेलिनि खेलती हैं पर नवेली कों खेल जेल जो क़ैद के समान लागता है।

प्रश्न—नन्दलाल सभागे अर्थात अच्छे भाग्य वाले तहां नायका के वचन में नन्दलाल को अच्छे भाग्य वाला कहना क्या जुरूर था?। उत्तर।

नन्दलाल समागे का अर्थ यह है कि नन्दलाल केलि भवन से उठकें सभागे कहिये सभा को गये । खेल बुरा लगता है तो भी खेलती है और किसी सखी से दुःख नहीं जताती है यामें लाज अधिक है यातें मुग्धा और सेज पर नायक को नहीं देखने से दुखी हुई यातें विप्रलब्धा । इस प्रकार मुग्धा विप्रलब्धा स्पष्ट ।। नायका प्यारे पिय की सेज पर चलकें अच्छे सुख की अभिलाषा करकें गई थी तहां नायक नहीं पाया तब दुखी हुई यह अनिष्ट फल हुआ यातें विषम अलंकार तीसरा भेद ।

दोहा ॥

लख्यो न कंत सहेट में,लख्यो नखत को राय ।
नवल बाल को कमल सो,गयो बदन कुंभिलाय१४५॥

मूल अर्थ—कंत को सहेट में नहीं देखा और नखत के राय चन्द्रमा को देखा तब नवल बाल का जो कमलसा बदन था सो कुम्हिलाय गया और किसी सखी से दुःखनहीं जताया सो लाज की अधिकाई करकें यहां भी मुग्धा विप्रलब्धा स्पष्ट ।। कमल उपमान, मुख उपमेय, सो वाचक, कुम्हिलाना धर्म, इस प्रकार पूर्ण उपमा के चारों अंग साबित हैं यातें पूर्ण उपमा अलंकार है ।।

अथ मध्या विप्रलब्धा उदाहरण ॥

सवैया ॥

केलि के मंदिर देखो न लालको, बालके दाहन अंग दहे हैं॥
भौंह चढाय सखी सों लख्यो,"मतिराम,,कछू न कुबोल कहेहैं॥
भूलि हुलास बिलास गये दुख, तें भरिकें अंसुवा उमहे हैं ॥
इच्छन कोरनतें न गिरे मनु, तिच्छन छोरन छेदि रहेहैं १४६॥

मूल अर्थ—लाल को केलि के मंदिर में नहीं देखा तब दाह से बाल के अंग जले हैं और सखी की ओर भौंह चढा के देखा और कछू कुबोल नही कहे और बिलास के हुलास को भूल गई दुख से आंसू भर के उमहे

देखने से छूट कर नहीं परे मानो तीखे कोयों में पोये गये हैं ।। मध्या में लाज और काम समान होता है सो सखी सो कुछ बचन नहीं कहे इस में लाज और दुख पाने से काम समान होकर मध्या विप्र लब्धा जानिये । आंसू आंख के कोयों पर आय कर आप ही से ठहर रहे हैं तिन को तीखे कोयों में वेधना हेतु ठहराया है और आंख के कोयों से कोई चीज पोई नहीं जाती है याते अहेतु को हेतु ठहराया याते असिद्ध विषया हेतु उत्प्रेक्षा अलंकार है ।

दोहा ॥

तिय को मिलो न प्रान प्रिय, सजल जलद तन मैंन ।
सजल जलद लखिकें भये, सजल जलद से नैन ॥१४७॥

मूल अर्थ—श्याम मेघ के समान जाके शरीर को रंग है और कामके समान वाका स्वरूप है ऐसा जो प्राण प्रिय है सो तिय को नहीं मिला और सजल जलद जो जल सहित बद्दल ताकों देख कर नेत्र सजल जलद से भये अर्थात् आंसू युक्त भये सजल जलद से नेत्र कहने में लाज और काम समान पाया जाता है क्योंकि काम से दुखी होकर नेत्रों में जल भरा और लाज से आंसू नहीं गिरे याते मध्या और नायक नही मिलने से विप्रलब्धा ।। जलद उपमान, नेत्र उपमेय, से वाचक, सजल होना धर्म, यहां भी चारों अंग पूर्ण उपमा के साबित हैं याते पूर्ण उपमा ।

अथ प्रौढा विप्र लब्धा उदाहरण ॥

कवित्त ॥

सकल सिंगार साज संगले सहेलिनिकों,
सुंदरि मिलन चली आनंद के कंद कों ॥
कवि "मतिराम,, मग्र करत मनोरथानि,
पेख्यो पर जंक पै न प्यारे नद नंद कों ॥
नेह ते लगी है देह दाहन दहत गेह,

बाग को बिलोकि द्रुम बेलिनके बृंदकों ॥
चंद को हंसत तब आयो मुख चंद्र अब,
चंद्र लाग्यो हंसनि तिया के मुख चंदकों ॥१४८॥

मूल अर्थ—सकल सिंगार साजि कर और सखी गण को संग लेकर सुंदरि जो नायका आनंद के कंद जो नायक तिन से मिलने को चली मग में मनोरथ करती हुई केलि भवन में गई तब आगे जाकर पर्य्यंक जो सज्या पर प्यारे नंद नंदन को नहीं देखा तब स्नेह के देह में जलन लगी और देह दहन याको अर्थ लच्छन लच्छना करके केलि भवन काम उद्दीपन करता है यातें बहुत दुख दायक हुआ और बाग को और द्रुम जो वृक्षन को और वेलन के समूहको अवलोकन करके बहुत दुःखीहुई आते समय में नायकाका मुख चंद्र चंद्रमा से अधिक था क्योंकि चन्द्रमा में कलंक है और नायकाका मुख निकलंक है सो चन्द्रमा को हंसता था फिर वियोग से मुख चंद्रकांति हीन हुआ और चन्द्रमा की कांति साबित रही तब चन्द्रमा मुख चन्द को हंसने लगा ॥ सब सहेलियों को संग ले नायक के मिलने को चली यहां लाज की न्यूनता और प्रीति की अधिकता यातें प्रौढा विप्र लब्धा ॥ पहले नायका के मुख पर बहुत प्रकाश बढ रहा था तब चन्द्रमा से अधिक था फिर नायक के विरह से उसी नायका के मुख पर मलीनता छागई यहां प्रकाश और मलीनता दोनों पदार्थ का आश्रम क्रम से उसी एक नायकाके मुख पर ठहराया यातें पर्याय अलंकारका पहिला भेद है।

दोहा।

द्वै पर्याय अनेक को, क्रम से आश्रय एक ॥

इति अलंकार रतनाकर।

दोहा ॥

लख्यो न मंदिर केलिके, पिय रुचि विजित अनंग।
नैंन करनतें जल वलय, गिरे एकही संग ॥१४९॥

मूल अर्थ—विजित अनंग कहिये कामदेव की छवि को जीतने वाला ऐसा जो नायक ताको केलिके मन्दिर में नहीं देखा तब नेत्रों से जल और

हाथों से वलय जो चूरियां दोनों एकही साथ गिरैं। प्रौढा विप्रलब्धा स्पष्ट नेत्रों से जल और हाथों से वलय एकही साथ गिरैं यातें सहोक्ति अलंकार।

अथ परकीया विप्र लब्धा उहाहरण ॥

कवित्त ॥

चली "मतिराम,, प्रान प्यारे को मिलन घात,
ने सुक निहारिकैं विसारि काज घर को ॥
पियरो बदन दुख हियरे समाय रह्यो,
कुंजन में भयो न मिलापु गिरधर को ॥
विसरे बिलासु वे बिलाय गयो हासु छायो,
सुंदरि के तन में प्रताप पंचसर को ॥
तीक्षण जुन्हाई भई ग्रीषम को घामु भयो,
भीसम पियूष मान भान दुपहर को ॥१५०॥

मूल अर्थ—घर का काम विसारिकैं सुख निहारि कैं प्रान प्यारे के मिलने को चली और कुंजन में गिरधर का मिलाप नहीं हुआ तब बदन पर पिलाई आई और हृदय में दुःख समाय रहा बिलास बिसर गई और हांस विलाय गया सुन्दरी के तन में पंचसर जो कामदेव का प्रताप बढ़ा और जुनहाई जो चांदनी सो ग्रीष्म ऋतु के घाम जो तावड़े के समान तपायमान हुई पियूष मान जो चन्द्रमा है सो दोपहर के सूर्य के समान भी सम जो प्रचण्ड दीखने लगा।

प्रश्न—पियरे बदन दुख हियरे समाय रह्यो बहुत दुख होता है ताको कहतेहैं कि यह दुख हिय में नही समाता और यों लिखी कि दुःख हियमें समाय रह्यो यातें अल्प दुख जाना गया और इसी कवित्तकी तीसरी तुक में लिखा है कि हांस बिलास बिसर गई यातें दुख विशेष जाना जाता है सो पहले दुख हिय में समाय रह्यो ऐसा क्यों लिखा ?। उत्तर। बदन पै पीलापन और हिय में दुख सम कहिये बराबर प्रगट भयो है अर्थात् हिय में दुःख बढ़ने लगा तैसेही बदन पै पीलापन बढ़ने लगा। घर

का काम छोड़कर और थोड़ीसी घात पाकर कुंज में मिलने को गई यातें परकीया विप्रलब्धा स्पष्ट । पियूष मान चंद्रमा शीत कर है सो नायका को दुपहर के सूर्य की समान दाह करने लगा तैसेही चान्दनी भी ग्रीष्म के घाम के समान नायका को ताप करने लगी यातें यहां शीतल कारण से दाह होना कार्य विरुद्ध हुआ यातें छटी विभावना ।

दोहा ॥

तची भूमि अति जोन्ह सों, झरे कुंज तें फूल ।
तुम बिन वाकों बन भयो, खडग पत्र के तूल॥१५१॥

मूल अर्थ—जोन्ह जो चांदनी से ज़मीन तप गई और कुंज से फूल खिरे सो तुम विना वा नायका को वन खडग पत्र के तुल्य भयो और खड्ग पत्रवत् पुराण में नर्क के रस्ते में वर्णन किया है नायक से मिलने को बन कुंज संकेत में गई थी यातें परकीया विप्र लब्धा । जोन्ह जो चांदनी सो शीतल है सो नायका को तपायमान लागी और कोमल फूलों के स्पर्श नायका को खड्ग धार के समान लगे यातें यहां भी चांदनी फूल अच्छे कारण तातें नायका को दुःख हुआ यह विरुद्ध कारज यातें यहां भी छटी विभावना है ।

दोहा ॥

साहस करि कुंजनि गई, लख्यो न नंद किशोर ।
दीप शिखा सी थर हरी, लगी बयार झकोर ॥१५२॥

मूल अर्थ—साहस करके कुंजन को गई और वहां नन्द किशोर को नहीं देखा तव वह नायका पवन की झपट से दीपक की लोय धूजती है ऐसे धूजने लगी ।

प्रश्न—साहस करके कुञ्ज भवन में गई ऐसा लिखा है सो जहां तक नायक के मिलने की आशा थी सो उमङ्ग से जो कहीं जाता है तहां वह जाना उसको बहुत सगुन दीखता है यातें नायका के कुञ्ज भवन में आना सगुन था तहां साहस करके गई ऐसा क्यों लिखा ? । उत्तर । साहस कर इसलिये लिखा कि कुल मर्यादा, लोक मर्यादा, तोड़ कर कुंज भवन को गई । पूर्वोक्त दोहा कवित्त के समान यहां भी परकीया विप्रलब्धा स्पष्ट। दीप शिखा सी जो नायका है सो बयार के लागने से धूजने लगी यहां

दीपशिखा उपमान और नायका उपमेय को एकता करके वर्णन किया यातें रूपक अलंकार और जुदी दीप सिखा नहीं रक्खी यातें अभेद और उपमेय उपमान की समानता है यातें सम अभेद रूपक है ।

गनिका विप्र लब्धा उदाहरण ॥

सवैया ॥

वार विलासिनी कोटिहुलास,बढ़ायकें अंग सिंगार बनायो॥
पीतम गेह गई चलिकें "मतिराम,,तहां न मिल्यो मन भायो॥
संग सहेली सों रोसु कियो नहीं, आपुन को यह दोसु लगायो॥
हाय मैं कीनो मतो यह कौन जु,आपने भौंन न वोलि पठायो१५३

मूल अर्थ—वार विलासिनी कहिये गनिका ने करोड़ों हुलास बढाय कें शरीर में शृंगार किया और चल कर पीतम के घर पै गई तहां मन भाया जो नायक सो नहीं मिला तब संग में जो सहेली थीं तिन से रोस नहीं किया अपने तईं ऐसा दोष लगाया कि मैंने यह कैसा मता जो संसूवा कीना सो अपने घर नहीं बुलवाय लिया ? । प्रश्न । इस कवित्त में कुछ लालच नहीं पाया जाता है और नाम से नायका नही होती है लक्षण से होती है यातें सामानयापना साबित नहीं होता है । उत्तर । नायका ने कोटि हुलास बढ़ा कर इस पदका अर्थ क्रोड रूपये लेने का हुलास बढ़ाकर अंग में शृंगार किया था यातें गनिका विप्रलब्धा स्पष्ट । नायका कहती है कि मैंने यह कैसी कुमति कीनी सो नायक को अपने घर पै नहीं बुलाया ? इस प्रकार नायका ने अपनी निंदा करी यामें नायका की यह निंदा निकलती है कि नायक मिथ्या वादी है ताके बचन पर प्रतीति नहीं लाना चाहिये यहा नायका की निंदा से नायक की निंदा निकलती है यामें व्याज निंदा अलंकार का चौथा भेद है ।

दोहा ॥

मोहि पठाई कुंज में, सठ आयो नहिं आप ।
आली औरै मिंत को, मेरो मिथ्यो मिलाप ॥१५४॥

मूल अर्थ—हे आली। उस मूर्ख ने मुझे कुंज में भेजी और आप नहीं आया यातें अब मेरे और मित्र का भी मिलाप मिटा।

प्रश्न—नायका कहती है कि मेरे और मित्र का मिलाप मिटा याते नायका कुलटा जानी जाती है और लालच नहीं पाया जाता है यातें गनिका साबित नही होती है। उत्तर। जो कुलटा होती तो सखी से कहती कि मुझे किसी और पुरुष से मिलाओ पर इसे और पुरुषकी अभि-लाषा नहीं है परन्तु धन की अभिलाषा है सो धन देने वाले और मित्रों का मिलाप मिटा क्योंकि सदैव वैसिक नायक इस के घर पर आते थे सो वह समय नहीं रहा गनिका विप्रलब्धा स्पष्ट ॥ नायक के नहीं आने के दोष तें नायका को क्रोध दोष हुआ यातें चौथा उल्लास अलंकार है।

अथ उत्कंठिता लक्षण ॥

दोहा ॥

आप जाय संकेत में, पीव न आयो होय।
ताकी मन चिन्ता करे, उतका कहिये सोय ॥१५५॥

मूल अर्थ—आप संकेत में जाय कर नायक नहीं आयो होय ताकी चिन्ता करे ताको उतका कहिये।

उतका उदाहरण ॥

सवैया ॥

वीत गई जुग जाम निसा "मतिराम,, मिटी तमकी सर साई॥
जानति ही कहूं और तिया से, रहे रस में रसिकें रसराई॥
सोचत सेज परी यों नवेली, सहेलीसों जात न बात सुनाई॥
चंदचढ्यो उदियाचल पै, मुख चंदपै आनचढी पियराई॥१५६॥

मूल अर्थ—जुग जाम निसा वीत गई सो दोपहर रात व्यतीत हुई तमकी सरसाई मिटी सो अंधेरे की अधिकताई भी मिटी, यातें जानती हूं कि रसराई जो नायक कही और स्त्री से रस के रहे हैं सेज पै परी हुई नवेली जो नवीन वय की नायका ऐसें सोचती है और सहेली सों

बात नहीं सुनाई जाती है, चंद्र उदियाचल पै चढ्यो और वाके मुख चंद पै आन के पीलाई चढी है ।

प्रश्न—नायक के आने की जहां उम्मेद थी तहां पहलेही सेज पर नायका कैसे सो रही ? । उत्तर । सोचत सेज परी यों नवेली नायक की सेज के। ऐसे नवेली विछौने पर परी हुई सोचतीहै ।। लाज की अधिकाई कर के सहेली से बात नहीं कह सकती है यातें मुग्धा उत्कंठिता स्पष्ट । नायका के मुख पर पीलास और उदियागिरि पै चंद्रमा संगही चढे यातें सहोक्ति अलंकार ।

दोहा ॥

कितन कंत आयो अली, लाज न बूझ सकैन ।
नवल बाल पलिका परी, पलक न लागत नैन ॥१५७॥

मूल अर्थ—हे आली! कंत कित है सो नहीं आयो लाज कर के नहीं बूझ सकती है वह नवीन वाला पलंग पर पौढी है और नेत्रों की पलक नहीं लगती है मुग्धा उत्कंठिता स्पष्ट । यहां चिन्ता और लाज की संधि है यातें भाव संधि अलंकार है ।

अथ मध्या उत्कंठिता उदाहरण॥

सवैया ॥

बारहि बार बिलोकति द्वारहि चोंकपरे तिनके घर केहूं ॥
सेज परी "मतिराम,,बिसूरति, आई अहों अबही लख मैंहूं॥
संग सखान के खेलतहो, अजहूं रजनीपति के अथ येहूं ॥
लाल न बेग न जाहु घरे,पुनि बाल न मानिहैं पाई परे हूं॥१५८॥

मूलअर्थ—सखी बचन नायक से । बार बार द्वार जो दरवाजा उस को बिलोकन करती है और तिनका के खड़कने से चौंक परती है और सेज में बिसूरत कहिये बिलखी होकर सूती है अब ही मैं देख कर आई हों । हे लाल ! रजनी पति जो चनद्रमा अस्त हुआ है तौभी तुम सखान के सग खेलते हो और अब तुम जलदी से घर को नही जाओगे तो फिर बाल पाय परने से भी नही मानेगी ।

प्रश्न—इस कवित्त के अर्थ में प्रौढ़ापना साबित होता है क्योंकि काम की अधिकता पाई जाती है और लाज काम की समानता नहीं पाई जाती है। उत्तर। सखी के बचन से यह बात पाई जाती है कि सब हाल सखी अपने मन से वर्णन करती है पर नायका ने कुछ सखी के साथ नायक से कहवाया नहीं है इससे लाजकी अधिकाई और सब वर्णन में काम की अधिकाई इस प्रकार लाज काम समान होने से मध्या उतका स्पष्ट। सखी नायक को नायका के पास लेजाना चाहती है यातें कहती है कि चन्द्रमा अस्त होने पर भी तुम अपने घर नायका के पास नहीं जाओगे तो फिर वह पांइ परने से भी नहीं मानेंगी सो यहां मिस करके सखी अपना मन चाहा कार्य सिद्ध करती है यातें पर्यायोक्ति अलंकार का दूसरा भेद है।

दोहा ॥

कहां रहो आयो सखी, पिय पहरें जुग मैंन।
अधनि करे अखरां कढ़े, बाल बदन सें बैंन ॥१५६॥

मूलअर्थ—हे आली! दो पहर कहिये आधीरात में भी नायक नहीं आया सो कहां रहा है? अधनिकरे अंखरों से बाल के बदन से बैन कढते हैं। अधनिकरे अक्षरों से बाल पूछतीहै यामें लाज और काम दोनों समान हैं यातें मध्या उत्कंठिता स्पष्ट॥ यहां लाज और चिन्ता और शंका की संधि है यातें भाव-संधि अलंकार।

अथ प्रौढ़ा उत्कंठिता उदाहरण ॥

सवैया ॥

कैयो घरी निसि बीत गई अरु, मेह चहूं दिस आयो उनै है ॥
अंग सिंगार कें बैठी है सांवरे, रावरी बाट बिलोकत ह्वै है ॥
बैठे कहा "मतिराम,, रसाल हो, राति मनावत ही पुनि जै है ॥
जाहु न वेग तिहारी पियारी सु, दोसु बिहारी हमें पुनि दै है १६०

मूल अर्थ—सखी नायक से कहती है कि हे लाल! चहूं दिस मेह उमड़ कर आया है और बाल सिंगार सजि कैं बैठी है और उस ने कह्यो है कि घरी भर निस बीत गईहै और सांवरे तुम्हारी बाट अवलोकती होगी और आप रसाल होके कहां वैठे हो? याको अर्थ रसिक जन होते हैं सो इतनी देर नहीं करते हैं फिर रात भर वह मनाने से नहीं मानेगी अब जल्दी से नहीं जाओगे तो तुम्हारी प्यारी हमारे तई भी दूषण लगावेगी।

प्रश्न—तिहारी पियारी सों यहां यह प्रश्न है कि सों अव्यय वृथार्थ में रहताहै। उत्तर। तिहारी नायका की शपथ खाकें कहती हूं। सखी कहती है कि अब जल्दी से नहीं जाओगे तो फिर नायका राति भर मनाने से भी नहीं मानेंगी यहां मिस करकें सखी अपना कार्य सिद्धि करती है यातें पर्यायोक्ति अलंकार है।

दोहा॥

पीव न आयो ध्यान को, मूंदे लोचन बाल।
पलक उघारे पलक में, आयो होय न लाल॥१६१॥

मूल अर्थ—नायक नहीं आया तब ध्यान के लिये वाला ने नेत्र मूंदे फिर पलक भर में पलक खोल कर देखने लगी कि अब आया होगा, प्रौढा उत्कंठिता स्पष्ट। ध्यान करने से भी हृदय में नायक का स्वरूप नही देखा यहां ध्यान करना हेतु तातें स्वरूप दीखना कार्य नही हुआ यातें विशेषोक्ति अलंकार है।

अथ परकीया उतकंठिता उदाहरण॥

कवित्त॥

जमुना के तीर बहे सीतल समीर तहां,
मधुकर करत मधुर मंद सोर हैं॥
कवि "मतिराम,, तहां छबि सौं छबीली बैठी,
अंगन तें फैलत सुगंध के झकोर हैं॥
पीतम बिहारी की निहारबे को बाट ऐसें,
चहूं ओर दीरघ दृगनि करी दौर हैं॥

एक ओर मीन मनो एक ओर कंज पुंज,
एक ओर खंजन चकोर एक ओर हैं ॥१६२॥

मूलअर्थ—जमुना के तीर पर शीतल और मंद और सुगंध तीन प्रकार का पवन चलरहा है तहां मधुकर जो भौंरे मधुर और मंद शब्द कर रहैं तहां वह छबीली छवि से बैठी है और वाके अंग से सुगंध की झकोर फैलती है और प्रीतमकी बाट निहारने के लिये चारों दिशा दीर्घ दृगन से देखती है एक ओर मीन के समान दूसरी ओर कमल के पुञ्ज के समान तीसरी ओर खंजन के समान और चौथी ओर चकोर के समान।

प्रश्न—मीन, कमल, खंजन और चकोर के समान दृष्टि कैसे होती है ?। उत्तर। नायका काम उद्दीपन होकर वैठी है यातें प्रथम दृष्टि पै काम छाय कर मीनके समान नेत्र होते हैं फिर नायक नहीं आया ताके सोच सें रात्रि के कमलों के समान नेत्र सकुचते हैं फिर भय विचारती है कि और कोई देखेगा तव दृष्टि भय युक्त होकर नेत्र खंजन के समान चंचल होते हैं और उठने का मनोरथ करती है पर फिर नायक के स्नेह को याद कर के नहीं उठती है और विचारती है कि नायक आवेगा तव प्रेम दृष्टि से नायक के आने का जो मार्ग है उस ओर चकोर के समान टगटगी लगा कर प्रेम दृष्टि से देखती है। दूसरा प्रश्न। काम दृष्टि और सोच दृष्टि और भय दृष्टि और प्रेम दृष्टि ये चार प्रकार से दृष्टि लिखी है सो एक २ मनोरथ से दृष्टि चारों ओर फैलती है और यहां कवित्त में एक २ ओर एक २ उपमान के समान दृष्टि लिखी है इस से यह अर्थ यथार्थ नहीं लगता। उत्तर। यह अर्थ करना कि एक ओर जमुना की तीर है एक ओर सघन वन है, एक ओर नायका के संवंधी जनोंका पुर है और एक ओर नायक के आने का रस्ता है सो जव नायका जमुना की ओर देखती है तव महा सुन्दर स्थान देखने से काम उद्दीपन होता है यातें मीन के समान चंचल नेत्र होते हैं और वन की ओर देखती है तव अनेक प्रकार का भय उपज कर खंजनों के समान चंचल नेत्र होते हैं और संवंधी जनों के पुर की ओर देखती है तव सोच उपज कें नेत्र कमल के समान होते हैं अर्थात् सोच सें नेत्र खुले के खुले रहजाते हैं जैसे

कमल के पुष्प की पंखरियां खुली रहती हैं सोच से नेत्र अनमिष रहते हैं, और नायका नायक के आने के मार्ग को देखती है तब प्रेम से चकोर की तरह नेत्रों की एक टगटगी लगजाती है । एक दृष्टि को बहु गुन कर के बहुत विधि वर्णन किया याते दूसरा उल्लेख अलंकार है ।

दोहा ॥

कंत बाट लखि गेह कौं, कुंज देहरी आय ।
ऐहैं पीव विचारि यों, नारि फेर फिरजाय ॥१६३॥

मूल अर्थ— नायक की बाट निहारिकें गेहकी जो घर की कुंज की देहरी पर आय कें पीव ऐ हैं यों विचारि के फिर पीछे फिर जाती है परकीया उत्कंठिता स्पष्ट ॥ यहां औत्सुक्य संचारी भाव का उदय है यातें भाव उदय अलंकार है ।

अथ गनिका उत्कंठिता उदाहरण ॥

सवैया ॥

पीतम को कर ध्यान घरीक,करे मनही मन काम किलोलें॥
पातहु के खर कें"मतिराम,,अचानकही अंखियां पुनि खोलें॥
पीतम ऐहैं अजो सजनी!, अंगराय जंभाय घरीक यों बोलें॥
गावें घरीक गरें ही हरें हरें, गेह के बाग हरें हरें डोलें ॥१६४॥

मूल अर्थ—पीतम का ध्यान कर के घरीक भर में काम देव की किलोलें करती है और पात के खड़कने पर भी अचानचक आंख खोलती है फिर अंगराय कें जो अलसाय कें जंभाय के जो उवासी खाय कर ऐसें बोलती है हे सजनी ! नायक आवेंगे फिर घरी भर में कंठ से मन्द २ गाती है और घर के बाग में धीरे २ डोलती है ।

प्रश्न—इस कवित्त में गनिकापना साबित नहीं होता है क्योंकि कुछ लालच नहीं पाया जाता है । उत्तर । पहले पद का अर्थ यह है कि प्रीतम का ध्यान करकें मनही मन कहिये मणि नाम रत्न को चाहती है यातें गनिका स्पष्ट ।

दोहा ॥

वार बधू पिय पंथ लखि, अंगरानी अंग मोर।
पौढि रही पर जंक जनु, डारी बदन मरोर ॥१६५॥

मूल अर्थ—वार बधू जो वेश्या पिय के पंथ को देखकैं अंग मोड़ कैं अलसाई और पर्यंक में पौढि रही जैसे कि मानो कामदेवनै मरोर डारी। स्पष्ट अर्थ। मानों काम देव ने मरोर कें डारी है यहां सिद्धास्पद हेतु उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अथ वासक सज्जा लक्षण ॥

दोहा ॥

ऐहैं प्रीतम आजु यों, निश्चय जानो वाम।
साजें सेज सिंगार सुख, वासक-सज्जा नाम ॥१६६॥

मूल अर्थ—आजु नायक ऐहैं यह बात निश्चय जानें और सिंगार और सेज सुख युक्त साजे उसे वासक-सज्जा कहिये।

अथ मुग्धा वासक सज्जा उदाहरण ॥

कवित्त ॥

भई हो सयानी तरुनाई सरसानी प्रीति,
प्रीतम पत्यानी निज लाज डर राखियो ॥
कवि "मतिराम,, काम केलि की कलानि करि,
मोहन लला को बस कीवो अभिलाषियो ॥
मृदु मुसकाय परजंक में निसंक जाय,
अंक भरि आनंद अधर सुधा चाखियो ॥
नेवर की झनक भनक राखि प्यारी आजु,
रसना की झनक तनक रस राखियो ॥१६७॥

मूल अर्थ—सखी बचन नायका से। अब तुम सयानप जुक्त भई हो और तरुणाई सरसाई जो जोवन अवस्था आई है और प्रीति की प्रतीति

भई है यातें अपनी लाज और डर को दूर रखियो और काम केलि की कला करकें मोहन लाल को वश करवे की अभिलाषा रखियो और मन्द २ मुसकानि प्रगट करके पर्यंक जो सज्या पै निसंक जाय कर अङ्क भर के आनन्द से अधरन का अमृत पान करियो और नूपुर की झनक भनक रस राख कर रसना जो कट मेखला कमर का गहना होता है तिनकी भी तनक कहिये थोरी सी झनक को दुरुस्त रखियो ।

प्रश्न—बहुत आनन्द बढ़ कर सेज पै पौढ़ती है तब छिन भर क्यों रहती है और आनन्द जुक्त होकर मुग्धा का सेज पर पौढना भी असंभवहै। उत्तर । नायक निकट नही है तातें सेज के ढिंग जातीहै और है तो मुग्धा परंतु बहुत आनन्द बढ़कें छिन भर प्रौढा की समान दिल होकर सेज पर पांव धरती है । सम्पूर्ण कवित्त के अर्थ में सखी की सुख दायक शिक्षा है यातें शिक्षा आक्षेप अलंकार है ।

दोहा ।

सुखही सुख जहं राखिये, सबही सिख सुखदान ।
शिक्षा आछेप कहैं बरन छः पद वारह मान ।।१।।

इति कवि प्रिया।

दोहा ॥

डीठ बचाय सखीन की, केलि भवन में जाय ।
पौढि रहे छिन सेज में, तिय आनंद अधिकाय॥१६८॥

मूल अर्थ–सखियों की डीठ को बचाय करकें केलि भवन में जायकर तिय आनन्द युक्त होकर छिन भर सेज पैं पौढि रहती है मुग्धा वासक सज्जा स्पष्ट ।

अथ मध्या वासकसज्जा उदाहरण ॥

कवित्त ॥

केसर कनक कहा? चंपक बनक कहा?,
दामिनी यों दुरि जात देह की दमक तें ॥
कवि"मतिराम,,लौने लोचन लपेट लाज,
अरुन कपोल काम तेज की तमक तें ॥

पग के धरत कल किंकनी नूपुर बजे,
बिछिया झनक उठै एकही झमक तें ॥
नाह मुख नाह चित औंचकां हंसति प्यारी,
चौंकि परै चंद मुखी चौकाकी चमक तें ॥१६९॥

मूल अर्थ—केसर और सोना और चंपा के फूल इन का रंग तो कुछ भी नहीं है पर नायका के रंग की दमक से बिजली भी छिप जाती है लोने जो लावण्यता युक्त लाज से लपेटे हुये नेत्र हैं जाके और ललाई युक्त कपोल हैं कामदेव के तेज से तपाये हुये पग के धरने से किंकनी जो कटिमेखला का शब्द होता है और बिछिया भी बजते हैं नायक का मुख देखने की अभिलाषा है ऐसी चंद्र मुखी अपना चौका जो चौके के दांत तिनकी चमक से चैांक पड़ती है।

प्रश्न—नायक के मिलने का मनोरथ करके नायका को बहुत हर्ष बढ़ रहा है यातें वासक सज्जा तो है ही पर मध्या में लाज और काम समान होते हैं सो यहां नहीं पाया जाता। उत्तर। लाज से लपेटे हुये नेत्र कहे तातें आंखों में लाज और कपोलों पर काम की ललाई ऐसे लाज काम समान होकर मध्या स्पष्ट।

दोहा ॥

निस नियराति निहारियत, सौति बदन अरि बिन्दु।
सखी! एक यह देखिये, तेरो आनन इन्दु ॥१७०॥

मूल अर्थ—तेरी सपत्नियोंके वदन राति नज़दीक आतीहै यातें कमल के समान दीखते हैं और हे सखी! एक तेरा मुख चंद्रमा की समान है।

प्रश्न—राति नज़दीक आने से उमग बढ़ती है यातें वासक सज्जा तो जानी गई पर मुग्धा, मध्या और प्रौढा तीनों समान इस दोहे में जानी जाती हैं। उत्तर। मध्या में लाज और काम को समान वर्णन कियाहै सो रात्रि आने से मुख की कांति बढ़ती है यातें काम और नायका किसी चेष्टा या वचन करके सखी से हर्ष जनाती नही है यातें लाज, मध्या वासक सज्जा स्पष्ट।

अथ प्रौढा वासक सज्जा उदाहरण ॥

सवैया ॥

बारनि धूपि अंगारनि धूपि कें,धूम अंध्यारी पसारी महा है॥
आनन चंद समान उगो मृदु,मंद हंसी जनो जोन्ह कहाहै?॥
फैल रही"मतिराम,,जहां तहां,दीपति दीपनि की परभा है ॥
लाल!तिहारे मिलापको बालने,आजु करी दिनमें ही निसाहै१७१

मूल अर्थ—अङ्गारों पै धूप मेल कें वार कहिये केसों कै सुगंध का धूप देती है तिस धुएं की बहुत अन्धियारी फैला रक्खी है, आनन चंद्रमा के समान शोभायमान है मृदु मन्द मुसकानि मानो चांदनी से भी अधिक है और दीपति दीपक की शोभा के समान जहां तहां फैल रही, हे लाल! तुम्हारे मिलाप को आज नायका ने दिन ही में राति बनाय रक्खी है यामें प्रीति की अधिकता है यातें प्रौढा वासकसज्जा स्पष्ट।

प्रश्न—धूम अंध्यारी पसारी महा है सो धूम शब्द पुलिंग और अंध्यारी पसारी महा है यह क्रिया स्त्रीलिंग कैसे लिखी?।उत्तर। धूपके धूएंका भी अंधेरा होरहा और श्याम रंग साडी ओढ रखी है ताको महा अंधियारी लिखी॥ दूसरा प्रश्न। "फैलरही "मतिराम" जहां तहां दीपति" सो जहां नायका बैठी है तहां तिस भवनमें दीपति फैल रहीहै जहां तहां का अर्थ ठौर ठौर है जिस भवन में नायका नहींहै तिस जगह दीपति कहां से फैल रही?। उत्तर। दूसरे और तीसरे इन दोनों पदों का यह अनवय करना कि आनन चन्द समान उग्यो और जहां मृदु मन्द हंसी फैल रही है तहां दीपति दीपन की प्रभा है। अर्थ। चन्द्रमा के समान जहां मुख से मन्द हंसी फैल रही है ताके निकट चान्दनी का प्रकाश भी कुछ मलीन होता है और दीपक के प्रकाश की समान नायका की दीपति बढ रहीहै।

दोहा ॥

सब सिंगार सुंदर सजें, बैठी सेज बिछाय।
भयो द्रोपदी को बसनु, बासुर नाहिं बिहाय॥१७२॥

मूलअर्थ—सर्व सिंगार सजि कें नायका सेज बिछा कर बैठी है और दिन का अस्त होना चाहती है सो दिन द्रोपदी के वस्त्र के समान नहीं व्यतीत होता है। यामें भी प्रीति की अधिकता है यातें प्रौढा वासक सज्जा स्पष्ट ॥ दिन उपमेय और द्रोपदी का चीर उपमान इनकी एकता करके वर्णन यातें समभेद रूपक अलंकार ।

अथ परकीया वासक-सज्जा उदाहरण ॥

सवैया ॥

सांझही तें करि राखे सबें, करिबेके जे काज हुते रजनीके ॥
पौढि रही उमगै अति ही,"मतिराम,,अनंद अमात नहींके॥
सोवत जानि कें लोग सबै, अधिकाने मिलाप मनोरथ पीके॥
सेजतें बाल उठी हरएं हरएं, पट खोलदिये खिरकी के॥१७३॥

मूलअर्थ—सन्धया समयसे ही जो रात्रि में करने के काम थे ते कर-लिये और आनन्द अमात कहिये नहीं समात तन हीं के जो शरीर के भीतर अति ही उमंगसे पौढि रही और लोगों को सोते जान कर सेज से उठी और पिय से मिलने के मनोरथ बहुत बढे और धीरे २ खिडकी के किवाड़ खोल दिये ।

प्रश्न—अनंद अनंत अमात नहीं के अर्थ आनंद अनंत हैं अमात कहिये नही समात फिर नहीं शब्द लिखने से आनंद का निषेध जाना जाता है ।उत्तर। इस पद का यह अर्थ है कि अमात नहीं कहिये कामदार नायक की ओर का वा कोई आदमी नायक की प्रतीत का नहीं है तातें नायका के अनंत आनंद बढ रहा है पर कहीं प्रसिद्ध नहीं ॥ लोगों को सोते जान कें खिड़की के किवाड़ धीरें २ खोलदिये सो यह नायका उप-पति की प्रीति छिपाती है यातें परकीया वासकसज्जा स्पष्ट ।

यहां हर्ष और लाज संचारी भाव की संधि है यातें भाव संधि अलंकार।

दोहा ॥

मन मोहन के मिलन को, करै मनोरथ नार ॥
धरैं पोन के सामुहें, दियो भौंन के वार ॥ १७४ ॥

मूल अर्थ– मन मोहन से मिलने को भारि मनोरथ कर कें दीपक को घर के वारने में पवन के साम्हने रखती है । सो इस से जाना जाता है कि नायका परकीया है क्योंकि उप पति का आना उजाले में नहीं बनता है ।। यहां हर्ष और लाज संचारी भाव की संधि है यातें भाव संधि अलंकार ।

अथ सामान्या वासक सज्जा उदाहरण ॥

कवित्त ॥

सेत सारी सोहत उजारी मुख चंद्र की सी,
महलनि मंद मुसक्यानकी महमही ॥
अंगिया के ऊपर है उलही उरोज ओप,
उर "मतिराम,, माल मालती डह डही ॥
मांजे मंजु मुकर से मंजुल कपोल गोल,
गोरी की गुराई गोरे गातन गहगही ॥
फूलन की सेज बैठी दीपत फैलाय लाय,
वेला को फुलेल फूली बेलि सी लहलही ॥ १७५ ॥

मूल अर्थ–सेत रंग की सारी शोभायमान हैं और उजाली है मुख चंद्र की सी महलों के भीतर मंद मुसकान जो मंद हंसी की महमही जो महिमा हो रही है और अंगिया के ऊपर होके उरोज जो कुचों की शोभा लह रहीहै और हृदय पर मालती के फूलों की माला है और डह डहाय रही है और सुंदर हैं गाल जाके मंजे हुए कांचकी समान और उस गोरी के शरीर में गोरापन का गर्व है फूलों की सेज पर कांति फैला कर और मोंगरे का अतर लगा कर बैठी है और फूली वेलि के समान लहलहाय रही है ।प्रश्न। यहां सामानया में कुछ लालच नहीं पाया जाता है । उत्तर। " माल ती डहडही " इस का यह अर्थ है कि माल नाम द्रव्य की वह स्त्री है सो डहडही होरही है एसे सामान्या वासक सज्जा । दूसरा प्रश्न । महमही नाम शोभा का रक्खा है पर कहीं प्रसिद्ध नहीं उत्तर । उजारी मुख चंद की सी महलन मंद मुसकान की महमही । तो यह अर्थ करना कि उजारी मुख चंद्र की सी महलन अर्थात् महलों के

भीतर मुख की चंद्र कीसी उजाली फैल रही है और मंद हांसी की उजाली महि नाम जमीन के मध्य फैल रही है बेलि उपमान और नायका उपमेय लहलहाना धर्म सी वाचक इन चारों अंग कर के पूर्ण उपमा अलंकार।

दोहा ॥

सुंदरि सेज संवारिकें, साजे सकल सिंगार।
दृग कमलन के द्वार पै, बांधे बंदनबार ॥ १७६ ॥

मूल अर्थ — सेज संवारि के सकल शृंगार साज कें दृग कमलन के द्वार पै बंदनवार बांधि कें बैठी है। प्रश्न। इसमें भी सामानयाधना नहीं पाया जाताहै।उत्तर। इस दोहेका यह अर्थ करना चाहिये कि नेत्र कमलन की माल जो द्रव्य कों बंदन करने के लिये टगटगी बान्धती है इस अर्थ से सामानया वासक सज्जा स्पष्ट॥ दृग कमलन के द्वार पै बंदन माला बान्ध कर नायक को द्रव्य लेने का आशय जताती है यातें सूक्ष्म अलंकार।

अथ स्वाधीनपतिका लच्चण ॥

दोहा ॥

सदा रूप गुन रीझ पिय, जाके रहे अधीन।
स्वाधीन प्रिय तासों कहैं, बरनत कवि परबीन॥१७७॥

मूल अर्थ—रूप और गुन से रीझ कर सदैव नायक जिस नायका के अधीन रहे उस नायका को प्रवीन कवि स्वाधीनपतिका कहकें वर्णन करते हैं। स्पष्ट अर्थ।

अथ मुग्धा स्वाधीन-पतिका लक्षण ॥

सवैया ॥

आपने हाथसों देत महावर, आपही बार संवारत नीके॥
आपु नहीं पहिरावत आनिकें, हार संवारि के मोरसिरीके॥
हों सखी लाजनि जात मरी,“मतिराम,,सुभाव कहाकहों पीके॥
लोगमिलें घर घेरु करैं अबहीं,ते ये चेरे भये दुलहीके॥१७८॥

मूलअर्थ—अपने हाथ से महावर जो झलता लगाता है और अपने हाथ से सिर के केश भी अच्छे संवारता है और आप ही मोरसिरी

के हार सम्हार के पहरातो है हे सखी ! पीय के स्वभाव को कहा कहों? मैं लाज मरती हों और सब लोग घर घेर करते हैं ये अब ही तें दुलही के किंकर होगये ।

प्रश्न—लोग मिलके घर घेरि करते हैं सो घर घेर क्या है ? । उत्तर । घरघेर का यह अर्थ है कि नायका वर्णन करती है कि इस कौतुक के देखने के लिये घर के चारों ओर मनुष्यों का घेरासा होजाता है बहुत लाज करकें युक्त यातें मुग्धा और नायक आधीन है यातें स्वाधीनपतिका स्पष्ट ॥ नायका को बिना ही उद्यम बांछित फल की सिद्धि है यातें प्रहर्षन अलंकार ।

दोहा ॥

अंग अंग अवलोकि कें, तिय जोवन की जोति ।
सुधा सिंधु अवगाह जुत, डीठ नाह की होति ॥१७९॥

मूल अर्थ—तिय के अंग २ में जोवन की जोति है ताको अवलोकन कर के नायक की दृष्टि अमृत के समुद्र को पैरनेवाली होती है ।

प्रश्न—नायक की दृष्टि अमृत के समुद्र को पैरनेवाली होती है याको अर्थ लच्छन लच्छना करकें वा नायका को देखकें नायक सुखी होता है । ध्वनि से याको अर्थ पान करने लायक भी अमृत जिसे मिलता है उसे बहुत सुख होता है सो जब अमृत का समुद्र किसी को प्राप्त होय तो उस दुखका पार नहीं है ऐसा अपार सुख इस नायकके देखने से होता है यामें स्वाधीनपतिका तो जानी जाती है पर मुग्धापना जुदा नही जाना जाता है । उत्तर । यह नायका बहुत लाज युक्त है यातें नायक इस के सर्वांग को नही देख सक्ता है और किसी कारण से जब देखता है तब उस आनंद का नायक को पार नहीं रहता है यातें मुग्धा स्वाधीनपतिका स्पष्ट ।

अथ मध्या स्वाधीनपतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

जगमगे जोवन अनूप तेरो रूप चाहि,
रति ऐसी रंभासी रमासी बिसराइये ॥

देखवे को प्रान प्यारी पास खरो प्रान प्यारो,
घूंघटि उघारि नेंक बदन दिखाइये ॥
तेरे अंग अंग में मिठाई और लुनाई भरी,
"मतिराम,, सुकवि प्रगट यह पाइये ॥
नायक के नैनन में नाइये सुधा सी सब,
सोतिन के लोचनन लोंन सो लगाइये ॥१८०॥

मूल अर्थ—अद्भुत जोवन जगमगाता है और तेरे रूप की चाह से रति को और रंभा को और लक्ष्मी को भी विसरतेहैं हे प्रान प्यारी! तुझे देखने के लिये प्रान प्यारा निकट खड़ा है सो घूंघट उघारि कें याको थोरो सो वदन दिखलाउ तेरे अंगों में मिठाई और लुनाई भरी है सो प्रसिद्ध पाई जाती है तिन में से अमृत के समान तो नायक के नेत्रों में नाइये और सपत्नियों के नेत्रों में लून के समान लगाइये।

प्रश्न—इस कवित्त में सखी लाज छुड़ाया चाहती है सो लाज की अधिता है तातें मुग्धा जानी जाती है और मध्या में तो लाज और काम समान होता है। उत्तर। अद्भुत जोवन जगमगाता है तातें काम और घूंघट नहीं खोलने से लाज। दूसरा प्रश्न। रति ऐसी यह पाठ है तो ऐसी शब्द सादृश्य दूसरी चीज वताने के लिये आता है अर्थात् इस के समान रति है ज्यो कहिये जिस नायका से सखी कहती है तिस की लाज निवारण करने के लिये कहती है तहां रति की सदृश किस को बताती है और वताने का तात्पर्य कौनसा है?। उत्तर। यहां यह अर्थ करना कि रति नाम प्रीति का है सो तेरे रूप की प्रीति में नायक के ऐसी चाह है सो रंभा सी और रमा सी स्त्रियों को विसार रहा है। मिठास और लुनास शामिल यह अनमिलने को संग है यातें विषम अलंकार।

दोहा ॥

बड़े आपने दृगन कों, तुम कहि सको सु मैंन।
पिय नैनन भीतर सदा, वसत तिहारे नैंन ॥१८१॥

मूल अर्थ—अपने नेत्रों को बडे आप कहसको सो मैं नही कहती हूं पिय के नेत्रों के भीतर सदैव तुम्हारे नेत्र बसते हैं ।

प्रश्न—सखी कहती है कि मैं तेरे नेत्रों को बड़ा नहीं कहसकती और तू अपने नेत्रों को बड़ा भले ही कहे तो यह कहने से सखी नायका की निंदा करती है और स्वाधीन पतिका और मध्यापना इस में कुछ भी नहीं पाया जाता है । उत्तर । इस में यह अर्थ है कि नायका लज्जा जुक्त होकर नायक से दृष्टि नहीं मिलाती है याते सखी कहती है कि प्रिय के नेत्रों के भीतर तेरे नेत्र बस्ते हैं सो नायक इस के नेत्रों की ओर निहारता है याते नायक के नेत्रों के भीतर याके नेत्र बसते हैं याते स्वाधीनपतिका और यह नायक के सनमुख लज्जा जुक्त होके नहीं निहारती है याते नायक के नेत्र या नायका के नेत्रों में नहीं बस्ते हैं याते मध्या और सखी कहती है कि तुम्हारे नैत्रों में नायक के नेत्र नहीं समा सकते हैं तो सखी का अभिप्राय यह है कि यह लाज खोल कर नायक के नेत्रों से नैत्र मिला कर देखे तो अच्छी इस अर्थ से मध्या स्वाधीनपतिका स्पष्ट ।। सखी मिस करके अपना कार्य साधती है याते पर्यायोक्ति अलंकार का दूसरा भेद ।

अथ प्रौढा स्वाधीनपतिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

लालन में रति नायकतें शुभ, सुंदरता रुचि पुंजन पेखी ॥
बाल में त्यों "मतिराम,, कहै, रति तें अति रूप कला अवरेखी ॥
सामुहि बैठी लखै एक सेज में, बोल अली सुख प्रीति विशेखी ॥
भाल में तेरे लिखी विधिसो, यहलालकी मूरति लालमें देखी १८२

मूल अर्थ—नायक में कामदेव से भी अधिक रुचिकारक सुन्दरताई के पुंज हैं और नायका में कामदेव की स्त्री से अधिक रूप की कला दिखाई देती है सनमुख बैठकर एक सेज पै सुख से देखतेहैं सो अली प्रीति करके कहती है तेरे भाल में लाल की मूरति ब्रह्मा जी ने लिखी है सो हे लाल ! मैंने यह अवलोकन कीनी है ।

प्रश्न—कामदेव से शुभ सुन्दरता है सो तो वाजिब पर रुचि कोंन से पदार्थ की है ?। दूसरा प्रश्न। नायका में रति से भी अधिक रूप है पर कला काहे की है ?। तीसरा प्रश्न। नायका प्रौढ़ा तो स्पष्ट है पर स्वाधीनपतिका सावित नहीं होती है। उत्तर क्रमसे तीनों प्रश्नोंके। सुन्दरता और रुचि इन दोनों गुणों के पुंज नायक में काम से भी श्रेष्ठ हैं। दूसरा उत्तर। नायका केल कला में निपुण है और रति से भी अधिक स्वरूपवान है। तीसरा उत्तर। साम्हने बैठे एक से लखते हैं और अली कहती है कि तेरी प्रीति के सुख की विशेषता को जपते हैं तेरे भाल में यह लाल की मूरति विधि ने लिखी है सो है लाल। आज मैंने देखी।

फिर प्रश्न—इस कवित्त के अर्थ में नायक का अधीनपना नहीं पाया जाता है। उत्तर। सामुहिं बैठे इस पद का यह अर्थ करना चाहिये कि सामुहिं बैठे लखो एक से कहिये सन्मुख बैठ कर एक से देखते हैं अर्थात् एक टगटगी बांधकर तुम्हारी ओर देखते हैं। अन्वय उत्तरार्द्ध का अली बोली जपै सुख प्रीति विशेखी। अर्थ। और सखी कहती है कि तेरी प्रीति के सुख की विशेषता को जपते हैं॥ आभूषण हैं सो आधेय और पुरुष आधार सो यहां नायक को लाल के भीतर देखा यातें आधार और आधेय तें सूक्ष्म है।

दोहा।

अलप अलप आधेयतें, सूक्ष्म होय अधार।

इति अलंकार रतनाकर।

दोहा॥

सुधा मधुर तेरे अधर, सुन्दर सुमन सुगंध।
पीय जीव के बंधु यह, बंधु जीव के बंध॥१८३॥

मूल अर्थ—सुधा जो अमृत से भी मधुर जो मिठास जुक्त और सुमन जो फूल की समान सुगंध जो है सुवास जिनमें और बन्धु जीव का फूल लाल रंग होता है तिसके बंधु जो हैं भाई और नायक के जी के बन्ध जो बन्धन अर्थात् वस करने वाले ऐसे तिहारे मधुर कहिये होठ हैं।

प्रश्न—सखी कहती है कि तिहारे होठ नायक को वस करने वाले हैं यातें स्वाधीनपतिका तो जानी गई पर प्रौढ़ापना किसी विशेषता से नहीं जाना जाता है सखी के बचनों में नायका के होठ की तारीफ है

यातें मुग्धा मध्या और प्रौढा तीनों समान हैं। उत्तर । सखी कहती है कि तेरे अधर में अमृत के समान मिठास है और उस अधरामृत को नायक आनन्द से पान करके आधीन है यातें प्रौढ़ा स्पष्ट ॥ बन्धु जीवका बन्धु कहने से यह अर्थ हुआ कि अधर बन्धु जीव के फूल की समान लाल रंग हैं यहां बन्धु कहने से बरोबरी होती है यातें अर्थी उपमा अलंकार ।

दोहा ।

जो अर्थहि से होत है, अर्थी उपमा ऐन ।

इति अलंकार चंद्रिका ।

अथ परकीया स्वाधीन पतिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

मो जुग नैंन चकोरन कों यह, रावरो रूप सुधा ही को नैवो ॥
कीजै कहा कुल कानि तें आनि,परयो अब आपनों प्रेम छिपैवो ॥
कुंजनि में "मतिराम,,कहूं,निसि द्योसहू घात परें मिलि जैवो ॥
लालसयानीसखीनकेबीचनिवारियेयहांकीगलीनकोऐवो १८४

मूल अर्थ—मेरे दोनों नेत्र रूप चकोरन को आप को रूप अमृत के नेवा के समान हैं और कहा करिये कुल मर्यादा से आन परयो है अपनो स्नेह गुप्त रखवो और कुञ्ज भवनमें रात और दिनमें घात पायकर मिलजाइये हे लाल । सयानी सखियों के बीच इस गली में आइवो निवारण करिये ।

प्रश्न—सुधा ही को नैवो सो सुधा नाम अमृत तो सब को आनन्द दायक है सो केवल चकोर को क्या लिखा ? । दूसरा प्रश्न । अमृत पान का सुख है नमावे का नहीं । उत्तर । मेरे नेत्र चकोरन को रावरो रूप सुधाही नाम चन्द्रमा का झुकन है ।। कुल कानि तें प्रेम छिपैवो यह विशेष है ताकों हे लाल । सयानी अलीनके बीच इस गलीको ऐवो निवारिये इस सामान्य अर्थ करके पहले विशेष को दृढ किये यातें अर्थान्तर न्यास अलंकार ।

दोहा ।

जो विशेष सामानय दृढ़, तहां अर्थान्तर न्यास ।

इति अलंकार रतनाकर ।

दोहा ॥

विषम लोग बृज गांम को, लाल! बिलोको वास।
बढजैहै इन दृगन के, हां सहिते उपहास ॥१८५॥

मूल अर्थ—हे लाल। बृज के लोगन में वास विषम है ताको देखिये और नेत्रों की हांसी से उपहास जो अपयश बढ़ जायगा।

प्रश्न—बृज देश है ताको गाम कैसे लिखा? ।उत्तर। नायका कहती है यहां बृज देश है याको लोग विषम है और गाम को वास है यहां बन नहीं। यहां हांस से उपहास बढ़नो यह कारण कारज को एक अङ्ग कह्यो यातें दूसरा हेतु अलंकार।

दोहा।

हेतु अलंकृत होत जब, कारण कारज संग।
कारण कारज पुनि तबै, बसत एकहीअंग ॥१॥

इति अलंकार रतनाकर।

अथ सामान्या स्वाधीनपतिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

वारन वार संवारि सिंगारत, मोतिन हार धरें तन गोरें ॥
पाइं महावर देत बनाय यूं, वैनी बनावत नेह निहोरें ॥
यों रस लीन रहै नितही वस, औरन सों दृग नाहन जोरें॥
लाज गिने नहिं लोगन की,पिय पांइ परे धन देत किरोरें १८६

मूल अर्थ—वार जो केश ताको वार कहिये कंघी लगाता है और मोतियों का हार गोरे तन जो गोरे शरीर पै धारन कराता है और पावों के बनाकर महावर देता है और स्नेह से निहोरा करके बैनी बनाता है ऐसें रसलीन होकें मेरे आधीन रहता है फिर और से नेत्र नही मिलाता है और लोगों की लाज नहीं गिनताहै और वह नायक ऐसा है कि पावों में पड़के किरोड़ों धन देता है।

प्रश्न—पाईं महावर देत बनाय पैरों के महावर बनाता है वा देता है इन दोनों शब्दों में से एक ही लिखना वाजिव था। उत्तर। नायक महावर को बनाता कहिये तयार भी आप करता है और मेरे पैरों के भी

अपने हाथ से लगाता है। दूसरा प्रश्न। नायका नटै तब नायक को निहोरा करना पड़े सो नायका सुकिया होय जिसकी तो नायक सेवा करै तब लज्जित होके और अनुचित जान कर नटै और यह गणिका काहे को नटै? । उत्तर। नेह निहोरे सो प्रेम दृष्टि से अवलोकन करै। तीसरा प्रश्न। नायक रस से लीन होकर बस रहता है सो रस के बस रहता है वा एक इसी नायका के बस रहता है। उत्तर। ऐसे रसलीन कहिये रस लिये हुये मेरे बस रहता है अर्थात् ऐसे मेरे बस में लीन है और मेरे बस रहता है और से दृग नहीं जोरता है॥ नायका के पाओं में पड़ना और किरोड़ों धन देना यह विपरीतता करके इच्छाफल प्रीति दृढ़ करताहै यातें विचित्र अलंकार।

दोहा॥

छांडि सबै सुधि सदन की, रहत मदन बस लीन।
मोही कों धन देत हैं, पिय सुजान परवीन॥१८७॥

मूल अर्थ—घर की सब सुधि छांड कर मदन जो कामदेव से लीन होकर मेरे बस अर्थात् आधीन रहता है और सुजानताई में प्रवीण ऐसा जो पिय है सो मुझे धन देता है।

प्रश्न—पिय सुजान परवीन सुजान और प्रवीन का एक ही अर्थ है सो पुनरुक्त क्यों लिखा ?। उत्तर। ऐसा अर्थ करना कि पिय सु कहिये श्रेष्ठ और प्रवीन मुझे जान के धन देता है।। विना यत्न नायका को वांछित फल की सिद्धि यातें प्रहर्षन अलंकार।

दोहा॥

मोहि लगो सजनी! भलो, जाको धन मन प्राण।
सपनेहू ता पीय सौं, मान भलो न सयान॥१८८॥

मूल अर्थ—हे सजनी ! जाके धन और मन और प्राण सब मोसे लग रहे हैं ता पिय सों सपने में भी मान करना यह सयानप अच्छा नही है।। मान नही करने को सपने में भी मान भला नहीं इस वचन करकें समर्थ किया यातें काव्य लिंग अलकार।

दोहा।

काव्यलिंग जब जुक्ति सों, अर्थ समर्थक होय।

इति भाषा भूषण।

अथ अभिसारिका लक्षण ॥

दोहा ॥

पियहि बुलावे आप कें, आपहि पिय पै जाय।
ताहि कहत अभिसारिका, जे प्रवीन कविराय॥१८९॥

मूल अर्थ—नायक को अपने पास बुलावे वा आप नायक के पास जाय ताको प्रवीन कविराय अभिसारिका कहते हैं। स्पष्ट अर्थ।

अथ मुग्धा अभिसारिका उदहारण ॥

सवैया ॥

वातन जाय लगाय लई रस, ही रसकें मन हाथ के लीनो॥
लाल! तिहारे बुलावने को "मतिराम,, में बोल कह्योपरवीनो॥
बेग चलो न विलंब करो लखि, बाल नवेलीकें नेह नवीनो॥
लाजभरी अंखियांविंहसीचलीबोलकह्योबिनउत्तरदीनो१९०॥

मूल अर्थ—सखी वचन नायक से॥ जाय कें वातें लगाईं और रसही रस से मन हाथ करलियो फिर लाल तिहारे बुलाने का बोल मैंने प्रवीन ताई से कहा अब विलम्ब जिन करो उतावल से चलो नवीन नायका का नया नेह है ताको देखो लाज से भरी हुई अंखियों से बिहसी और छल वोल कहे जो कपट के बोल कहे विना उत्तर दीने।

प्रश्न--कपट के वोल कहे यातें नायका बहुत प्रवीण जानी जाती है यामें मुग्धापना और अभिसारिकापना कुछ भी नहीं पाया जाता है। उत्तर। सखी कहती है कि मैंने नायका का मन हाथ करके प्रवीणताई से आप के बुलाने का बोल कहा तब नायका ने उत्तर नहीं दिया और यह बचन कहा कि चल सो अब आप जल्दी से चलिये मुग्धा अभिसारिका स्पष्ट।

दोहा ॥

चली अली नवला हिले, पियपै साज सिंगार।
ज्यों मतंग अड़दार को, लियेजात गड़दार॥१९१॥

मूल अर्थ—अनवय, नवलाको शृंगार साजिकैं पिय पैं आली लेके चली जैसे कि अड़दार मतंगको गड़दार (गिलोलों से मारने वाले साटदार) लेजाते हैं । अर्थ । जैसे अड़दार हाथी को गड़दार जो साट-मार लेजाते हैं तैसे नवला जो नवीन वयकी नायका को सिंगार साजकें आली पिय पैं लेकें चली । मुग्धा अभिसारिका स्पष्ट । नायका उपमेय और मतंग उपमान की एकता कर के वर्णन यातें रूपक अलंकार ।

अथ मध्या अभिसारिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

बैठि रहे "मतिराम,, लला घर,
भीतर सांझहि तैं अनुरागी ॥
बानिक सौं बनि चारु सिंगार,
न आई सुहागिनि प्रेम सूं पागी ॥
प्यारे कह्यौ हंसि आइहि सेजहि,
प्यारी की जोति बिलासनि जागी ॥
नैंन नवाय रही मुसकाय कें,
हार हिये को संवारन लागी ॥ १६२ ॥

मूल अर्थ—नायक घर भीतर संध्या समय से ही अनुराग युक्त होकर बैठ रहे तब बानक सों चारु शृंगार बना कर सुहागन प्रेम सों पगी हुई आई तब नायक ने हंसि कर कहा कि सेज पर आइये तब प्यारी की उछाह से कांति बढी और मुसकाय के नेत्र नमाय कें हृदय के हार के सम्हारने लगीं और सम्पूर्ण अर्थ में काम की अधिकता और नेत्र नवाय रही यातें लज्जा सो काम लाज समान होकर मध्या और चलाय कर गई यातें अभिसारिका स्पष्ट । नायक अनुराग युक्त होकर सांझ ही तें घर भीतर बैठ रहा और नायका शृंगार कर के प्रेम युक्त केलि भवन में आई यहां जथाजोग का संग है यातें सम अलंकार ।

दोहा ।

अलंकार सम तीन विधि, जथा जोग को संग ।

इति अलंकार रतनाकर ।

दोहा ॥

जोवन मद गज मंद गति, चली बाल पिय गेह ।
पगनि लाज आंदू परी, चढ्यो महावत नेह ॥१६३॥

मूल अर्थ—जोवन के मद से मस्त होकर मस्त हाथी की तरह मंद गति से नायका नायक के पास चली स्नेह रूपी महावत चढ़ के लेजाता है और जाके पगों में लाज के आंदू जो लंगर पड़े हैं जोवन मद से काम और पावों में लाज के संकल कहने से लज्जा याते मध्या और पिय पै जाती है याते अभिसारिका स्पष्ट । यहां भी गज उपमान और नायका उपमेय इन दोनों का एकता कर के वर्णन याते रूपक अलंकार ।

अथ प्रौढा अभिसारिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

सहज सुबास जुत देह की दुगुन दुति,
दामिनी दमक दीप केसरि कनक तैं ॥
"मतिराम,, सुकवि सरस सुकमार अंग,
सोहत सिंगारु चारु जोवन बनक तैं ॥
सोयबे को सेज चली प्रान पति प्यारे पास,
जगत जुन्हाई जोति हंसन तनक तैं ॥
चढत अटारी गुरु लोगन की लाज भारी,
रसना दसन दाबे रसना झनक तैं ॥ १६४ ॥

मूल अर्थ—सहज सुगंध युक्त है और देह की दूनी कांति फैलती है बीजली और केशर और सोने से भी अधिक है जाके शरीर की रंगति और

फूल से भी कोमल है जाको अंग और शोभायमान हैं शृंगार चारु और जोवन की बनावट से बन रही है सोयवे को सेज पै प्यारे प्रान पति के पास चली है और थोरीसी हंसनि से चांदनी के समान जोत फैलती है और गुर लोगन की लाजसे वह प्यारी अटारी पै चढ़ती हुई कटि मेखला के झनकार से दांतों में जीभ दाबती है। सम्पूर्ण कवित्त के अर्थ में नायका उत्साह युक्त नायक के पास जाती है और नायक से याको लाज नही है और गुरु लोगन की लाज से जब कटि मेखला का शब्द होता है तब दांतों में जीभ दाबती है यातें प्रौढा अभिसारिका स्पष्ट।

प्रश्न– सहज सुवास से जाना गया कि नायका ने कुछ सुगंध द्रव्य नहीं धारन कियो सो प्रौढ़ा सकल कलाओं में प्रवीण होती है और अपने नायक के पास जाती है तब सुगनध द्रव्य अंग राग क्यों नही धारन किया? । दूसरा प्रश्न । देह की दुगुन दुति सो दूनी दुति कैसे भई ?। तीसरा प्रश्न । दामिनी की दमक और दीप से भी दूनी और केसर कनक से भी दूनी सो दामिनी से दूनी कही तब केसर कनक से अनंत गुनी कहनी चाहिये । उत्तर । ऐसा अर्थ करना कि सहज सुवास जुत सो तो नायका रूप गर्विता है सो अपने तन की सुगंध समान अंग राग में सुगंध नहीं जान कें अंग राग नहीं धारन किया दुगुन द्युति सो शरीर की स्वाभाविक द्युति नायक से मिलने का मनोरथ करके प्रगट फैल रही है फिर दामिनी की दमकि से वह दीपति केसर और कनकसे भी दूनी दिखाई देती है किंकनी की झनक से लज्जित होके दांतों से जीभ को दावनी है और यह स्वकीया नायका की स्वाभाविक प्रकृति है यातें स्वभावोक्ति अलंकार।

दोहा ॥

सजि सिंगार सेजहि चली, वाल प्रान पति प्रान।
चढ़त अटारी की सिढ़ी, भई कोस परमान ॥१६५॥

मूल अर्थ–वह नायका प्रान पति के पास शृंगार कर के सेज पै चली और अटारी की सिढी जो निसेनी चढिबे में कोस के प्रमाण भई प्रौढ़ा अभिसारिका स्पष्ट । चपलता संचारी भाव का उदय यातें भाव उदय अलंकार।

अथ परकीया अभिसारिका के तीन भेद हैं जो अंधेरी राति में श्याम पोशाक अंधेरे से मिलती हुई करके अंधेरे में छिप कर जाती है सो कृष्णा और चांदनी राति में सफेद पोशाक चांदनी से मिलती हुई कर के उजाला में मिलकर छिपी हुई जाती है वह शुक्लाभिसारिका और जो दिनमें दोपहर के समय सूर्य्य की धूप से मिलती हुई पोशाक करके जो नायक से मिलने को जाती है वह दिवाभिसारिका कहलाती है।

अथ परकीया कृष्णाभिसारिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

उमड़ि घुमड़ि दिग मंडलन मंड रहे,
झूमि झूमि बादर कुहूकी निसि कारी मैं ॥
अंगन मै कीनो मृग मद अंगराग तैसो,
आनन उठाय लीनो श्याम रंग सारी मैं ॥
"मतिराम,, सुकवि मेचक रुचि राज रही,
आभरनि राज मरकति मन वारी मैं ॥
मोहन छवीले को मिलन चली ऐसी छवि,
छांहलों छवीली छवि छाजत अंध्यारी मैं ॥ १९६ ॥

मूल अर्थ—उमड़ि घुमड़ि होकर दिशाओं के मंडल बदलों से अमावस की श्याम रात्रि में मंढ़ रहे हैं और अंग में कस्तूरी का लेप करके श्याम रंग की सारी से मुख ढांक लिया है और मरकत मणि के श्याम आभूषण पहर लिये हैं इस प्रकार छबीले मोहन से मिलने के लिये अंधेरी में भी छाया के समान होकर चली है।

प्रश्न—अंगनमें कीनो मृगमद अंगराग तैसो आनन उठाय लीनो श्याम-रंग सारीमें सो शरीरपैं मृग मदका श्याम अंगराग कीनो और तैसा आनन ताको श्याम रंग सारी में ढक लीना सो तैसा आनन कहा सो क्या आनन भी श्याम रंग था?। उत्तर। बादलों से ढकी हुई कुहू की श्याम निशा सोई शरीर पे मृग मद को अंगराग कीनो। दूसरा प्रश्न। अंध्यारीमें

छबीली की छबि छांहलों छाजत सो अंध्यारीमें छांहकी छबि कहां होती है ?। उत्तर। अनध्यारी में छांह तैसे छबीली की छबि छाजत है अर्थात अनध्यारी में छांह मिल जाती है तैसे नायका भी मिल रही है वा छांह दिखाई नहीं देती तैसे नायका भी दिखलाई नहीं देती है ॥ परकीया कृष्णाभिसारिका का स्पष्ट । यहां नायका उपमेय और छाया उपमान लों वाचक छबि धर्म ये चारों अंग साबित हैं यातें पूर्ण उपमा अलंकार ।

दोहा ॥

श्याम बसन में श्याम निसि, दुरी न तियकी देह।
पहुंचाई चहुं ओर घिरि, भौंर भीर पिय गेह ॥१६७॥

मूल अर्थ- अंध्यारी रात्रि में श्याम रंगके वस्त्र पहनकर चली पर नायका की देह की दमक नहीं छिपी पर भौंरन के समूह ने चारों ओर से घेर के नायक के घर में पहुंचाई परकीया कृष्णाभिसारिका स्पष्ट ।

यहां श्याम निस और श्यामवस्त्र छिपाने के हेतुहैं तातें नायका की देह नहीं छिपी यातें विशेषोक्ति अलंकार ।

अथ परकीया शुक्लाभिसारिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

अंगन में चंदन चढ़ाय चारु घन सार,
सेत सारी क्षीर फेनकीसी आभा उफनाति है ॥
राजत रुचिर रुचि मोतिन के आभरन,
कुसम कलित केश शोभा सरसाति है ॥
कवि "मतिराम,, प्रान प्यारे सौं मिलन जात,
करके मनोरथन मृदु मुसकाति है ॥
होत न लखाई निस चंदकी उज्यारी मुख,
चंदकी उज्यारी तन छांह छिपि जाति है ॥१६८॥

मूल अर्थ- शरीर में चंदन और कपूर का लेप करके क्षीर फेन सी सफेद सारी में शोभा जुक्त होकर मोतियों के सुन्दर आभूषण पहरके स्वेत फूल

वेणी में गुंथ कें प्रान प्यारे से मिलने का मनोरथ करके मंद मुसकाती हुई चली सो रात्रि के चंद्रमा की उजाली से नहीं दिखाई देतीहै और नायका के मुख की कांति से छाया भी छिप गई है परकीया शुक्लाभिसारिका स्पष्ट । चंद्रमा की उजाली में नायका नहीं दिखलाई देती है यातें मीलित अलंकार ।

दोहा ॥

मलिन करी छबि जोन्हकी, तन छबि सौ बलि जाउं ॥
क्यों जैहों पिय पै सखी?, लखि जैहे सब गांउ ॥१९९॥

मूलअर्थ—बल जाउं कहिये तेरी बलैया लेतीहूं तनकी कांतिसे चांदनी को मलिन कीनी नायक पै कैसे पहुंचेगी? सब गाम देखेगा परकीया शुक्लाभिसारिका स्पष्ट । तनक छबि सों चांदनी को मलीन किया अर्थात तन की छबि चांदनीसे वढ़ निकली और चांदनीमें नहीं मिली यातें उन्मीलित अलंकार ।

दोहा ।

उन्मीलित सादृश्यतैं, भेद भिरे तव मान ।

इति भाषाभूषण ।

अथ परकीया दिवाभिसारिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

सारी जर तारी की झलक झलकति तैसो,
केसरि को अंगराग कीनो सब तन मैं ॥
तीक्षण तरुण के किरण तैं दुगुन जोति,
जगत जवाहर जटित आभरन मैं ॥
कवि "मतिराम,, आभा अंगनि अंगारन की,
धूमकीसी धार छबि छावत कुचन मैं ॥
ग्रीष्मि दुपहरी मैं हरि कौं मिलन जात,
जानी जात नारि न दवारि जात बन मैं॥२००॥

मूल अर्थ—सुनहरी जरीसे जड़ी हुई सारी झलकती है तैसा ही केसरका लेप शरीर पै किया और सूर्य की तीक्ष्ण किरणों से जड़ाऊ आभूषणों की दूनी जोति जागती है और अंगर की कांति अंगारों के समान दरसती है और धुयें की धार के समान केशों की छबि हो रही है । ग्रीष्म की दुपहरी में कन्हैयाजी से मिलने को नायका जाती हुई नहीं दिखाई देती है और बन में दावाग्नि के समान दरसती है परकीया दिवाभिसारिका स्पष्ट । नायका उपमेय और दावाग्नि उपमान इन की एकता करके वर्णन यातें रूपक अलंकार ।

दोहा ॥

ग्रीष्म ऋतु की दुपहरी, चली बाल बन कुंज ।
अंगि लपट तीक्ष्ण लुएं, मलय पवन के पुंज ॥२०१॥

मूलअर्थ—ग्रीष्मऋतु की दुपहरी में बाल नायक से मिलने के लिये बनकुंजको चली वाके शरीरसे तीक्ष्ण लू लपटके मलय पवन पुंजके समान होती हैं । परकिया दिवाभिसारिका स्पष्ट । तीक्षण लू नायकाके शरीर से लपटके अपना स्वभाव छोड़तीहै और नायका के शरीर स्पर्श से शीतल और सुगन्ध युक्त होती है यातें तद्गुन अलंकार ।

दोहा ।

सद्गुन तजि गुन आपनो, संगति का रस लेय ।
इति अलंकार रत्नाकर ।

अथ सामान्या अभिसारिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

सांझही सिंगार साजि प्रान प्यारे पास जाति,
वनिता बनक बनी बेलिसी अनंगकी ॥
कवि "मतिराम,, कल किंकिनी की धुनि बाजैं,
मंद मंद चलनि बिराजत गयंदकी ॥
केसरि रंग्यो दुकूल हांसी में झरति फूल,
केशनि में छाई छबि फूलन के वृंद की ॥

पीछे २ आवत अंधेरी सी भंवरि भीर,
आगे २ फैलत उजारी मुख चन्दकी ॥२०२॥

मूल अर्थ—संध्या समय में शृंगार कर के प्रान प्यारे के पास नायका जाती है बानक से काम देव की बेलि के समान बनी हुई कल किंकिनी की धुनि बाजती है और मन्द २ मस्त हाथी के समान चलती है और केसर से रंगा हुआ चीर है और हांसी में फूल से झरत हैं और फूलों का समूह केशोंमें गुंथा हुआहै वाके पीछे २ अंध्यारीके समान भोंरों की भीर आती है और वाके आगे २ मुख चंद्र कीउजाली फैलती है।

प्रश्न— इस में कुछ लालच नहीं पाया जाता है यातें सामान्या स्पष्ट नहीं होती है । उत्तर। बनिता बनिक बनी बेलि सी अनंग कै इस पद का यह अर्थ करना चाहिये कि वह बनिता अनंग जो कामदेव की बनिक जो ब्योपारिन बनके चली है यातें सामाजयाभिसारिका स्पष्ट । अंध्यारी और उजाली दोय पदार्थ के आश्रय एक नायका को रक्खी यातें पहला पर्यायोक्ति अलंकार।

दोहा ॥

नागरि सकल सिंगार सजि, चली प्रान पति पास।
बाढि चली बिहसन मनो, शोभा सहज सुबास ॥२०३॥

मूल अर्थ—नायका सकल सिंगार करके अपने प्रान पति के पास चली वाके सहज सुवास की शोभा विहंस के बढ चली।

प्रश्न—दोहे के अर्थ में लालच नहीं पाया जाता है यातें सामान्या स्पष्ट नहीं होती है । उत्तर । सहज सुवास बढ चली कहने से जाना गया कि नायका ने कुछ सुगंध पदार्थ धारन नहीं किया इससे नायका की यह अभिलाषा जानी जाती है कि नायक से कहेगी कि अतर अरगजा इत्यादि सुगंध पदार्थ मेरे पास नहीं हैं सो आप संगवा दीजिये अर्थात आप द्रव्य बखशीश करें तो मैं मंगाय लूंगी इस लालचसे सामान्या और चल कर नायक के पास गई यातें अभिसारिका इस प्रकार सामान्याभिसारिका स्पष्ट।

अथ प्रवच्छाति पतिका लक्षण ॥

दोहा ॥

होनहार पियके बिरह, बिकल होय जो बाल ।
ताहि प्रवच्छति प्रेयसी, वरनत वुद्धि बिसाल ॥ २०४॥

मूल अर्थ—पिय के वियोग होने के आगम से जो नायका अकुलाती है ताको अच्छे बुद्धिमान प्रवच्छति-पतिका कहके वर्णन करते हैं, स्पष्टअर्थ।

अथ मुग्धा प्रवच्छाति-पतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

जादिन तैं चलवे की चरचा चलाई तुम,
ता दिन तैं वाके पियराई तन छाई है ॥
कहैं "मतिराम,, छोडे भूषण बसन पान,
सखीन सौं खेलनि हसनि बिसराई है ॥
आई ऋतु सुरभ सुहाई प्रीति वाके चित,
ऐसे मैं चलो तो लाल रावरी बड़ाई है ॥
सोवत न रैंन दिन रोवति रहति बाल,
बूझे तैं कहत मायके की सुधि आई है ॥२०५॥

मूल अर्थ—जिस दिन से तुमने चलबे की चरचा चलाई है तिस दिन से वाके तनमें पिलास छा रहा है और भूषन और बसन और पान सब छोड़ रक्खे हैं और सखियों के संग हंसना खेलना भी भूल रही है और सुरभी जो बसन्त ऋतु आई है और वाके चित्त में भी प्रीति सुहाई है हे लाल ! इतने पर भी चलोगे तो तुम्हारी बड़ाई है और वह बाल राति दिन सोती नहीं है और रोती रहती है और पूछने से कहती है कि मुझे पीहर की सुधि आई है । प्रश्न । सुहाई प्रीति वाके चित्त सो चित में असुहाई प्रीति नहीं होती है । उत्तर । ऐसे अर्थ करना कि सुहाई सुरभी ऋतु आई है तातैं वाके चित्त में प्रीति भई है नायका पूछने से पिय

बिदेश को जाता है ता दुःख को छिपाती है और कहती है कि मुझे पीहर की सुधि आई है यहां युक्ति अलंकार है।

दोहा।

यह युक्ति कौने क्रिया, मरम छिपायो जाय॥

इति अलंकाररतनाकर।

दोहा॥

क्यों सहिहै सुकुमार वह, पहलो बिरह गुपाल।
जब वाके चितहित भयो, चलन लगे तब लाल॥२०६॥

मूल अर्थ—वाके चित्त में जब हित भयो तब लाल तुम चलने लगे हे गोपाल! पहिले विरह को वह बाल कैसे सहेगी? मुग्धा प्रवच्छति पतिका स्पष्ट।

अथ मध्या प्रवच्छाति पतिका उदाहरण॥

सवैया॥

गौनेके द्योस छः सातकबीते न,चौथी कहा अबहीं चलि आई॥
लालन बाल कें ता छिन में,"मतिराम,,परी मुख पै पियराई॥
तू न बहू को पठाय अली! यह,देख दुहून की प्रीति सुहाई॥
रोये से रोचन मोये से लोचन, सोये न सोच न रैन बिताई२०७

मूल अर्थ—गौने के छः सात दिनही नहीं बीते हैं और चौथा आना पीहर से अबहीं चलि कें कैसे आया है? और लालन कें और बाल कें तबहीं ते मुख पर पिलाई पड़ रही है हे सखी! तूं बहू को मत भेज यह दोनों के प्रीति सुहाई है और सोये नहीं हैं और सरोस होके रोये हैं याते लाल रक्त नेत्र होरहे हैं।

प्रश्न। सोचन रैन बिताई सो सोचन का अर्थ नहीं सोच कर के रैन बिताई तब रोये काहे को?। उत्तर। अर्थ ऐसे करना कि "सोये न सोचन रैन बिताई" सोच करके न रैन बिताई अर्थात रैन बहुत बड़ी हुई प्रीति सुहाई इस सामान्य अर्थ को सोये नहीं और रोये हैं इस विशेष अर्थ करके समर्थ किया यातें अर्थान्तर न्यास अलंकार।

दोहा ॥

अब हीं लै मिलि मोहि सखि!, चलत आज बृजराज।
अँसुवन राखति रोकि कैं, जियहि निकासत लाज॥२०८॥

मूल अर्थ—हे सखी ! आज ब्रजराज चलता है तूं अबहीं मुझे चल के मिलाव आंसुओं को रोक के राखती हूं, जिय को लाज निकालती है मध्या प्रवच्छति पतिका स्पष्ट ।

अथ प्रौढ़ा प्रवच्छति पतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

मलय समीर लागे चलन सुगंध सीरो,
पथिकन कीने परदेशन तें आवने ॥
"मतिराम,, सुकवि समूहनि सुमन फूले,
कोकिल मधुप लागे बोलन सुहावने ॥
आयो है बसंत भये पल्लव जलज तुम,
यातें लागे चलबे की चरचा चलावने ॥
रावरी तिया को तरवर सर वरन के,
किसले कमल ह्वै हैं बारक बिछावने ॥२०९॥

मूल अर्थ—सीत मन्द सुगन्ध मलयका पवन चलने लगा और पथिक जनों ने परदेश से आने का आगम किया और फूलों के समूह के समूह फैल रहे हैं और कोकिल और भौंरे सुहावने शब्दसे बोलने लगे हैं और बसन्त ऋतु आई है और कमल सपल्लव भये हैं और तुम यातें चलवे की चरचा चलाने लगे हो। सो तुम्हारी प्यारीको वृक्षोंके और लताओंके किसले और कमल सेज पर दाहक होवेंगे ऐसे समाचार सखीने नायका के कहने से कहे हैं यातें प्रौढ़ा प्रवच्छति पतिका स्पष्ट । किसलें और कमल शीतल पदार्थ हैं ते दाहक होवेंगे तो यहां शीतल कारण से दाहक कार्य होना बिरुद्ध यातें पांचवो बिभावना है ।

दोहा ॥

कोंपनि तैं किसलैं जबै, होय कलिन तैं कोल।
तब हीं चलियो चलन की, चरचा नायक नोल॥२१०॥

मूल अर्थ—कलियों से कमल होय और किसलय से कोंपलें होंय हे नवल नायक ! तब चलने की चरचा चलाइये, प्रौढ़ा प्रवच्छति पतिका स्पष्ट। सखी नायक को वसन्त ऋतु जताय कर रचना से मने करती है यातें पर्यायोक्ति अलङ्कार का पहला भेद है।

अथ परकीया प्रवच्छति पतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

मोहन लला को सुन्यो चलनि विदेश भयो,
बाल मोहनी को चित निपट उचाट मैं ॥
परी ताला बेली तन मन मैं छबीली राखे,
छित पर छिनक छिनक पांव खाट मैं ॥
प्रीतम नयन कुबलयन कौ चंद घरी,
एक मैं चलेगो "मतिराम,, जिहि बाट मैं ॥
नागरी नवेली रूप आगरी अकेली रीती,
गागरी ले ठाढ़ी भई बाट ही के घाट मैं ॥२११॥

मूल अर्थ—मोहन लाल के चलबे को बाल सुनो है तबतें चित्त बहुत उचाट हुआ और तन मन में तालाबेली परी छिन भर में पांव खाट पर रखती है और छिन भर में जमीन पर रखती है पीतम कमोदनी रूप नैनन को चन्द्रमा घरी भर में इस राह होकर चलेंगे यह जान के रस्ते के घाट पर रीती गागरी लेकें ठाढ़ी भई रीती गागरि पयान समय में मनमुख मिलना असगुन है सो यह नायका प्रसिद्ध में नहीं मने कर सकती है यातें रीती गागरि का असगुन देने को खड़ी है यातें परकीया प्रवच्छति पतिका स्पष्ट। नायक बिदेश जाता है तब बाट के घाटपै रीती गागरि लेकें

खड़ी हुई सो यह कुसगुन देना इस बिपरीतता कर के नायक को अपने संयोग रखना इस इच्छा फल को साधती है यातें विचित्र अलङ्कार ।

दोहा ॥

चलत सुन्यो परदेश कौं, हियरा रह्यौ न ठोर ।
लै मालन मीतहि दयो, नव रसाल को मोर ॥२१२॥

मूल अर्थ—परदेश में नायक का जाना सुना तब नायका का हृदय ठाह पर नहीं रहा और मालिनी से लेके नायक को आंबका नवीन मंजर दिया । इस दोहे के अर्थ में भी यही बात है कि नायका प्रसिद्ध मने नहीं कर सकतीहै और आंबका नवीन मंजर दिखाकर समय वैशिष्ट ध्वनिसे यह जतातीहै कि अब बसन्त ऋतु राज आवेगा सो बहुत काम उद्दीपन होगा यातैं अभी नहीं जाइये । इस प्रकार परकीया प्रवच्छति पतिकास्पष्ट । नव रसालको मौर बतायकें नायक को बसंत ऋतु जताय कर राखना चाहतीहै यहां क्रिया करके भाव जताती है यातें सूक्ष्म अलंकार ॥

अथ सामान्या प्रवच्छति पतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

मंजन कियो न तन अंजन दियो न नैन,
जावक दियो न पाइं रही मनु मारि कैं ॥
"मतिराम,,सुकवि तमोर छोड़ि बैठी बेई,
पहरे वसन डारे भूषण उतारि कैं ॥
ऐहैं आजु पीय विदा मांगन विदेश कौं,
यों नेह के जनायबें कौं चातुरी बिचारि कैं ॥
गारि राख्यो चंदन बगारि राख्यो घन सार,
आगमन सेजसर सिजन संवारि कैं॥ २१३ ॥

मूल अर्थ—मंजन जो स्नान सो नहीं किया और नेत्रोंमें कज्जल भी नहीं लगाया और पगों के इलता भी नहीं दिया और मन को मारकें रही

और पान बीड़ा भी छोड़ दिया और वैसे ही वस्त्र पहरे, और आभूषण उतार डारे आज नायक बिदेश की बिदा मांगने को आवेगा यह जान के स्नेह जनाने के लिये चतुराई बिचार कर चंदन को गाल रक्खा है और कपूर को भिगार रक्खा है कमलों से सेज सज कर सामान्या प्रवच्छति पति का स्पष्ट । यह नायका सामानया है इसके प्रीति नहीं है केवल लोभही की प्रीति है सो पूर्ण प्रीति दिखाने की सब रचना करती है यातें युक्ति अलङ्कार ।

दोहा ।

यहै युक्ति कीनी क्रिया, मरम छिपायो जाय ।

इति अलंकार रत्नाकर ।

दोहा ॥

चलत पीव परदेश कौं, वरज सकौं नहिं तोहि ॥
लै ऐहौ आभरन जो, जियत पाय हो मोहि ॥२१४॥

मूल अर्थ–हेपिय ! आप बिदेश को जाते हो सो आप को मैं वरज तो नहीं सकती हूं आप मुझे जीती पाओगे तो आभूषण लेके आओगे सामान्या प्रवच्छति पतिका स्पष्ट ।

अथ आगत पतिका लक्षण ।

दोहा ।

जा तिय को परदेश तैं, आयो पति "मतिराम,, ।
ताहि कहत कवि लोग हैं, आगत पति का बाम ॥२१५॥

मूल अर्थ–जा नायका को पति बिदेश ते आवे ताहि कवि लोग आगत पतिका कहते हैं स्पष्ट अर्थ ॥

अथ मुग्धा आगत पतिका उदाहरण ।

सवैया ॥

आये विदेशतैं प्रान पिया, "मतिराम,, अनंद बढ़ाय अलेखैं ॥
लोगन सौं मिलि आगन बैठि, घरी ही घरी सगरो घर देखैं ॥

भीतर भौंन के द्वार खरी सुकुमारि तिया तन कंप विसेखें ॥
घूंघटको पट ओट दियें पट ओट कियें पिय को मुख देखें॥२१६॥

मूल अर्थ—विदेश से बहुत आनन्द बढ़ाय कें प्रान पति आयो है और लोगों से मिल कर अंगनाई में बैठ कर वारम्बार सब घर को निहारता है और सुकुमारि जो नायका बिशेष कम्पा है जाके तन में वह भवन के भीतर जो घर के भीतर द्वारपै खड़ी है और घूंघट के पट की ओट रख कर पट जो किवाड़ की ओट रख कें पियके मुख को देखती है । मुग्धा आगत पतिका स्पष्ट । यहां नेत्र इन्द्रिय ने अपना बिषय रूप लख्यो यातें प्रत्यक्ष अलङ्कार ॥

इन्द्रिय मन निज विषय जु लहैं, ताहि प्रत्यक्ष अलंकृत कहैं ।

इति अलंकार रतनाकर ।

दोहा ॥

पिय आयो नव बाल तन, बाढ़े हरष बिलास ।
प्रथम वारि बूंदन उठे, ज्यौं वसु मती सुवास॥२१७॥

मूल अर्थ—नायक आयो है यातें नायका के तन में हर्ष का विलास बढ़ा है ऐसे कि मानो प्रथम मेघ के बरसने से पृथ्वी से सुगन्ध उठती है मुग्धा आगतपतिका स्पष्ट । हर्ष उपमेय और पृथ्वी का सुवास उपमान इन दोनों की एकता है यातें निदर्शना अलङ्कार ।

दोहा ।

दोहु वाक्य की एकता, होत निदर्शन बंध ॥

इति अलंकार रतनाकर

अथ मध्या आगत पतिका उदाहरण॥

सवैया ॥

चंद मुखी सजनीन के संग, हुती पिय अंगन में मनु फेरत ॥
ताहिसमैं पिय प्यारे को आवन, प्यारी सखी कह द्वारतैं टेरत॥

आय गये "मतिराम,, जबै, तब देखत नैंन अनंद भये रत ॥
भौंन के भीतर भाजि गई हंसि कें हरवे हरित्यों फिर हेरत॥२१८॥

मूल अर्थ—चन्द्र बदनी नायका सखियों के सङ्ग नायक के आंगन में मन को बहलाती थी उसी समय में प्रिय नायक का आना प्यारी सखीके द्वार से टेर के कहा जितने में नायक आगया जब नेत्रों से देख आनन्द युक्त भई और भाजि कें और हंसि के घर के भीतर गई और हरि को हरबे के लिये फिर हेरती है मध्या आगत पतिका ।

दोहा ॥

पिय आगम सरदा गमन, बिमल बाल मुख इन्दु ।
अंग अमल पानिप भयो, फूले दृग अरविन्दु ॥२१६॥

मूल—अर्थ—पिय जो नायक आया तब सरदा करने के लिये नायका गमन कर के नायक के पास आई तब नायका का निकलंक मुख चंद्र प्रकाशित हुआ और नेत्र कमल प्रफुल्लित भये । मध्या आगतपतिका स्पष्ट । नायक को शरद ऋतु की उपमा लगाई यातें उपमा अलंकार है ।

अथ प्रौढ़ा आगत पतिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

प्रान पियारो मिलो सुपने मैं, परी जब नेंसुक नींद निहोरैं॥
कंत को आगम त्यौंही जगाय, कह्यो सखी बोलपियूष निचोरैं॥
यों "मतिराम,, भयो हिय मैं, सुख बालके बालम सौं दृग जोरैं॥
जैसे मिहींपटमें अतिही चटकीलोचढ़ैरंग तीसरीबारकेबोरैं२२०

मूल अर्थ—प्रान से भी प्यारा ऐसा नायक है सो सपने में मिलाहै तब सोती हुई नायका थोरासा नींद में निहोरा करने लगी तैसे ही नायक का आगम सखीने जगाय के कहा नायका को वचन रूपी अमृत पान कराया बालको हिय में बालम से दृग जोर के ऐसा सुख हुआ जैसे कि तीसरी बार के बोरदेने से महींन पट में चटकीला रंग चढ़ताहै । प्रौढा आगत पतिका

स्पष्ट । पट उपमान नायका उपमेय, जैसे वाचक और तीसरी बार का बोर देना साधारण धर्म यातें पूर्ण उपमा अलंकार ।

दोहा ॥

पति आयो परदेश तैं, हिय हुलसी अति बाम ।
टूक २ कंचुक करयो, करि कमनैंती काम ॥२२१॥

मूल अर्थ—नायक के आने से नायका हिय में ऐसी हुलसी कि मानो कामदेव ने कमनैतपना करके कंचुक को टूंक २ किया है । प्रौढा आगत पतिकास्पष्ट । यहां हर्ष संचारी भाव सो प्रीति स्थाई भाव का अंग है यातें प्रेय अलंकार है ॥

अथ परकीया आगत पतिका उदाहरण ॥

सवैया ॥

आयो बिलंब बिदेशतैं बालम, बाल वियोग विथा विसराई॥
आई तहां तिनके संग ह्वै सब, गांवकी जे जुबती मिलि आई॥
देखतही "मतिराम,, कहै अखियानमैं आनंदकी छबि छाई॥
लाजन क्योंकर बैन कहै सु कह्यो दुख देहहिकी दुबराई॥२२२॥

मूल अर्थ—विदेश से विलंब करके नायक आया तब नायका ने विरह की बिथा को विसराई और सब गाम की स्त्रियां नायक के घर आई तिन के संग में मिल कर यह भी आई और नायक को देख कर आनंदकी छवि नेत्रों में छा गई लाज करके नायकके विरहके समाचार नहीं कहसक्ती पर देह की दुबलाई ने विरह की विथा नायक से कही परकिया आगत पति का स्पष्ट ॥ यहां लाज अवहित्था और हर्ष इन संचारी भाव की संधि है यातें भाव संधि अलंकार है ॥

सवैया ॥

भावतेको सुनि आगम आनंद अंगन अंगन मैं उलह्यो है॥
सो हमहूं सी सखी सो दुराइये, आली कहो यहकोने कह्योहे?॥

खैंच लियो सुखके अंसुवा यह, क्यों दुरि है जु हियोउमयोहै?॥
गाढ़ी भई करकी मुंदरी, अंगियाकी तनीन तनाव गह्योहै२२३

मूल अर्थ—नायकका आगमन सुनके अंग २ में आनंद प्रगट हुआ सो मुझसी सखी से दुराती हो हे आली ! यह कहो तुझ से किसने कहा है? दुख के आंसू खेंच लिये पर हृदय उमग रहा है सो नहीं दुरेगा हाथ की अंगुलियों की जो मुदरी थी सो गाढ़ी भई और अंगिया की तनियों ने तनाव पकड़ा है परकिया आगत पतिका स्पष्ट ॥

दोहा ॥

सुन्यो मायके तैं बहै, आयो बाम्हनु कंत ।
कुशल बूझिवे के लिये, लीनो बोलि इकंत ॥२२४॥

मूल अर्थ— बाम्हनु कंत को पीहर से आया सुना तब कुशल पूछने के लिये एकंत में बुला लिया परकीया आगत पतिका स्पष्ट ॥

अथ सामान्या आगत पतिका उदाहरण ॥

कवित्त ॥

नागर विदेश से बिताय बहु द्योस आयो,
नागरी के हिय मैं हुलासन की खान की ॥
कवि "मतिराम,, अंग भरत मयंक मुखी,
नेह सरसाय मोही मति सुखदानकी ॥
सुवरन बोलिकैं बतावत है सुबरन,
हीरन जनावति है छवि मुसकानि की ॥
आंखिन तैं आनंद के आंसू उमगाय प्यारी,
प्यारे को दिखावति है सुधि मुकतान की ॥२२५॥

मूल अर्थ— नायक विदेश में बहुत दिन वितीत कर आया है तब नागरी ने अपने हिय में हुलास की खान कीनी और नायक से नेह सरसाय

के सुख दायक मति मोहि के चंद्रबदनी अंक भरती है, अच्छे वर्ण जो अक्षर बोल के सुवर्ण जो कंचनको बताती है और हीरन को मुसकानिकी छबि से जताती है और आनंद के आंसू नेत्रों में उमगाय कर प्यारी प्यारे को मोतियों की याद दिलाती है कि लाये हो सो मुझे दीजिये । सामान्या आगत पतिका स्पष्ट । आंखों में आनंद के आँसू उमगा कर नायक को मोतियों की सुधि दिलाती है इत्यादि क्रिया करके द्रव्य मांगने का आशय जताती है यातें सूक्ष्म अलंकार ।

दोहा ॥

फूली नागरि कमलिनी, उड़िगे मित्र मलिंद ।
आयो मित्र बिदेश तैं, भयो सुदिन आनंद ॥२२६॥

मूल अर्थ—नायक विदेश से आयो वह सुदिन आनन्द का भया और वह नायका कमल के समान फूली और मित्र मलिन्द जो भौंरे थे ते उड़ि गये सामान्या आगत पतिका स्पष्ट । नायका से कमोदिनी का रूपक किया यातें रूपक अलङ्कार ।

दोहा ।

दशों नायका भेद यह, कहे जु तत्व बिधान ।
नृपति मनोहर सिंह हित, निज मति कवि हरदान ॥४॥

इति दशनायका प्रकरणम् ॥

उत्तमा नायका लक्षण ॥

दोहा ॥

पिय हितकैं अनहित करैं, आप करै हित नारि ।
ताहि उत्तमा नायका, कवि जन कहत बिचारि ॥२२७॥

मूल अर्थ— पिय हित करे वा अनहित करे पर वह नायका अपनी ओर से हितही करे कविजन विचारि के ताको उत्तमा कहते हैं ।

सवैया ॥

राति कहूं रमिकैं मन भावन, आवन प्रात पिया घर कीनों॥
देखतही मुसकाय उठी चलि, आगे ह्वै आदर कें पुनि लीनों॥

मोहन के तन में "मतिराम,, दुकूल सुनील निहारि नवीनों॥
केसरि के रंगसो रंगकें पट, पीतयौं प्रीतमके कर दीनों॥२२८॥

मूल अर्थ—नायक रात्रि समय किसी और के पास रह कर प्रात समें प्रिया के घर आयो तब देखतेही हंस कर उठी और सन्मुख आकर आदर से लाई और नायक के तनपै नील रङ्ग का नवीन चीर देखि कर उसको केसर के रङ्ग से रङ्ग कर पीताम्बर करके उसने प्रिय को दिया नील दुकूल के कारण से पर स्त्री से रति होना कार्य नायका ने जाना यातैं अनुमान अलङ्कार। और केसरि के रङ्ग से रङ्गकर उस दुकूल को पीत कर दिया सो यह उत्तमा नायका का क्रम है।

दोहा॥

पिय अपराध अनेक हूं, आंखिन हू लखि जाय।
तिय इकंत हूं कंतसौं, मानो करत लजाय॥२२९॥

मूल अर्थ—पियके अनेक अपराध को नायका निज आंखो से देखे तो भी मान करने की एकान्तमें भी लज्जा रखती है। नायक अनेक अपराध करे तो भी नायका मान नहीं करती है तो यह अपराधी के सङ्ग से भी अपराध धारण नहीं करती है यातैं अतद्गुन अलङ्कार।

दोहा।

अतद्गुन सङ्गतहूं भये, जब गुन लागत नाहिं।

इति अलङ्कार रतनाकर।

अथ मध्या नायका लक्षण॥

दोहा॥

पिय सौं हित तैं हित करे, अनहित कीने मान॥
ताहि मध्यमा कहत हैं, कवि "मतिराम,, सुजान॥२३०॥

मूल अर्थ—नायक के हित सों तो हित करे और अनहित सों मान करें ताहि सुजान कवि मध्यमा कहते हैं।

कवित्त ॥

आयो प्रान पति राति अनि तैं विताय बैठी,
भौंहन चढ़ाय रंगी सुंदर सुहागकी ॥
बातन बनाय परयो प्यारी के चरन आय,
छबिसौं छिपाई छैल छबि रति दाग की ॥
छूटि गयो मान लगी आपुही संवारन कौं,
खिरकी सुकवि "मतिराम,, पिय पागकी ॥
रिसही के आंसू रस आंसू भये आंखिन मैं
रोस की ललाई सो ललाई अनुराग की ॥२३१॥

मूल अर्थ—किसी और के पास राति बितीत करके प्रानपति आयो तहां भौंहे चढाय के सुहाग से रङ्गी हुई सुन्दरी बैठी थी तब बातैं बनाय के प्यारी के चरनन में आय के पस्यो, छल से छैल रति दाग को छिपायके तब नायका का मान छुट गया और पिय की पाग के पेच खिस गये हैं तिन को अपने हाथ से सुधारने लगी और नेत्रों में रिस के आंसू थे सो आनन्दके आंसू हुए और रोसकी ललाई थी सो अनुराग की ललाई भई ।

दोहा ॥

मेरे तन के रोम ये, मेरे नहीं निदान ।
उठ आदरु आगम करे, करौं कोन बिधि मान? ॥२३२॥

मूल अर्थ—मेरे तनके रोम निश्चय करने से मेरे नही हैं आगम से उठ के आदर करते हैं तब मैं मान किस बिधि से करूं ? नायका ने अपने रोम कह के फिर निषेध किये यातें दूसरा आक्षेप अलङ्कार ।

दोहा ।

पहले कहिये आप कछु, बहुरि फिरावे ताहि ।

इति अलङ्कार रतनाकर ।

अथ अधमा नायका लक्षण ॥

दोहा ॥

पिय सौं हितहू के कियें, करे मान जो बाल ।
तासौं अधमा कहत हैं, कवि "मतिराम,,रसाल ॥२३३॥

मूल अर्थ—पिय सों हितहू के करने पर जो नायका मान करे तासौं रसाल अधमा कहते हैं ।

कवित्त ॥

आयो है सयानपन गयो है अपान तउ नित,
नित उठि मान करबे की टेव पकरी ॥
घर २ माननी है मानत मनाये तें बे,
तेरी ऐसी रीति और काहू मैं न जकरी ॥
कवि "मतिराम,, काम रूप घन श्याम लाल,
तेरे नैंन कोर ओर चाहें इक टकरी ॥
हाहा के निहोरे हू न हेरत हिरन नैंनी!,
काहे को करत हठ हारिल की लकरी? ॥२३४॥

मूल अर्थ— सखी बचन नायका से । अवतू सयानी भई है असेंनप मिट गई है तो भी नित उठ कर मान करने की टेव पकरी है और घर २ में माननी होती है ते मनाये से मान लेतीहै पर तेरीसी रीति जकरी और काहू में नही है और कामदेव के समान स्वरूपवान घनश्याम लाल तेरे नेत्र कोर की ओर एक टक निहारतेहैं हे हिरन नैंनी हाहा करके निहोरे करने से भी नहीं हेरती है काहेको हठ हारिल की लकरीकी समान करती है। हारिल उपमान नायका उपमेय और हटकरना साधारण धर्म ये तीन सावित हैं और वाचक का लोप है यातें वाचक लुप्ता लुप्तोपमा अलंकार।।

दोहा ॥

कहा लियो गुरु मानको, अति ताई है नेम ।
पारदसो उड़ि जायगो, अलि चंचल यह प्रेम ॥२३५॥

मूल अर्थ– अतिताई होकें गुरुमान को प्रेम काहे को लियो है ? हे आली ! यह प्रेम पारद के समान चंचल है सो उड़ि जायगो। पारद उपमान प्रेम उपमेय उड़ जाना साधारण धर्म सो वाचक ये चारों साबित हैं यातें पूर्ण उपमा अलंकार ॥

दोहा ।

उत्तमादि त्रिय नायका, कही जु छटे बिधान ।
नृपति मनोहरसिंह के, निज इच्छा पहिचान ॥६ ॥

इति उत्तमादि तीन नायकाप्रकरण ।

अथ नायक लच्छण ॥

दोहा ॥

तरुन, सुघर, सुन्दर, सकल, काम कलानि प्रवीन ।
नायक सो "मतिराम,, कहि, कवित गीतरसलीन॥२३६॥

मूल अर्थ– तरुन जो जवान सुघर जो समझवार और सुन्दर जो स्वरूपमान और काम कला जो कोक शास्त्र तामें प्रवीन होय और कवित्त और गीत के रसमें लीन होय ताको नायक कहिये ।

सवैया ॥

गुच्छन के अवतंस लसें सिर, पच्छन अच्छ किरीट बनायो॥
पल्लव लाल समेति छरी कर, पल्लव सौं "मतिराम,,सुहायो॥
गुंजनके उर मंजुल हारनि, कुंजनि तें कढि बाहर आयो ॥
आजको रूपलखें नंदलालको,आजहि नैननको फल पायो२३७

मूल अर्थ–गुच्छ जो फूलों का गुच्छा तिस का अवतंस जो तुर्रा और पक्ष जो परों का बनाया है अच्छा मोर मुकट और लाल पल्लव समेत छरी कर पल्लव में शोभाय मान है और गुंजा जो चिरमी का मंजुल जो शोभायमान उर जो हृदय के बिषें हार जाके और निकुजंन तें कढि के बाहर आयो ऐसा नंदलाल का स्वरूप मैंने देख कें आज नेत्रों का फल पाया। बृजराज का रूप देख कर नेत्रों को आनंद प्राप्त हुआ यातें सम अलंकार का तीसरा भेद है ।

दोहा ॥

भरी भांवरे सांवरे, रास रसिक रस जान ।
उनही मैं मति भ्रमत है, ह्वै भोडर को पान ॥२३८॥

मूल अर्थ— सांवरे ने रास में भांवरें भरी हैं भांवरे जो गिर्द घूमना तामें मेरा मन भोडर के पान के समान होके वा रसिक के रस को जानकें फिर रहा है अर्थात् जैसे पवनचक्र में मिला हुआ पान भ्रमता है तैसे मेरा मन भ्रम रहा है ।

अथ पति आदि त्रिविध भेद नायक वर्णन ॥

दोहा ॥

पति, उपपति, बैसिक त्रिविध, नायक भेद बखान ।
विधिसौं व्याह्यो पति कह्यो, कवि "मतिराम,, सुजान॥२३९॥

मूल अर्थ— पति और उपपति और वैसिक ये तीन भेद नायक के बखानिये तामें विधि से विवाह होय ताको सुजान पति कहते हैं ।

अथ पति उदाहरण ॥

सवैया ॥

पांव धरे दुलही जिहि ठौर, रहे "मतिराम,, तहां दृग दीने ॥
छोड़ि सखानिके साथको खेलवो, वैठ रहे घरही रस भीने॥
सांझहि तैं ललके मनहीं मन, लालनयो बस के रस लीने ॥
लौंनि सलौनिके सोनेसे अंगानि, गौनेकी चूंदरि टौंनेसेकीने२४०

मूल अर्थ— लावण्यता युक्त उस सलौनी के कंचन से अंगोने गौने की चूंदरी से टोने के समान किया है सो दुलही जिस ठौर पांव धरती है तिस ठौर नायक दृष्टि को चलाता है और सखान के संग का खेलना भी छोड़ दिया है और रसमें भीज कर घर ही वैठ रहता है और सांझ ही तें मन ही मन ललचाता है लाल नये रस के वस लीन हुआ है । 'गौना' उपमेय टोना, उपमान सी, वाचक और वस करना साधारण धर्म यातें पूर्ण उपमा अलंकार ॥

दोहा ॥

जादिन तैं गौनो भयो, आई बाल रसाल ।
तादिन तैं बिरहिन भई, हरि उरतैं बनमाल ॥२४१॥

मूल अर्थ — जादिन से गौना होके वह रसाल बाल आई है तादिन से हरिके उर सें बनमाल बिरहिन भई ॥

अथ पति भेदान्तर्गत चतुर्बिधि नायक लक्षण ॥

दोहा ॥

चारि भांति सौं बरनियें, प्रथम कहत अनुकूल ।
दच्छिन गन, शठ धृष्ट पुनि, रस सिंगार को मूल ॥२४२॥

मूल अर्थ--स्पष्ट ।

अथ अनुकूल नायक लक्षणम् ॥

दोहा ॥

सदा आपनी नारिसौं, राखै अतिही प्रीति ।
परनारी तैं विमुख जो, सो अनुकूल सुरीति ॥ २४३ ॥

मूल अर्थ—अपनी नारि से सदैव बहुत प्रीति रक्खे और पर नारी से बिमुख रहता है सो सुरीति कहिये अच्छी रीति अनुकूल है ॥

सवैया ॥

क्योंहू नहीं बिसरैं निसि बासर, मंद हंसी मुखचंद उज्यारी॥
त्यौंहि दिपैं अति नेहसौं देह की, दीप कलासम दीपति न्यारी॥
तेरिय जोति जगै हिय भीतर, आवत औरन नारि अंध्यारी॥
नैंननहूं अरु बैननहूं तनहूं मनहूंकौं तुही अति प्यारी ॥२४४॥

मूल अर्थ — कैसेहू राति और दिन नहीं बिसरता है मन्द हंसी और मुख चन्द की उज्यारी तोहीं नेह से देह की दीप्ति दीपक की कलाके समान न्यारी दीप्ति है तेरी यह जोति उरके भीतर जागती है यासें और नारि अनध्यारी के समान नहीं आवती नेत्रों को और बचनों को और तन को और मन को बहुत प्यारी तुही है । नेत्रन को और बचनन को

और तनको और मनको एक नायका को प्रेम का आश्रय कहा यातें पहला पर्याय अलङ्कार ॥

दोहा ॥

सुपनेहू मन भावतो, करत नहीं अपराध ।
मेरे मनही में रही, सखी ! मान की साध ॥ २४५ ॥

मूल अर्थ—हेसखी ! सपने में भी मन भावता अपराध नहीं करता है यातें मान साधने की मेरे मनहीं में रही ॥

अथ दच्छन नायक लच्छण ।

दोहा ॥

एक भांति सब तियन सौं, जाको होय सनेह ।
सो दच्छन "मतिराम,, कहि, बरनतहैं मति गेह ॥२४६॥

मूल अर्थ—सब तियन सों जाकें एक भांति स्नेह होय ताकों मतिगेह जो बुद्धि के घर दच्छन कह के वर्णन करते हैं ॥

सवैया ॥

सांझ समय ललना मिलिआई, खरो जहां नंदलला अलबेलो॥
खेलनकौं निस चांदनी मांहि, बने न मतो"मतिराम,,सुहेलो॥
आपनि आपनि पौरि बतायकैं, बोल कह्यो सिगरी न नवेलो ॥
त्यौं हंसिकैं बृजराजकह्यो अब,आज हमारिहिपौरिमैंखेलो॥२४७॥

मूल अर्थ—सांझके समय में लला मिल कें अलबेला नन्दलाल खड़ा था वहां आई और खेलने को चान्दनी राति में सुहेला जो अच्छा मंसुबा नहीं बनता है तब अपनी २ पौरि बताय कें बोल कह्यो सगरी ने नवेलो तब हंसि के बृजराज ने कहा अब आज हमारी ही पौर में खेलो ॥

दोहा ॥

दच्छिन नायक एक तुम, मन मोहन बृज चन्द ।
फूले बृज बनितान के, दृग इन्दीवर बृन्द ॥ २४८ ॥

मूल अर्थ--स्पष्ट ।

अथ शठनायक लक्षण।

दोहा ॥

दुरै करत अपराध नहिं, करे कपट की प्रीत ।
बचन क्रियामैं अति चतुर, सठ नायक की रीत॥२४६ ॥

मूल अर्थ—अपराध करता हुआ नहीं डरे और जाकी प्रीति कपटसंयुक्त हो और बचन और क्रिया में बहुत चतुर होय ताकों सठनायक कहिये ।।

कवित्त ॥

मोतैं तो कछुन अपराध पर्यो प्रानप्यारी!,
मानकरि रही यौंही काहे को अरसतैं?॥
लोचन चकोर मेरे सीतल हैं होत तेरे,
अरुन कपोल मुख चंद के दरसतैं ॥
कहे "मतिराम,, उठि लाग उर मेरे कित,
करत कठोर मन अंसुवा बरसतैं ॥
कोपतैं कटुक वोल वोलत हैं तऊ मोकौं,
मीठे होत अधर सुधारस परसतैं ॥ २५० ॥

मूल अर्थ—हे प्रान प्यारी ! मुझसे तो कुछ भी अपराध नहीं बना और तुम मान कर कें योंही काहे को अरसतें रही हो ? और मेरे लोचन चकोर सीतल होते हैं तेरे मुख चन्द और अरुन कपोल के दरश तें, अबतें उठ कर मेरे उर से लाग और तैं काहे को अंसुवा बरसकें कठोर मन करती हो और कोप कर के कटुक बोल बोलतीहो तोभी तेरे अधरामृत के स्पर्श से मुझे मीठे लगते हैं ।। अधरामृत के स्पर्शतें कटुक बोल मीठे होते हैं यातें तद्गुन अलङ्कार ।।

दोहा ॥

पियत रहौं अधरानको, रस अति अधिक अमोल ।
तातैं मीठे कढ़तहैं, वाल बदन तैं वोल ॥ २५१ ॥

मूलअर्थ—पान करते रहते हैं अधरों का अति अमोल रस यातें बाल तेरे बदन से बोल मीठे निकलते हैं । अधरामृत कारण और बचनों में मिठास कारज यह कारण से कार्य यातें हेतु अलङ्कार ।।

अथ धृष्ट नायक लक्षण ॥

दोहा।

करै दोष निरसंक जो, डरे न तियके मान।
लाज धरे मनमैं नहीं, नायक धृष्ट निदान ॥ २५२ ॥

मूल अर्थ-जो निर्भय होकें दोष करे और तिय के मान से नहीं डरे ताको धृष्ट नायक कहते हैं ॥

कवित्त ॥

बरज्यो न मानत हो बार २ बरज्यो मैं,
कोन काज मेरे इत भौंन मैं न आइये।
लाज को न लेस जग हांसी को न डर मन,
हंसति २ आनि बात न बनाइये ॥
कवि "मतिराम,, नित उठि कुल कानि करो,
नित झूंठी सौंहें करो नित बिसराइये ॥
ताके पग लागो निस जागि जाके उर लागि,
मेरे पग लगि उर आगि न लगाइये ॥ २५३ ॥

मूल अर्थ-नायका बचन नायक से मैंने बार २बरजे पर तुम बरज्यो नहीं मानत हो अब कहा कार्य है ? यहां मेरे भवन में नहीं आइये और तुम्हारे जगत की लाज का भी लेस नहीं है और हांसी का भी डर नहीं है अब हंसते २ आन कर बातें मत बनाओ और नित उठ किलकें जो शोर मत करो नित झूंठी सौंहें खाते हो और नित बिसर जाते हो जिन के उर से लाग कर निस में जागते हो ताके पगों से लागिये और मेरे पांवों से लग कर हृदय में अग्नि मत लगाओ ॥ पांई परना कारण तातें हृदय में आग प्रगट होना कारज कहा सो कारण से बिरुद्ध कार्य यातें पांचवीं बिभावना ॥

दोहा ॥

अलज नैंन कुलटान के, आन बसे बृजराज।
हिये तिहारे तैं सकल, मारि निकारी लाज ॥ २५४ ॥

मूल अर्थ—हे ब्रजराज ! कुलटाओं के निर्लज्ज नेत्र तुम्हारे हिय में आन बसे उन्हों ने तिहारी सर्व लाजको मार कर निकाल दई । कुलटाओं के निर्लज्ज नेत्र हृदय में बसने का कारण और हृदय से लाज को दूर करना कार्य यातें दूसरा हेतु अलंकार ॥

अथ उपपति और वैसिक नायक लक्षण ।

दोहा ॥

जो पर नारी को रसिक, उप पति ताहि बखान ।
प्रीत करै गनिकान सौं, वैसिक ताकौं जान ॥२५५॥

मूल अर्थ—जो पर नारी से आशक्त होय ताको उपपति जानो और जो गनिकाओं से प्रीति करे सो वैसिक जानो ॥

कवित्त ॥

सुंदर सरस सब अंगन सिंगार साजे,
सहज सुभाव निस नेह कछु कै गई ॥
कीने "मतिराम,, बिहसौंहैं से कपोल गोल,
बोलन अमोल इतनोंई दुख दै गई ॥
मेरे ललचौंहैं चाहि चख मुख फेरि केल,
जो हैं ललचोहैं चारु चखनि चिते गई ॥
निपट निकट ह्वैकैं कपट छुआय अंग,
लाय की सी लपट लपेट मनु लैगई ॥ २५६ ॥

मूल अर्थ—सुन्दर जो अच्छा सर्व अंग सिंगार किये हुई सहज सुभाव से कछू स्नेह कह गई और कपोलों में हांसी प्रगट कीनी और अमोल है जाकी गिरा सो मुझे इस प्रकार दुख दे गई मेरी दृष्टि कों लालच युक्त जानी तब मुख फेर के लाज युक्त अपने अच्छे नेत्रों को ललचौंहैं कर के चितवन किया बहुत निकट आकर कपट से अंग स्पर्श किया और अग्नि की ज्वाला के समान लपेट कें मन को ले गई । लाय की लपट उपमान नायका उपमेय और लपटना धर्म सी, वाचक ये चारों अंग हैं यातें पूर्ण उपमा अलंकार ॥

दोहा ॥

मंद हसनि दृग कोर लखि, बस करलेत प्रवीन ।
छिन बिछुरैं गति होत यों, ज्यों जल बिछुरत मीन॥२५७॥

मूल अर्थ—मंद २ हस कें और नेत्र कटाक्ष चला कर प्रवीन को बस कर लेत है फिर छिनभर जुदाई से जल बिहीन मच्छी के समान होता है ॥ प्रवीन को बस करना कठिन है ताको मंद हसनि और नेत्र कटाछन तें समर्थक किया यातें काव्य लिंग अलंकार ॥

कवित्त ॥

आगमन चाहि चकचौंधि रह्यौ जबे तब,
जगर मगर आभरन के नगन भो ।
जोबन के मद रूप मद वाके मैंन मद,
छकि मतवारो ह्वैकैं थकित पगन भो ॥
कहे "मतिराम,, लोल लोचन बिशाल बंक,
तीच्छन कटाच्छन सौं छेद के लगन भो ॥
बार २ भ्रम बार बधू बार भौंरन मैं,
मांगन की मुकता माल गन मैं मगन भो॥ २५८ ॥

मूल अर्थ—आती हुई को देख के नग जटित आभूषन के जग मगाट में चक चोंधे भये और वाके जोबन के मद और रूप के मद और मेंन जो कामदेव के मद में छकि के मतवाले होके पावों से थकित भये और लोल जो चपल और विसाल जो बड़े बंक तीछन नेत्र कटाक्ष से छिद के लगन जो स्नेह वढा बार बार भ्रमता है बार बधू गनिका के बार जो केसों पै भोर जो भैंरे सुगन्ध से बैठते हैं तिन में और मोतियों की माला की मांग गंगा के समान है तामें मगन भये जो लीन भये ॥ जोवन के मद और रूप के मद और नैत्रों के मद इत्यादि छकि कें नायक थकि कें बेपाओं के भयो यहां बहुत प्रकार से मद से छकना कहा यातें दूसरा समुच्चय अलंकार ॥

दोहा ॥

लोचनि पानिप ढिंग सजी, लट बंसी परवीन ।
मो मनवारि विलासनी, फांसि लियो जनु मीन ॥२५९॥

मूल अर्थ—नेत्र रूपी जल के तट पै अलक इस तरह आ रही है जनु बंशी, और बंशी मच्छी पकड़ने के लिये लोहे का टेढा कीला होता है तिस से मेरे मन रूपी मीन को बार-बिलासिनी जो गनिका ने फांस लिना है ॥ यहां जनु शब्द कर के बस्तु उत्पेक्षा अलंकार ॥

अथ अभिमानी आदि त्रिविध भेद नायक लच्छण ॥

दोहा ॥

अभिमानी, चातुर बचन, क्रिया चतुर पुनि जान ।
तीन भांति औरें कहत, नायक सुकवि बखान ॥२६०॥

मूल अर्थ— अभिमानी और बचन चतुर और क्रिया चतुर ये तीन प्रकार के नायक कवि और बर्णन करते हैं ॥

अथ मानी लच्छण ।

दोहा ॥

करत नायका सौं कछू, नायक मन अभिमान ।
तासौं मानी कहत हैं, कवि "मतिराम,, सुजान ॥२६१॥

मूल अर्थ— नायका से नायक कुछ अभिमान करे ताको सुजान मानी नायक कहते हैं ॥

कवित्त॥

वहै सुधि करो जो नये नलनी के दलन,
सेज सीरे २ सरसिजन बिछाइये ॥
अमल उसीर इंदु चंदन गुलाब नीर,
कहां लगि और उपचारन गिनाइये ॥
छल बल वाको मैं मिलाय कैं जिवाये तब,
कवि "मतिराम,, अब साहबी जनाइये ।

ऐसैं मन भायो मन भावन गुमान है ज़ु,
प्यारी के मनायवे कौं तुम को मनाइये ॥ २६२ ॥

मूल अर्थ—वाको याद रक्खो जो नवीन कमोदनीके पत्तोंसे औरसीरे२ कमलके फूलों से सेज बिछाई है और निर्मल खस और चंदन और गुलाब जल चंद्रमा को आदि देकें कहां लग उपचार कहिये और छल बल करके वाकों मिलाइकें जबमें जिवाये तब अब तुम चाहिवी जो राजस जताते हो ऐसो मन में कहा भयो है को हे मन भावना! गुमान करते हो अब नायका के मनाने के लिये पहले तुम को मनाऊं यही सामान्य अर्थ को प्यारे के मनाने के लिये तुम को मनाइये इस विशेष वाक्यार्थ कर के समर्थन किया यातैं अर्थान्तर अलंकार ॥

दोहा ॥

यामैं कौन सयानु है, मोहन लाल सुजान! ।
आप करत अपराध सो, आपहि पुनि अभिमान ॥२६३॥

मूल अर्थ—हे मोहन लाल सुजान! यामें कोन सयानप है सो आप ही अपराध करते हो फिर आप ही मान जो अहंकार करते हो ? ॥ यामें कौनसा संयान है ? इस सामान्य अर्थ को आप अपराध करते हो और आप ही अभिमान करते हो इस विशेष अर्थ कर के समर्थन किया यातें अर्थान्तर न्यास अलंकार ! ॥

अथ वाक्य चतुर नायक लक्षण ।

दोहा ॥

वचनन मैं जो करत है, चतुराई "मतिराम,, ।
वचन चतुर नायक सरस, लीजे जान सकाम ॥२६४॥

मूल अर्थ—जो नायक बचनों में चतुराई करते हैं ताको सरस कहिये रस संयुक्त सकाम कहिये कामदेव मिला हुआ ऐसा सरस जो श्रृंगार रस का जानने वाला ताकों बचन चतुर नायक कहते हैं ॥

कवित्त ॥

दूसरे की बात सुनि परत न ऐसी भांति,
कोकिल कपोतन की धुनि सरसात है ।

छाइ रहे जहां द्रुम बेलिनसौं मिलि "मतिराम,,
अलि कुलन अंध्यारी अधिकात है ॥
नखत से फूल रहे फूलन के पुंज घन,
कुंजन मैं होति जहां दिन ही मैं राति है ॥
ऐसे घन बनबाट संग न सहेली कहि,
कैसे तूं अकेली दधि बेंचन को जाति है? ॥२६५॥

मूल अर्थ—नायक वचन नायकासे ॥ जहां कोकिल कपोतनकी ऐसी धुनि हो रही है सो दूसरे की बात नहीं जनाई जाती है और रूखों पर बेलें छा रही है और भैंरों के समूह बहुत मिल रहे हैं और अंधियारी हो रही है और फूलों के समूह फूल रहे हैं वे नक्षत्र के समान दिखाई देतेहैं और ऐसे सघन कुंज हैं तहां दिन भी राति के समान रहता है तेरे संग में कोई सखी नहीहै और तैं अकेली ऐसे सघन वनकी राह दधि बेचने को कैसे जातीहै? ।

दोहा ॥

तोकौं देउं बताय हों, तू कित होत उचाट ।
ग्वालिन दधि बेचन गई, बंसी बट की घाट ॥२६६॥

मूल अर्थ—तू उचाट काहे को करती है ? और ग्वालिनी दधि बेचने को गई है बंसी बट के घाट पै सो मैं तुम को बताय दूंगा ॥ नायका का उचाट मिटाने को ग्वालिनि दधि बेचने को बंसीवट के घाट पै गई है इस युक्ति से समर्थन किया यातें काव्य लिंग अलंकार ॥

अथ क्रिया चतुर लक्षण ।

दोहा ॥

करै क्रिया सौं चातुरी, जो नायक रस लीन ।
क्रिया चतुर तासौं कहत, कवि "मतिराम,, प्रवीन ॥२६७॥

मूल अर्थ—जो नायक रस लीन होकर क्रिया से चतुराई करे ताकों प्रवीन कवि क्रिया चतुर कहते हैं ॥

सवैया ॥

नंदलाल गयो तितही चलकैं जहां खेलत वाल अलीगनमैं ॥
तहां आपुही मूंदे सलोनीके लोचन चोर महीचानि खेलन मैं ॥
दुरबे को गई सिगरी सखियां "मतिराम,, कहै इतने छिन मैं ॥
मुसकायकैं राधिका कंठ लगाय छिपौ कहूं जाय निकुंजनमैं २६८॥

मूल अर्थ- सखी वचन सखी से । जहांबाल सखी गन में खेलती थी तहां नन्दलाल चल के गया और तहां आपही सलोनी के नेत्र चोर महीचनी के ख्याल में मूंदे और सब सखी छिपने को ईधर उधर गईं तब मुसकाय कैं राधिका को कण्ठ से लगाय के किसी निकुंज में जा छिपे। यहां आंख मीचनी के मिस से नायक नायका को कंठ से लगा कर एकान्त स्थान में लेगये यह मिस करके अपना कार्य सिद्ध किया यातें पर्य्योयोक्ति अलङ्कार का दूसरा भेद ।

दोहा ॥

सांझ समैं वह छैलकी, छलन कही नहिं जाय ।
बिन डर बन डरपाय कैं, लई मोहि उरलाय ॥ २६९ ॥

मूल अर्थ—उस छैल की छलनि नहीं कही जाती है बन में सांझ के समय बिनाहीं डर डरपाय के मुझको उर से लगाय लीनी । यहां मिस कर के कार्य सिद्ध किया यातें पर्य्योयोक्ति अलङ्कार का दूसरा भेद ॥

अथ प्रोषित नायक लक्षण

दोहा ॥

नायक होय विदेश मैं, जो बियोग अकुलाय ।
तासौं प्रोषित कहतहैं, जे प्रवीन कविराय ॥ २७० ॥

मूल अर्थ—जो नायक विदेश में होय और विरह से व्याकुल होय ताकों सब कविराय प्रोषित नायक कहते हैं। यहां भी मिस करके कार्य सिद्ध किया यातें पर्य्योयोक्ति अलङ्कार का दूसरा भेद ॥

कवित्त ॥

प्यार पगे बचन पियूष पान करि २,
उमंगि २ तिय आनन्द बिसेषि हैं ॥
कवि "मतिराम,, तन तपति बुझाय जैहैं,
तब निज जनम सफल करि लेखि हैं ॥
हीतलको सीतल करन चारु चांदनी सी,
मन्द मृदुमुसकानि अनमिख पेखिहैं ॥
ह्वैहै तब निसा मेरे लोचन चकोरन को,
जब वाको आनन अमल इंदु देखि हैं ॥ २७१ ॥

मूल अर्थ—नायक बचन सखी से वा तिय के संग स्नेह से भरे हुए वचन रूपी अमृत का पान करके उमगि २ के विशेष आनन्द युक्ति होवेगे और तब तन की तपत बुझाय के निज जनम को सफल मानेंगे हृदय तलको शीतल करने वाली सुन्दर चांदनी के समान मन्द और मृदु मुसकानि को अनमिष निहारेंगे जब मेरे नेत्र चकोरन को निसा जो राति होवेगी जब वाके निर्मल और निकलङ्क मुख चन्द को निहारूंगा । आनन उपमेय इंदु उपमान को एकता कर के वर्णन किया और प्रसिद्ध चन्द्रमा को जुदा नहीं रक्खा और निर्मलताकी अधिकाई यातें अधिक अभेद रूपक अलंकार ॥

दोहा ॥

प्रफुलित सुमत समाजमैं, करवे आनंद केलि ।
सो नीके दिन लागि हैं, उर सोंनेकी बेलि ॥ २७२ ॥

मूल अर्थ-स्पष्ट ।

अथ दर्शन भेद

दोहा ॥

दरसन आलम्बनहिं मैं, कवि "मतिराम,, सुजान ।
श्रवन स्वप्न अरु चित्र पुनि, त्यौं प्रतिच्छ बखान ॥२७३॥

मूल अर्थ—दर्शन भी आलंबन में प्रमान करते हैं तिन के चार भेद हैं श्रवन और स्वप्न और चित्र और प्रत्यक्ष ॥

अथ श्रवन दर्शन ।

सवैया ॥

आनन पूरन चंद लसै, अरिबिंद बिलास बिलोचन पेखैं ॥
अम्बर पीत लसैं चपला, छबि अंबुद मेचक अंगनि देखैं ॥
कामहू तैं अभिराममहा, "मतिराम,,हियेनिहचैकरलेखैं ॥
तैं बरनैं निजबैननसों, सखी मैं निज नैनन सौं जनु देखैं२७४

मूल अर्थ—नायका बचन सखी से । पूरन चंद्रमा के समान जाको बदन है और दोनों नैन कमल के समान हैं और पीत वस्त्र धारन हैं ते बिजली के समान शोभाय मान हैं और श्याम मेघ के समान शरीर शोभाय मान है और काम देव से भी सुंदर है स्वरूप सो हृदय में निश्चय कर के जाने तैंने तेरे बचनों से वर्णन किया सो मैंने निज आंखों के देखने के समान जान लिया ॥ जनु शब्द कर के उत्प्रेक्षा अलंकार ॥

दोहा ॥

जैसो वरन्यो तैं सखी, ! रूप कान्ह को आय ।
तैसोई मेरे चखन, रह्यो आन ठहराय ॥ २७५ ॥

मूल अर्थ—हे सखी ! कान्ह को जैसो रूप तैंने वर्णन किया सो रूप मेरे नेत्रों में समाय रह्यो है ॥

अथ स्वप्न दर्शन ।

सवैया ॥

आवत मैं सपने हरको लखि नैंसुक बाट सकोचन छोड़ी ॥
आगेह्वै आड़े भये "मतिराम,,चली सुचितें चख लालच बोड़ी॥
ओठन को रस लेन को मोहन, मेरी गही कर कंजन ढोड़ी ॥
और भटू न भई कछु बात, गई इतनेहीं मैं नीद निगोढ़ी।२७६॥

मूल अर्थ—मैंने हरि को स्वप्न में आवता देखा तब संकोच से थोड़ीसी राह छोड़ी तब वे आगे आके आडे खड़े भये तब लालच से डूबे हुए नेत्रों से चितवन कर के चली तब मोहन ने हस्त कमलों से ओठन का रस लेने को मेरी ठोड़ी गही और अधिक कुछ भी बात नहीं भई इतनेही में निगोड़ी नींद उड़ि गई ॥

दोहा ॥

पिय मिलाप को सुख सखी !, कह्यौ न जात अनूप ।
सब सुख सो सपनो भयो, सपनो सौ सुख रूप ॥२७७॥

मूल अर्थ—हे सखी ! पिय के मिलाप का सुख अनूप है सो कहने में नहीं आता है सब सुख सपने में था यातें अब और सुख है सो सपने की समान है ॥

अथ चित्र दर्शन ।

कवित्त ।

अचल भये हैं गात परसन जान्यौ जात,
कही न सुनत बात जात बात न कही ॥
सुंघै न सुवास सुमन की न समुझि परै,
टकटकी बड़े २ दृगन मैं उलही ॥
कवि "मतिराम,, तोहि नेंक परवाह नहीं,
ऐसी भांति भई वह तेरे नेह सौं नहीं ॥
एरे चित चोर ! चल चाहि चंद मुखि तोहि,
चित्रन मैं चाहि २ चित्र ही मैं ह्वैरही ॥ २७८ ॥

मूल अर्थ—जिस के अंग स्थिर हो रहे हैं और शीत उष्ण स्पर्श को भी नहीं पहिचानती है और किसी की बात नहीं सुनती है और उस से बात कही भी नहीं जाती है और सुगन्ध को भी नहीं सूंघती है और फूलों को पहिचानती भी नही है और बड़े नेत्रन से टकटकी लगाय रही

है उस की मुझे थोड़ी सी परवाह नहीं है उस की ऐसी रीति भई तेरे स्नेह सें विनाही ऐरे चित्त चोर ! अब तें चल यह चंद्र मुखी तेरे चित्त को देख के चित्राम के समान हो रही है ॥

दोहा ॥

चित्रहि मैं जाके लखे, होत अनंत अनंद ।
सपने हू कब हू सखी, सो मिलि है बृज चंद ॥२७९॥

मूल अर्थ—जिन के चित्राम को देख के बहुत आनंद होता है हे सखी ! सो व्रजचंद सपनेहूं में कभी मिलेगा ? ॥

अथ साक्षात् दर्शनं ।

कवित्त ॥

मोहन लला को मन मोहनी बिलोकि बाल,
कसकरि राखते हैं उमग उमाह कौं ॥
सखिन की दीठि को बचाय के निहारति हैं,
आनंद प्रवाह बीच पावत न थाह कौं ॥
कवि "मतिराम,, और सब ही के देखतहू,
ऐसी भांति देखति छिपावत उछाह कौं ॥
वेई नैन रूखे से लगत और लोगन को,
वेई नैन लागत सनेह भरे नाह कौं ॥ २८० ॥

मूल अर्थ—मोहन लाल को वह मन मोहनी बाल देखि कें उमंग और उछाह बढ़ते हैं तिन को रोक के राखती है और सखियों की दीठि को बचाय कें अवलोकन कर के आनंद के प्रवाह का थाह नहीं पावती है और सब ही के देखतें छतें भी इस रीति से देख रही है और उछाह को छिपाती है उन के नेत्र और लोगों को रूखे लगते हैं और नाह को वेई नेत्र प्रेम संयुक्त दीखते हैं ।। औरन को वेई नेत्र रूखे दीखते हैं और नायक को वेई नेत्र सनेह भरे दीखते है यातें उल्लेख अलंकार का पहला भेद ।।

दोहा ॥

नंद नंद के रूप पर, रीझ रही रिझवारि ।
अध मूंदी अंखियन दई, मूंदी प्रीति उघारि ॥२८१॥

मूल अर्थ—नन्द नंद जो कन्हैया जी के रूप पर वह रिझवार है यातें रीझ रही है और अध खुली हुई अंखियों से निहार के ढकी हुई प्रीति को उघार दीनी ॥ मूंदना प्रति बाधक है तौ भी प्रीति का उघड़ना कार्य सिद्धि हुआ यातें तीसरी विभावना अलंकार ॥

अथ उद्दीपन ॥

दोहा ॥

चंद, कमल, चंदन, अगर, ऋतु, बन, बाग-बिहार ।
उद्दीपन शृंगार के, जे उज्जल संभार ॥ २८२ ॥

मूल अर्थ—चंद्रमा और कमल और चंदन और अगर और ऋतु और बन और बाग का विहार आदि इतने शृंगार रस के उद्दीपन जानो ॥

सवैया ॥

पूरन चंद उदोत कियौ घन, फूलि रही बन जाति सुहाई ।
भौंरन की अवली कल के रव, कुंजन पुंजन मैं मृदु गाई ॥
बांसुरी ताननि काम के बाननि, लै "मतिराम,, सबै अकुलाई ॥
गोपिन गोप कछू न गिने, अपने २ घर तैं उठि धाई ॥२८३॥

मूल अर्थ—सम्पूर्ण चंद्रमा उदय हुआ और सघन वनास्पती प्रफुल्लित भई भौरों की पंक्ति कल के रव जो अच्छे शब्द से कुंजों के समूह में मृदु जो कोमल स्वर से बोलने लगी और कामदेव के तीर के समान वंशी की तानों से बहुत अकुलाकर गोपन के गोपी जन कुछ भी गिनती नहीं भई और अपने २ घर से निकस के कन्हैयाजी के पास आई । आवेग और उग्रता संचारी भाव का उदय है यातें भाव उदय अलंकार ॥

दोहा ॥

प्रथम काम जन मनन कौं, रंगत, सुरभि, रितु राग ।
मंडत है नव पल्लवन, पुनि पीछे बन, बाग ॥२८४॥

मूल अर्थ—प्रथम काम प्रगट होने के इतने उपचार हैं रंग और सुगन्ध और ऋतु और राग और सपल्लव फूले हुए बन और बाग ॥

दोहा ॥

सखी दूतिका जानिये, उद्दीपन के भेद ।
नायक अरु नायकान को, हरै बिरह को खेद ॥२८५॥

मूल अर्थ—सखी और दूती उद्दीपन को भेद जानिये क्योंकि नायक की और नायका की विरह की खेद हरतीहै ॥

दोहा ।

दरसन उद्दीपन सबै, बरनै अष्ट विधान ।
भूप मनोहर सिंह के, निज अनुकम्पा जान ॥ ८ ॥

इति दर्शन उद्दीपन भेद प्रकरण ।

अथ सखी बर्णन ॥

अथ सखी लक्षण ॥

दोहा ॥

जा तियसौं नाहिं नायका, कछू छिपावे बात ।
तासौं बरनत कह सखी, सब कवि मति अवदात॥२८६॥

मूल अर्थ—जिस स्त्रीसे नायका कुछ भी बात नहीं छिपाती है तासों सखी कह के सब अच्छी बुद्धि के कवि बर्णते हैं ।

अथ सखी के काम ॥

दोहा ॥

मंडन अरु शिक्षा करन, उपालम्भ, परिहास ।
काज सखी के जानियो, औरैं बुद्धि बिलास ॥ २८७

मूल अर्थ— मण्डन और शिक्षा और उपालंब और परिहास इन को आदि देकें और भी सखी के कार्य हैं ते कवि बुद्धिके बिलास से जानोगे ।

अथ मंडन—उदाहरण ॥

सवैया ॥

जावक रंग रँगे पग पंकज, नाहके चित्त रँगे रँगु जातैं ॥
अंजन देकर नैनन मैं सुखमा, बढ़ि श्याम सरोज प्रभातैं ॥
सोने के भूषन अंग रचे, "मतिराम,,सबै बस कीबे की घातैं॥
यौंही चलै न सिंगारसुभावहि, तैंसखीभूलिकहीसब बातैं२८८

मूल अर्थ—जावक के रंगतैं पद पङ्कज को रंगे ता रंग में नाहका चित्त रंगा जाय और नेत्रों में अंजन लगावें सो श्याम सरोज से भी शोभा अधिक-हो और सोने के आभूषन अंगो में धारन करावें येही रीतें बस करने की हैं हे सखी! ये बातें सब मैं ने भूलिके कही तैं सहज सिंगार से योंही चल । विनाही शृंगार नायेका शोभा पाती है यातें प्रथम विभावना अलंकार ॥

दोहा ॥

सखी प्रिया की देह मैं, सजे शृंगार अनेक ।
कजरारी अँखियान मैं, भूली काजरु एक ॥२८९॥

मूल अर्थ—सखी ने नायका की देह में अनेक शृङ्गार सजे पर कज रारे नेत्रों में एक अंजन भूलि गई । विनाहीं काजल दिये आंख काजल लगाने के समान देखती है यातें प्रथम विभावना अलंकार ॥

अथ शिक्षा उदाहरण ॥

कवित्त ॥

मलय को पवन मंद मंद कैं गमन लाग्यौ,
फूलन कै बृन्द तैं मकरन्द ढारने ॥
कवि"मतिराम,,छितिछोर चारौं ओर चाहि,
लाग्यौ चैत चन्द चारु चाँदनी पसारने ॥
अलिन की आली २ मैंन कैसे मंत्र पढि,
लागी मानिनीके मनन मान झारने ॥

सुमन सिंगार साज सेज सुख साज करो,
लाज करो आज बृजराज पर वारने ॥ २६० ॥

मूल अर्थ—सीत मन्द सुगन्ध मलय का पवन चलने लगा और फूलों के सुगन्ध से मकरन्द ढ़रने लगा और जमीन के छोर पै चारों ओर चैत का चन्द्रमा चांदनी फैलाने लगा और हे सखी ! भौरों की पंक्ति कामदेव के से मनत्र पढ़िके मानती के मनके मान को झारने लगी अब सुखके समाज से फूलों की सेज बनाओ और लाजको आज बृजराज पर निछरावल करो भवरों की पंक्ति मानो माननी के मन से मान दूर करने लगी है। यहां मनु शब्द से असिद्ध विषया फलोत्प्रेक्षा अलङ्कार ॥

दोहा ॥

कित सजनी है अनमनी, अँसुवा भरत ससंक ।
बड़े भाग नँदलाल सौं, झूठहु लगत कलंक ॥ २९१ ॥

मूल अर्थ-हे सजनी ! दुचित मन होकें आंसू क्यों गिराती है ? और तेरा बड़ा भाग है सो झूठ भी तुझे नन्दलाल से कलङ्क लगता है । यहां कलङ्क दूषण में गुण मान लिया यातें दूसरा श्लेष अलङ्कार है ॥

उपालम्भन उदाहरण ॥

कवित्त ॥

पान की कहानी कहा पानी को न पानकरै,
आहि कहि उठति अधिक उर आधि कैं ॥
कवि "मतिराम,, भई विकल बिहाल बाल,
राधिके जिवावरे अनंग अबिराध कैं ॥
याही को कहायो बृजराज दिन चारही मैं,
करिहै उजार बृज ऐसी रीति नाधि कैं ॥
जैसे तैंने मोहन ! बिलोक्यौ वाकी ओर ऐसे,
वैरीहू सौं बैरी न बिलोकै बैर साधि कैं ॥ २९२॥

मूल अर्थ—पान नहीं खाती है और पानी का भी पान नहीं करती है और मन में अधिक बिथा बढ़ गई है यातें आह कर के उठती है वह बाल बिकल और बिहाल भई है अब कामदेव की बिथा को रोक कर राधे को जिवावे ऐसी कहनावट हो रही है । बृजराज ऐसी रीति दिन चार एक राख कर बृजको सूनी करेंगे । हे मोहन ! जैसे तैने वाकी ओर अवलोकन किया ऐसी तरह बैर सहित बैरी भी नहीं देखता है । राधिका बिकल भई है इस अर्थ को मोहन तैं वाकी ओर अवलोकन किया तैसें बैरीहू सों बैरी न बिलोकते हैं यह युक्ति करके समर्थक क्रिया यातें काव्य लिङ्ग अलंकार ॥

दोहा ॥

वाको मनु लीने लला, बोलो बोल रसाल ।
झुकत तनकही बात मैं, ललित बेलि वर बाल ॥२६३॥

मूल अर्थ—हे लला ! रसाल बोल बोलिकें वाको मन हर लीजिये वह बाल ललित बेलिकें समान तनक बात में झुकती है । बेलि उपमान नायका उपमेय झुकना साधारण धर्म सी, लों इत्यादि बाचक का लोप है यातें बाचक लुप्ता लुप्तोपमा अलङ्कार ॥

अथ परिहास उदाहरण ॥

सवैया ॥

गौने के द्योस कहे "मतिराम,,
सहेलिन को मिलि के गनु आयौ ॥
कंचन के बिछिया प्रहिरावत,
प्यारि सखी परिहास बढ़ायौ ॥
"प्रीतम श्रोन समीप सदा,
बजे,,यौं कहि कैं पहिलो पहिरायौ ॥
कामनि कोल चलावनि कौं,
कर ऊंचो कियौ पै चल्यौ न चलायौ ॥२६४॥

मूल अर्थ—गौने के दिन सहेलियों का गन मिल कें आया और सोने की बिछिया पहराती समय प्यारी सखी ने परिहास किया " नायक

के कान के पास अच्छी धुनिसे बाजते रहियो „ ऐसें कहके प्रथम विछिया पहिराया तब नायका के हाथ में कमल का फूल था सो सखी पर चलाने के लिये हाथ ऊंचा किया पर उसके हाथ से कमल का फूल नहीं चल सका। चलाना हेतु यातें चलना कार्य नहीं हुआ यातें विशेषोक्ति अलंकार है।।

दोहा ॥

प्रभा तरोना लाल की,परी कपोलन आन।
कहा छिपावत चतुर तिय, कंत दंत छत जान ॥२६५॥

मूल अर्थ—कपोल पै मानिक जड़ित तरोना का प्रतिबिम्ब आन के परा है तब नायका छिपाती है तब सखी कहती है कि नायक के दन्त के चिन्ह के भ्रमसे हे चतुर तिय मत छिपा यह तरोना में मानक जड़ा हुआ है ताका प्रतिबिम्ब है। कपोल पर मानिक के प्रतिविम्ब को नायका नायक के दन्त छित मानती है यातें भ्रांति अलंकार।

दोहा ॥

भुज फुलेल लावत सखी, कर चलाय मुसकाय।
गाढे गहे उरोज तिय, बिहसी भोंह चढ़ाय ॥२६६॥

मूल अर्थ—भुज मूल के सखी फुलेल लगाती हुई कर जो हाथ चलाय कें उरोज को गाढ़ा पकड़ा तब नायका ने हंसि कें भोंह चढाई ॥

दोहा

सखी कर्म निज युक्त सम,वरने नवम विधान।
भूप मनोहर सिंह की,जगत सुकीरति जान ॥ ९ ॥
इति सखी जन कर्म निरूपण प्रकर्ण ॥

अथ दूती उत्तमादि त्रिविध भेद वर्णन ॥

दोहा ॥

निपुन दूतता मैं सदा, दूती ताहि बखान।
उत्तम, मध्यम, अधम यों, तीन भांति सों जान ॥२६७॥

मूल अर्थ—दूतता में जो वसीठी के काम में निपुण होती है ताको दूती कहते हैं । ताके उत्तम और मध्यम और अधम ये तीन भेद हैं ।।

अथ उत्तम दूती लक्षण ॥

दोहा ॥

मोहै जो मृदु बोलि कैं, मधुर बचन अभिराम ।
ताहि कहत कविराज हैं, उत्तम दूती नाम ॥२६८॥

मूल अर्थ—मधुर बचन बोल कें जो मनको मोहित करती है ताको कविराय उत्तम दूती कहते हैं ।।

उदाहरण—कवित्त ॥

जा दिन तैं देखे "मतिराम,, तुम तादिन तैं,
बढ़ी रहै मुसकानि वाके जियराई पर ॥
भावत न भोजन बनाबत न आभरन,
हेतु न करत सुधा निधि सियराई पर ॥
चलो उठ देखो बड़े भाग हैं तिहारे अब,
राखो धरि राधि के कन्हाई हियराई पर ॥
दूनी दुति छाई देह आई दुबराई पिय,
राई लौनु वारिये पिया की पियराइ पर ॥२६९॥

मूल अर्थ—जिस दिन से तुमको देखा है तिस दिन से वाके हृदय में मुसकानी चढ रही है और भोजन नही करती है और आभूषण नहीं पहरती है और चंद्रमा की शीतलता से भी हेत नहीं करती है । हे कन्हाई ! अब उठ चलो तेरे वड़े भाग हैं । जिय में राधिका से एकता राखो हे प्रिय ! वाकी देह पै दुबराई जो छीनताई हो गई है यातें दूनी कांति वढ़ती है, वा नायका के शरीर पै पीलाई जो पिलाम आगया है तिन को दृष्टि नहीं लागने के लिये वापै राई लौन वारिये ।। छीन होने से शोभा पाती है यातें दूसरी विनोक्ति अलंकार ।।

दोहा ॥

तिय के हिय के हरन कौं, भयो पंच शर बीर ।
लाल! तुम्हैं बस करन कौं, रहे न तरकस तीर ॥३००॥

मूल अर्थ—नायका के मन को वस करने के लिये पंचसर वीर हो चुका तातें हे लाल! तुम्हें वश करने के लिये वाके तरकस में तीर नहीं रहा ॥

अथ मध्यम दूती लक्षण ॥

दोहा ॥

कछू बचन हित के कहै, बोलै अहित कछूक ।
मध्यम दूती कहत हैं, तासौं सुकवि अचूक ॥३०१॥

मूल अर्थ—हितके और अहित के मिले हुए बचन कहै ताकों अच्छे कवि मध्यम दूती कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

चरन धरै न भूमि बिहरै जहांई तहां,
फूले २ फूलनि बिछायो परजंक है ।
भार के डरनि सुकुमार चारु अंगन मैं,
करति न अंगराग कुंकुम को पंक है ॥
कवि "मतिराम,, देखि बातापन बीच आयो,
आतप मलीन होत बदन मयंक है ॥
कैसैं वह बाल लाल बाहिर बिजन आवै,
बिजन बयारं लागैं लचकत लंक है ॥ ३०२ ॥

मूल अर्थ—जमीन पै पांव नहीं देती है और जहांई तहां विहरती है फूले२ फूलों से परजंक बिछारखा है भार के डर से कोमल और सुन्दर अंगन में अंग राग नहीं लगाती है और कुंकुम जो केसरका पंक जो गारा कर रक्खा है और बातापन जो झरोखा या जाली से सूर्य का प्रतिबिंब

मकान के भीतर पड़ता है उसको कहते हैं उस के बीच में होकर निकलने से मुख चन्द्र धूप से मलीन होतो है। हे लाल ! वह बाल बाहर कैसे आवे पंखा के पवन से भी याकी कमर लचकती है ॥

दोहा ॥

रीझि रही रिझवार वह, तुम ऊपर बृजनाथ! ।
लाज सिन्धु की इन्दुरा, क्योंकर आवे हाथ?॥३०३॥

मूल अर्थ—हे बृजनाथ ! तुम्हारे ऊपर वह रिझवार होकें रीझ रही है पर लाज रूपी समुद्र की भीतर की लक्ष्मी है सो हाथ कैसें आवेगी ! ॥ उपमान लक्ष्मी और उपमेय नायका को एकता कर के वर्णन किया और प्रसिद्ध लक्ष्मी को जुदी नहीं रक्खी और लज्जा समुद्र से अधिकता यातें अधिक अभेद रूपक अलंकार ॥

अथ अधम दूती लक्षण ॥

दोहा ॥

अधम दूतिका जानिये, बचन कहत सतराय ।
ग्रन्थन को मति देखिकें, बरनत सब कविराय॥३०४॥

मूल अर्थ—जो सतराय कें बचन कहती है ताको सब कविराय ग्रंथन को मति देखि के अधम दूती कहते हैं ॥

उदाहरण कवित्त ॥

जानत कछू न पै कहावत रसिक राय,
ल्याउ २ अबहीं तिहारें यह टेक है ॥
कूरनकी रीतिहै जु डेल ऐसो डारिदेत,
"मतिराम,,चतुर चतुराई लिये कहै ॥
बोली न नवेली कछू बोल सरसाय वाहि,...
मनसिज ओज को सुहानौं नेकुसे कहै॥
बात के कहत अलसात अँगिराति जात,
सोहैं कर नेंकने बिहसोहैं भेय नेकु है ॥ ३०५ ॥

मूल अर्थ—रसिक राय कहाते हो पै तुम कछू नहीं जानते हो और लाउ ल्याउ ऐसें कहने की तुम्हारे यह टेव है अजानों की यही रीति है सो ढेले के समान बचन को डार देते हैं और चतुर होते हैं सो चतुराई लिये कहते हैं वह नवेली कछू बोल नहीं बोली और सतराय कें अवलोकन किया और मनसिज के बोल का जो कामदेवके बोल का सुहावता थोरासा कहा बात के सुनते ही शरीर में अलसाय कें आलस खाया और सोहें कर के नेत्रन से थोरी सी हंसोई भई ॥

दोहा ॥

ज़ोवन मंडित आपनैं, अजो न जानत गात।
तो चित मैं अति चटपटी, निपट अटपटी बात ॥३०६॥

मूल अर्थ—जोवन के मंडन को अब तक भी अपने तन में नहीं जानती है तेरे चित्त में उतावल लग रही है यातैं वातैं अटपटी करती है चित्त में चटपटी कहिये उतावल है यातैं बात अटपटी कहती है यहां कारण में कार्य का अंग है यातैं हेतु अलंकार ॥

दोहा ॥

दूती भेद बिधान सब, बरने जुक्ति निकेत।
यहै मनोर प्रकाश अति, उत्तर प्रश्न समेत ॥ १० ॥
इति दूती भेद प्रकर्ण ॥

अथ अनुभाव वर्णन ॥

दोहा ॥

जिनमैं चित रत भाव को, आछो अनुभव होय।
रस सिंगार अनुभाव तैं, बरनत कवि सब कोय॥३०७॥

मूल अर्थ—चित के रतिभाव का जिनतें अच्छा अनुभव होय तिन को सब कोई कवि शृंगार रस के अनुभाव कहते हैं ॥

दोहा ॥

लोचन, बचन, प्रसाद मृदु, हास हाव धृति मोद ।
इतने प्रकटत भाव रति; बरनहि सुकवि विनोद॥३०८॥

मूल अर्थ-नेत्रों के और बचनों के प्रसाद जो प्रसन्नता से और मृदु हास से और धीरज से और मोद इतने में बहुत भाव प्रगटते हैं तिन को अच्छे बुद्धिमान मोद युक्त वर्णन करते हैं ॥

सवैया ॥

गहे हाथसों हाथ सहेली के साथमें,आवतहीबृषभानलली॥
"मतिराम,, सुबासतें आवत नीरे, निवारतभौंरनकी अवली॥
लखिकें मनमोहनकों संकुची, करयौ चाहत आपनी ओटअली॥
चितचोरालियो दृगजोर तिया, मुखमोर कछूमुसकायचली३०९

मूल अर्थ-हाथ से हाथ पकर के सहेली के साथ वृष भान लली जो श्री लाडिली जी आवती थी और सुगंध से तिन के निकट भौरों की पंक्ति आती थी तिन को निवारण करती थी तहां कन्हैया जी आये तिन को देख के लज्जित भई और अपने तई सखी के ओट में करना चाहा और उस स्त्री ने नैत्र मिला कें चित को चोर लिया और मुख को मोर के मुसकाय कें चली ॥

दोहा ॥

सहज बात बूझत कछू, बिहस नवाई ग्रीव ।
तरुन हिये तरुनी नई, ठई नेह की नीव ॥ ३१० ॥

मूल अर्थ-सहज की बात पूछवे में कछू विहस के ग्रीवा नवाई और तरुनी ने नायक के हिय में स्नेह की नवीन नीव दई ॥ कछू विहंस के ग्रीवा नवाय कर तरुनी ने तरुन के हिय में नेह की नवीन नीव दीनी यहां कारण कार्य के लिये कहा यातें हेतु अलंकार का पहला भेद ॥

अथ सात्विक भाव।

दोहा ॥

ते अनु भावे जानिये, जेहैं सात्विक भाव।
रस गून्थन अवलोकि कैं, बरनत सब कविराव ।३११।

मूल अर्थ—जे सात्विक भाव हैं ते अनुभाव कहिये सो रस गूंथन में कवि आठ प्रकार वर्णन करते हैं ।।

दोहा ॥

स्तंभ, स्वेद, रोमांच, सुर भंग, कंप वैबर्ण।
आंसू और प्रलाप कहि, आठौं गून्थन बर्ण ॥३१२॥

मूल अर्थ—स्तंभ जो स्थिर होना, स्वेद जो पसीना आना, रोमांच जो रूंखड़े होना, स्वर भंग जो स्वर का टूटना, आंसू जो पानी आंखों से गिरना, प्रलाप जो इन्द्रियों की शक्ति का नाश होना, कम्प जो धूजना वैवर्ण जो रंग का फिर जाना, ये आठौँ सात्विक गूंथों में वर्णन करते हैं ।।

अथ स्तंभ लक्षण।

दोहा ॥

लज्जा हर्षादिकन तैं, अचल होत है अंग।
स्तंभ कहतहैं ताहि को, जे प्रवीन रस रंग ॥३१३॥

मूल अर्थ—लज्जा और हर्षादिक से शरीर स्थिर होय तिन को जो रस रीति में प्रवीन हैं ते स्तंभ कहते हैं

उदाहरण सवैया ॥

देखतही "मतिराम,, रसाल, गही मति प्यारीकी प्रेम न गाढी ॥
चाहवे की चितचाह भई हिय, तैं कुलकानि न जातहैं काढ़ी ॥
संग सखीनको जानि दुरावति, आनन आनंदकी रुचि बाढ़ी ॥
पाइं परे मगमैं न भटू सुभई मिस लाजनके फिरठाढ़ी ॥३१४॥

मूल अर्थ—देखतेही रसीले प्यारी की मति प्रेम नही और गाढ़ी गही और देखने की चित्त में अभिलाषा भई और हृदय से कुल कानन जो कुल मर्यादा नहीं हैं सो निकाली जाती है और सखीन के संग जान के छिपाती है आनन जो बदन तापैं आनंद की रुचि बढ़ी है और रस्ते में पग नहीं परते हैं यातें सखीसे लाज का मिस कर के फिर ठाढ़ी भई चित्त में चाहवे कि चटक भई और हिय से कुल कानि नहीं निकाली जाती है यहाँ लाज और अभिलाषा की संधि है यातें भाव संधि अलंकार ॥

दोहा ॥

पाय इकंत निकुंज मैं, भरी अंक बृजनाथ।
रोकनकौं तिय कराति पै, कह्यौ करत नहिं हाथ ॥३१५॥

मूल अर्थ—निकुंज में एकाँत पाय कैं बृजनाथ ने अंक भरी तब तिय रोकने को करती है पर हाथ कहा नहीं करता है ॥ रोकने का मनोरथ करती है पर हाथ कहा नहीं करता है रोकने का मनोरथ हेतु है तातें रोकना कार्य नहीं हुआ यातें विशेषोक्ति अलंकार है ॥

अथ स्वेद लक्षण।

दोहा ॥

हरष, लाज, भय कोप, श्रम, इत्यादिक तैं होय।
पानी प्रगटत देह मैं, स्वेद कहावत सोय ॥३१६॥

मूल अर्थ—हर्ष और लाज और भय और कोप और श्रम आदि से शरीर में पानी प्रकट होता है ताको स्वेद कहते हैं ॥

उदाहरण—सवैया ॥

किंकिनि नेवर की झनकारनि चारु पसार महा रस जालहि॥
कामकलोलनिमैं "मतिराम,, कलानिनिहाल कियोनंदलालहि।
स्वेदके बूंद लसे तन मैं रत, अंतरही लपटाय गुपालहि ॥
मानो फनी मुकताफलपुंजन,हेमलता लपटानी तमालहि।३१७

मूलअर्थ—किंकिनी और नूपुर की झनकार सहित सुन्दर महा रस समूह फैलाया और काम किलोलों में कलाओं नंद लाल को निहाल किया तन में स्वेदकी बून्द शोभाय मान हैं और रति के अंत में गुपाल से लपट रही है सो ऐसी शोभा पाती है मानो सोने की बेलि मोतियों के फलों से फली हुई तमाल के वृक्ष से लपटाय रही है ।। मोती फलके गुच्छों से फली हुई मानो सोने की बेलि तमाल के वृक्ष से लपटाय रही है यहां हेमलता, मोती फल, तमाल वृक्ष इत्यादि सारूप उत्प्रेक्षा मनु वाचक कर के होता है यातें वस्तु उत्प्रेक्षा अलंकार ।।

दोहा ॥

कुचतैं श्रम जलधारि चलि, मिली रोमावलि रंग ।
मनो मेरुकी तरहटी, भयो सितासित संग ॥३१८॥

मूल अर्थ—उरोजो से प्रस्वेद की धार चलि कें रोमावली के संग मिल रही है सो ऐसी शोभा पाती है मानो सुमेरु की तरहटी में सतोगुण और तमोगुनका संग हुआहै अर्थात् तम और प्रकाशका संग हो रहाहै ।। रोमावली में प्रस्वेद मिला है ताको मेरु की तरहटी में सत तम के मिलाप का सारूप किया और "मनु,, वाचक है यातें उक्त बिषया सारूप उत्प्रेक्षा अलंकार ।।

अथ रोमांच लक्षण ।

दोहा ॥

हरष भयादिक तैं प्रगट, रोम उमग जो अंग ।
ताहि कहत रोमांच हैं, कविजन सुमति उतंग॥३१९॥

मूल अर्थ—हर्ष और भय को आदि देकें किसी कारण से सर्व शरीर के रोम खड़े होते हैं तिन को अच्छी बुद्धि के कवि रोमांच कहते हैं ।।

उदाहरण—कवित्त ॥

चन्द्रमुखी हांसी मैं चमेली की लतासी होत,
चम्पक लतासी अंगिजोति को धरत है ॥

कवि "मतिराम,, तेरे अंगकी सुवास लेहैं
को; नवेली ऐसी हिये जानि न परत है ॥
नेंसुक निहारि तू नवेली नैंन कोरन सौं,
ऐसी अद्भुतकी कलानि अचरत है ॥
ललित तमाल श्याम रसिक रसाल कोक,
कलित कमलन की कली पकरत है ॥ ३२० ॥

मूल अर्थ—वह चंद्र वदनी हंसी में चमेली की लता के समान होती है और चंपेकी लता के समान अंग की कांति धारन करती है और तेरे अंग की सुवास के समान ऐसी को नवेली है सो नहीं जानी जाती है हे नवेली तें थोरासा देख नेत्रों की कोरों से ऐसी अद्भुतताकी कला का आचरण करत है कोमल तमाल के वृक्ष के रंग के समान श्याम रंग है जाको ऐसे वे रसिक जो कन्हैया रसाल जो रस के घर कोक कलित जो काम शास्त्र में निपुण कमल की कला को पकरते हैं ॥ तमाल उपमान नायक उपमेय श्याम रंग सो धर्म बाचक का लोप है यातें वाचक लुप्ता लुप्तोपमा अलंकार ॥

दोहा ।

जहां अंग ढिंग ह्वै कढ़त, छुवे छैल की छांहि ।
अजहू लौं अवलोकिये,पुलकि पटल ता मांहि॥३२१॥

मूल अर्थ—जो अंग के ढिंग ह्वै के नही कढत और उस छैल की छाया का स्पर्श हुआ है यातें अभी तक रूं खड़े और पसीने में भरे हुऐ दीखते हैं ॥

अथ स्वर भंग लक्षण ।

दोहा ।

क्रोध हर्ष मद भीत तैं, वचन और विधि होय ।
ताहि कहत स्वरभंगहैं, कवि कोविद सबकोय ॥३२२

मूल अर्थ—क्रोध तें और हर्षतें और मदतें और भयतें वचन और बिधि होते हैं ताको सब कोई कवि स्वरभंग कहते हैं ॥

उदाहरण–सवैया ॥

ताहि लेआई अली रति मंदिर, जाकी लगे रति यौं परछाहीं॥
आय गयो "मतिराम,, तहां जिन, कोटिन काम कला अवगाही॥
देखतही सगरी वेटरी पकरी हंसि कैं तिय की पिय बांहि ॥
लाजनि तैं मति मंद भई सुकढी मुख चंद मरू कर नाहीं॥३२३॥

मूल अर्थ–जिस नायका की रति को उपमा लागती है उस नायका को सखी लेकर रति मन्दिर में आई कोटि काम की कला को धारन करने वाला नायक वहां आगया तब उस को देखते ही सब सखियां दूर हुई और हंसिके नायक ने नायका का हाथ पकरा लाजन यहांनकार बहु बचन का नहीं है यातें नकार नहीं का अर्थ देता है लाज बिना मतिमन्द भई यातें मुख चन्द से मरू कर के नाही कढ़ी ॥ रति को जाकी परछाहीं लागती है नायक उपमेय है ताको उपमान किया और रति उपमान ताको उपमेय कीनी यातें प्रथम प्रतीप अलंकार है ॥

दोहा ॥

कहा जनावति चातुरी?, कहा चढावति भौंह? ।
अधनिकरे अखरान सौं, सौंहें कीजे सोह ॥३२४॥

मूल अर्थ–कहा चातुरी जनाती हो ? और कहा भौंहें चढाती हो? अधनिकरे अखरों से सौहें करती हो यातें तुम्हें सौंह हैं ॥

अथ कंप लक्षण ॥

दोहा ॥

क्रोध हर्ष भय आदितैं, थरहराति जो देह ।
ताहि कंप यौं कहत हैं, कवि कोविद मति गेह ॥३२५॥

मूल अर्थ–क्रोध और हर्ष और भयादिक से शरीर काँपता है ताको बुद्धि के घर ऐसे कवि और कोविद कम्पा कहते हैं ॥

उदाहरण—सवैया ॥

चंद्र मुखी अरबिंद की मालन, गूंदत रूप अरूप सुधारयौ॥
काम सरूप तहां "मतिराम,, अनंद सौं नंद कुमार पधारयौ ॥
देखत कंप छुटयो तिय के तन, यौं चतुराई को बोल उचारयौ॥
सीरे सरोज लगे सजनी कर, कांपतु जातु न हार संवारयौ॥३२६॥

मूल अर्थ—चंद्र बदनी कमल की माला गूंथती है अनूप रूप धरें हुई तहां आनन्द से काम स्वरूप नंद लाल आये तिन को देखते ही नायका को कंपा स्वातक भयो तब चतुराई से ऐसा बोल कहा हे सजनी! कमल सीतल लगता है यातें हाथ धूजता है तातें हार नहीं संभारा जाता है ॥ नंद कुमार को देख कर कंपा स्वातक भयो यहां नेत्रों ने अपनो रूप विषय लयो यातें प्रत्यक्ष अलंकार ॥

इन्द्रिय मन निज विषय जुलहैं। ताहि प्रत्यक्ष अलंकृत कहैं ॥

इति अलंकार रत्नाकर

दोहा ॥

लाल बदन लखि बाल के, कुचन कम्प रुचि होत।
चपल होत चकवा मनो, चाहि चन्द की जोत ॥३२७॥

मूल अर्थ—लाल के वदन को देख कें बाल के कुचन में कंपा स्वातक रुचि कारक होती है मानों चंद्रमा की ज्योति को देख कर चकवे चपल होते हैं ॥ उक्तासपद वस्तु उत्प्रेक्षा अलंकार ॥

अथ वैवर्ण लक्षण ॥

दोहा ॥

मोह, क्रोध, भय, आदि तें, वर्ण और विधि होय।
ताहि कहत वैवर्ण हैं, सकल सयाने लोय ॥ ३२८ ॥

मूल अर्थ—मोहतें और क्रोधतें और भयादिक तें वर्ण और विधि होता है ताकों सकल सयाने लोय वैवर्ण कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

छलसौं छबीली कौं सहेलिन लिवाय कर,
ऊपर अटारी जाय रूप रच्यौ ख्याल को ॥
कवि "मतिराम,, जबे भूषन झनक सुनि,
चाय भौ चपल चित रसिक रसाल को ॥
अली चली सकल अलीन मिस कर कर,
रसिक रसाल आप आयो नन्द ग्वाल को ॥
लालन को इन्दु सो बदन अवलोकि कर,
बिन्द सौं बदन कुम्हिलाय गयौ बाल को ॥३२६॥

मूल अर्थ—कपट सों छबीली को सहेलियाँ संग लाकर अटारी के ऊपर ख्याल का सरूप बनाया तहां आभूषणों का झनकार सुन कें अभिलाषा से रसिक रसाल जो रस के घर ऐसे नायक का चपल चित हुआ सब सखियां अलीन मिस कर करके चली गई तब रसिक रसाल नंदलाल आप आये तब नायक का चन्द्रमा समान मुख देखा यातें कमल के समान नायका का मुख था सो सकुच गया ॥ यहां लाज संचारी भाव श्रृंगार रस का अंग है यातें रसवदालंकार ॥

दोहा ॥

बाल रही इकटक निरखि, लाल बदन अरबिन्दु ।
सियराई नैनन परी, पियराई मुख इन्दु ॥ ३३० ॥

मूल अर्थ—बाल टकटकी लगाकर नायक का वदन कमल निहारती है यातें नेत्रों में ठंढाई परी और मुख चंदपै पीलास आया ॥

अथ आँसू लक्षण ॥

दोहा ॥

हरष,, दुख, भय आदि तें, जल आवे अँखियान ।
ताहि बखानत आंसु कहि, अन्यन को मत जान ॥३३१॥

मूल अर्थ– हर्षतें और दुःखतें और भयादिक तें नेत्रों से जल आता है ताको ग्रंथन का मत अवलोकन करने वाले आंसू कहते हैं ॥

उदाहरण–कवित्त ॥

बैठे हुते लाल मनमोहन बिलोकि बाल,
छिनक सकोच राख्यौ गुरुजनकी भीर को॥
कवि "मतिराम,, दीठि और की बचाय देखैं,
देखतही औरें भये राखे अब धीर को ॥
तन की ख़बर भूली खान अरु पान सब,
आंखिन मैं छायो पूर आनँद के नीर को ॥
उमगि हिये तें आयो प्रेम को प्रवाह तातैं,
लाज गिरि परी जैसें तरोवर तीर को ॥ ३३२ ॥

मूल अर्थ– मनमोहन लाल जो कन्हैयाजी बैठे हुते और छबीली बाल जो लाड़िली जी वहां निकट थे पर छिन भर तो गुरु जन की भीर थी ताका संकोच रक्खा और सब की दीठि को बचा कें अवलोकन किया और देखने में अधीरज पने का और भय रक्खा फिर शरीर की सुधि भूलि गये और खान पान भी सब भूलि गये और नेत्रों में आनन्द के जल का प्रवाह आ गया और हृदय से उमंग के प्रेम का प्रवाह चला यातें वा प्रवाह के तटपर लाज रूपी वृक्ष था सो उखड़ गया ॥ "लाज गिर गई ज्यों तर वर तीर को,, लाज उपमेय, नदी तीर का तर वर उपमान ज्यों, वाचक गिरना साधारण धर्म इन चारों अंग कर के पूर्ण उपमा अलंकार है ॥

दोहा ॥

बिन देखें दुख के चलैं, देखें सुख के जाय ।
कहो लाल इन दृगन तें, अँसुवा क्यौं ठहराय?॥३३३॥

मूल अर्थ– हे लाल! तुम्हें नहीं देखती हूं तब तो दुख के आंसू चलते हैं और देखती हूं तब आनन्द के चलते हैं इन हमारे नेत्रन के आंसू कैसे ठहरेंगे ? ॥

अथ प्रलय लक्षण ॥

दोहा ॥

जीवित तनु मैं होत है, इन्द्री सकल निरोध।
हर्ष दुःख भय आदि दै, प्रलय कहत मति सोध॥३३४॥

मूल अर्थ- हर्ष दुःख और भयादिक तें जाके तनकी सकल इन्द्री अपने २ कार्य से थकित होती हैं ताको ग्रनथन के देखने वाले कवि प्रलय कहते हैं ॥

उदाहरण–सवैया।

जादिन तैं छबि सौं मुसक्यात कहूं निरखे नंदलाल बिलासी॥
तादिन तैं मनही मनमैं "मतिराम,, पियैं मुसक्यानि सुधासी॥
नैंक निमेषन लागत नैंन चकी चितवे तिय देव तियासी॥
चंद्रमुखी न हलै न चलै निरबातनिवास मैं दीपशिखासी॥३३५॥

मूल अर्थ–जब तें विलास के करने वाले नन्दलाल को अच्छी छबि से कहीं मुलकते हुए देखे तिसी समय से अमृत के तुल्य मुसकानि का मन हीं मन में पान करती है और थोरीसी आंखें नहीं झपतीहै और टकटकी लगा कर वह नायका देवांगना की समान देखती है और वह चन्द्र मुखी हिलती चलती भी नही है और नही आता है पवन ऐसे भवन में दीपक की शिखा स्थिर रहती है ऐसे स्थिर होरही है ॥ निर्वात स्थान के दीपक की शिखा उपमान और नायका उपमेय अचलपना धर्म, सी वाचक, इन चारों अङ्गों से पूर्ण उपमा अलङ्कार ॥

दोहा।

तोमैं अनमिष नैंनता, मोहै मूरति मैंन।
अनमिष नैंन सुनैंन ये, निरखत अनमिष नैंन ॥३३६॥

मूल अर्थ–तेरे नेत्रों की अनमिषता से मैंन मूर्ति ऐसें जो नायक तिनको वश किये अनमिष नैंन जो देवता तिनके नेत्रों से भी अच्छे हैं नैंन जिनके वह अब अनमिष नैंन से अवलोकन कर रहे हैं ॥

अथ जंभालक्षण ॥

दोहा ।

जंभा को कवि कहत हैं, नवमों सात्विक भाव ।
उपजै आलस आदि तैं, बरनत सब कविराव ॥ ३३७॥

मूल अर्थ–जम्भा जो उबासी को कवि नवमां सात्विक भाव कहते हैं वह आलस निद्रादि से उपजता है ॥

उदाहरण—कवित ।

केलि कैं सकल रात्रि प्रात उठि अंगिराति,
नींद भरे लोचन जुगल बिलसतु हैं ॥
लाजन तैं अंगनि दुरावति है बार २,
खैंचि कर बसन बिहारी बिलसतु हैं ॥
कवि "मतिराम,, आई आलस जंभाई मुख,
ऐसो मन भावती को छबि सरसतु हैं ॥
अरुण उदोत मानो शोभा के सरोवर मैं,
शोभावान शोभा को सरोज बिकसतु हैं ॥३३८॥

मूल अर्थ—सकल राति केलि कर के प्रात समय अलसाते हुए उठे और दोनों नेत्र नीद से भरे हुए विलास जुक्त हैं और लज्जा युक्त होकर नायका बार २ अङ्ग को ढाकती है और विहारी जो नायक वस्त्र खैंचता है और विहसता है इतने में आलस युक्त होकर मुखमें उबासी आई तब मन भावती की ऐसी छवि होकैं रसको बढ़ाने लगी मानो सूर्योदय के समय शोभा के सरोवर में अच्छी क्रांतिका कमल शोभायमान होकैं फूलता है ॥ मुखको कमल की उत्प्रेक्षा कीनी यातैं वस्तु उत्प्रेक्षा अलङ्कार ॥

दोहा ।

आयो पीव बिदेश तैं, बहुतैं द्योस बिताय ।
सखी उठाई पासतैं, सांझहिं तैं जमुहाय ॥ ३३९ ॥

मूल अर्थ–बहुत दिन व्यतीत करके नायक विदेशतैं आया तब जंभाई खाकर पासतैं सखियों को उठा लिया ॥ यहां जंभाई खाकर नींद

के मिस से सखियों को उठा दिया यातें पर्यायोक्ति अलङ्कार का दूसरा भेद ॥

दोहा ।

रचो मनोर प्रकाश मैं, भाव और अनुभाव ।
एकादशम विधान यह, स्वातक भेद बनाव ॥ ११ ॥

इति भावानुभाव भेद वर्णन प्रकर्ण ।

अथ शृंगार वर्णन ।

दोहा ।

जो बरनत तिय पुरुषको, कवि कोविद रति भाव ।
तासौं रीझत हैं सुकवि, सो शृंगार सुहाव ॥ ३४० ॥

मूल अर्थ—नायक नायका का रतिभाव काव्य रचना से वर्णन करता है और जापै सुकवि रीझता है सो रसों का राजा ऐसा शृङ्गार रस है ॥

दोहा ।

कहि शृंगार रसभाव द्वै, प्रथम कहत संयोग ।
ग्रून्थन को मतदेखिकैं, दूजो कहत बियोग ॥३४१॥

मूल अर्थ—शृङ्गार रसके द्वै भेद हैं तामें पहले भेद को संयोग कहते हैं और ग्रन्थन का मत देखिकें दूसरे भेद को बियोग कहते हैं ॥

दोहा ।

प्रमुदित नायक नायका, जहिं मिलाप मैं होत ।
सो संजोग सिंगार कहि, बरनत सुकवि बिनोद ॥३४२॥

मूल अर्थ—नायक और नायका जहां मिलाप में आनन्द जुक्त होय तहां उद्योत बुद्धिके कवि संयोग शृङ्गार कहते हैं ॥

शृंगार का उदाहरण—सवैया

प्रान प्रिया प्रिय आनन्द सौं, बिपरीत रची रति रंगु रह्यौ ह्वैं
कामकलोलन मैं "मतिराम,, रही धुनि त्यौं कलिकिंकिनकीह्वैं॥

आननकी उजियारी परीश्रम, बूंद समेत उरोज लसे हैं ।
चंदकी चांदनी के परसें मनौं, चंदपखान पहार चलेच्वैं॥३४३॥

मूल अर्थ—नायक और नायका स्नेह से आनन्द युक्त होकें विपरीत रति को रची और काम की लहरें बढ़ने लगी तामें सुन्दर किङ्किनी की धुनि होने लगी और नायका के मुखचन्द की चांदनी परकें उरोजन से प्रस्वेद की बूंदें सरोजन पै परने लगीं सो ऐसी दीखती हैं कि चन्द्रमा की चांदनी के स्पर्श से मानो चन्द्र पाखान के दो पहाड़ हैं सो मानो जलधार श्रवने लगेहैं ॥ रति श्रम के उरोजों से जल प्रगट हुआ है और मुख चन्दकी उजाली के स्पर्श से नहीं प्रगटा है ताको मुख चन्द की उजाली के स्पर्श प्रगटना ठहराया ऐसे अहेतु को हेतु रक्खा है यातें असिद्ध से बिषया हेतुउत्प्रेक्षा अलङ्कार ॥

दोहा ॥

छुवत परसपर हेरकें, राधा नंद किशोर ।
सबमैं द्वैही होत हैं, चोर महीचनि चोर ॥ ३४४॥

मूल अर्थ—स्पर्श करके परपर हेरते हैं और सब सखी गणमें से राधा और नन्दकिशोर ये दोनों चोर महीचनी और चोर होते हैं ॥

अथ हाव लक्षण ।

दोहा ॥

नारिन के संयोग मैं, होत प्रकट दश हाव ।
ते संयोग सिंगार मैं, बरनत सब कविराव ॥३४५॥

मूल अर्थ—शृंगार रस में नायका के दश हाव होते हैं, ते संयोग शृङ्गार में सब कविराव वर्णन करते हैं ॥

दोहा ॥

लीला प्रथम, बिलास पुनि, त्यौं विछित्य बखान ।
बिभ्रम, किल किंचित बहुरि, मोटाइत मनआन ॥३४६॥

मूलअर्थ—प्रथम लीला और बिलास और विचित्र और विभ्रम और किलकिंचत और मोटाइत इनको समझना ॥

दोहा ॥

बहुरि कुट्टमिति कहत हैं, पुनिबिब्बोक बखान।
ललित वरन अरु विहति कहि,सकल हाव दश जान॥३४७॥

मूल अर्थ—कुट्टमित कहते हैं और बिवेक को बखानते हैं ललित और बिहति को वर्णन करके सकल दश हाव जानिये ॥

अथ लीला हाव लक्षण।

दोहा ॥

पिय भूषन वचनादि की, लीला करे जो बाल।
तासौं लीला हाव कहि, वरनत सुकवि रसाल॥३४८॥

मूल अर्थ—ववन से वा आभूषण से वा वस्त्र से नायका नायक बन के लीला रचे ताको सकल कविराय लीला हाव कहते हैं ॥

उदाहरण—सवैया।

प्यार पगी पगरी पियकी घर भीतर आपने सीस संवारी॥
एतें में आंगन तें उठिके तहां आयगयो "मतिराम,,बिहारी॥
देखि उतारन लागी पिया पिय सोहन सौं बहुरयौ न उतारी॥
नैंन नवाय लजाय रही मुसकाय लई उर लाय पियारी।३४९॥

मूल अर्थ—नायक घर के आंगन में था और नायक की पाग घरके भीतर थी और नायका भी घर भीतर थी तब नायका ने पाग अपने सिर पै बांधी इतने में नायक आंगन से उठिकें भीतर आगया ताकौं देखकैं नायका पाग उतारने लगी तब नायक ने सौंह दिवाया तातें नहीं उतारी और नीची नजर करके लज्जित हो रही तब नायक ने हंसिके अपने हिय से लगाय लीनी। प्रियके भूषण वस्त्र को आप धारण करती थी इतने में नायक आगये तिनको देखकें लज्जित हुइ यह लज्जित होना स्त्री का स्वाभाविक धर्म है यातें स्वभावोक्ति अलङ्कार ॥

दोहा ॥

मेरे सिर कैसी लगै, यौं कहि बांधी पाग ।
सुंदर रति बिपरीत मैं, प्रगट कियो अनुराग ॥३५०॥

मूल अर्थ—पाग मेरे सिर पै कैसी दीखती है यों कहिके नायका ने अपने सिर पै बांधी फिर नायक नायका ने अनुराग प्रगट करके बिपरीत रति कीनी ।। बिपरीत रति करके इच्छा फल बिषयानन्द को धारण किया यातें बिचित्र अलङ्कार ।।

अथ बिलास हाव लच्चण ॥

दोहा ॥

गवन नयन बचनादि मैं, होत जु कछुक विशेष ।
बरनत ताहि विलास कहि, रसमय सुकवि अशेष॥३५१ ॥

मूल अर्थ—गवन में और नेत्रन में और वचनादिक में कुछ विशेषता होय ताकौ सम्पूर्ण रसके जानने वाले जो कवि हैं सो विलास वर्णन करते हैं ।।

उदाहरण—कवित्त ।

किंकिन कलित कल नूपुर ललित रव,
गौन तेरो देखि कैं सकतु करि गौनको ? ॥
मृदु मुसकानि मुखचंद चारु चांदनी सैं,
राख्यो कै उज्यारो अभिराम द्वार भौंनको॥
सहज सुभावनिसौं भौंहनि के भावनि सौं,
हरति है मनि "मतिराम,, मन रोन को ॥
रूपमद छकी आजु छबि सौं छबीली देत,
तिरछी चितोन मैं न बरछी सी कोन को ॥३५२॥

मूल अर्थ-किङ्किनी जो कट मेखला ताकी कलित जो सुन्दर और नूपुर का भी ललित जो अच्छी ऐसी रव जो धुनि ताकौं सुनकैं और तेरा सुन्दर गमन ताको देखकैं कौन गमन कर सकता है ? और मृदु मुसकानि

युक्त वदन चन्द्र से वदन के दरवाजे पर चान्दनी के समान उजाला कर रक्खा है और तेरे भौंह के सहज सुभाय से मुनिराज का मन बस होता है सो हे छबीली ! तें रूप के मद में छकी हुई बहुत छबि सों तिरछी चितवनि कामदेवकी बरछी के समान कौन पै चलाती है? ॥ तिरछी चितौन को देख कर लाल के नेत्रों में अनमिखता छागई तिरछी चितौन अकारण तातैं अनमिखता कार्य प्रकट हुआ यातें चौथी विभावना अलंकार।

दोहा ॥

तेरी चलन चितोन मृदु, मधुर मंद मुसक्यान ।
छायरही सखि लाल की, अंखियन मिस अंखियान॥३५३॥

मूलअर्थ—मृदु और मधुर और मन्द मुसकान युक्त तेरी चितवन और चलन देख कें लाल की अखियन में अनमिखता छा रही है नायका के चलन चितवनादिक को देख कें लाल के नेत्रों में अनमिखता छा रही है यहां भी चलन चितवनादिक कारण से अनमिखता कार्य प्रगटा यातैं चैाथी बिभावना अलंकार ॥

अथ विच्छित्य हाव लक्षण ।

दोहा ॥

थोरेही भूषन बसन, जहँ शोभा सर साय ।
ताहि कहत बिछित्य हैं, जे प्रवीन कविराय ॥ ३५४ ॥

मूल अर्थ—जहाँ थोरे ही भूषन और बसन से शोभा प्रगट होय तहां प्रवीन कविराय बिचित्र हाव कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

वारने सकल एक रोरीही की आड़ पर,
हा हा न पहरि और आभरन अंग मैं ॥
कवि "मतिराम,, जै हैं तीक्षण कटाक्ष तेरे,
ऐसे कहा सर हैं अनंग के निखंग मैं ॥

सहज सरूप सुथराई रीझ मन मेरो,
डोलत है तेरी अद्भुत की तरंग मैं ।
सेत सारीही सौं सब सौतें रंगी श्याम रंग,
सेतं सारीही सौं रंगे श्याम लाल रंग मैं ॥३५५॥

मूलअर्थ–सखी बचन नायका से ॥ तैंनें एक रोरी की आड़ कर रक्खी है याही पै और स्त्रियों के सबशृंगार निछरावल करती हूं हाहा! तैं अंग में और आभूषन न पहर और जैसे तेरे तीक्ष्ण कटाक्ष हैं ऐसे कामदेव के तरकस में भी बाण कहां हैं? तेरे सहज सरूप और सुथराई में मेरो मन रीझो है और तेरी अद्भुतता की तरंगनमें डोल रह्यो है और तैंने सफेद सारी ही के रंग से सब सपत्नियों को श्याम रंग में रंगी है अर्थात् उनके मुख मलीनताई से श्याम हो गये और सफेद सारी ही के रंग से श्याम जो नायक तिसको लाल रंग में रंगे अनुराग का रंग लाल है सो अनुराग युक्त कीने ॥ सेत सारी से सौतें श्याम रंग में रंगी कारण को रंग और कार्य को रंग और है यातें विषम का दूसरा भेद ॥

दोहा ॥

नथुनी गज मुकतान की, लसत चारु सिंगार ।
जिन पहिरे सुकुमार तन, और आभरन भार ॥ ३५६ ॥

मूल अर्थ–गज मोतियों के युक्त जो नथ सो तैंने पहर रक्खी है यही अच्छा शृङ्गार है और आभूषन काहेको पहरती है? तेरे सुकमार तन पै भार होवेगा शोभा के लिये आभूषण पहरना यह भला उद्यम तिन आभूषणों का भार सुकुमार तनपै भार यह बुरा फल यातें विषम अलङ्कार का तीसरा भेद ॥

अथ विभ्रम हाव लक्षण ।

दोहा ॥

उलटे भूषन बसन को, होतु जु है पहिराव ।
तासों विभ्रम हाव कहि, बरनत सब कविराव ॥३५७॥

मूल अर्थ—जहां भूषन और वस्त्र का उलटा पहिराव होय तहां सब कविराव विभ्रम हाव कहके वर्णन करते हैं ॥

उदाहरण—सवैया ॥

सांजहि तें चलि आवत जात,
जहां तहां लोग नहीं न डरोगी ॥
प्रीतम सौं रतही यह रूप धौ,
ह्वैहै कहा जब अंक भरोगी ? ॥
जानति हो "मतिराम,, तऊ,
चतुराई की बात नहीं उचरोगी ॥
किंकिन को उरु हारु करें कहि,
कोंन सौं जाय बिहार करोगी ? ॥ ३५८ ॥

मूलअर्थ—सांझ समय से ही चलके आती जाती हो और जहां तहां लोग नहीं सो न डरोगी अर्थात तुझे भय नहीं उपजेगा और नायक सें ऐसे रूप संजुक्त रति होके अङ्क भरोगी तब कहा होगो और तऊ जानती हों तुम चतुराई की बातें करोगी पर उरपै किंकिनी का हार पहरें हुई कहो किनसे जायकें बिहार करोगी? । किंकिनी कमर का गहना है ताको हृदय धारन किया यातें असङ्गति अलङ्कार का दूसरा भेद ॥

दोहा ॥

अली चली कहि कौन पै?, बड़े कौन के भाग ।
उलटी कंचुक कुचन पै, कहैं देत अनुराग ॥ ३५९ ॥

मूल अर्थ—अली कहि कौन के पास चली ऐसा किसका बड़ा भागहै कुचन पै उलटी कंचुकी पहर रक्खी है सो अनुराग को कहती है । कंचुकी अनुराग को कहतीहै यह अकारन से कार्य्य यातें चौथी बिभावना अलङ्कार॥

अथ किल किंचित हाव लक्षण ।

दोहा ॥

हरष, गरव, अभिलाष, श्रम, हास, रोष, अरु भीत ।
होत एकही संग हैं, किलकिंचित यह रीति ॥३६०॥

मूल अर्थ—हर्ष और गर्व और अभिलाष और श्रम और हास और रोस भय ये सब एक साथ प्रगट होते हैं सो यह रीति किल किंचित हाव की है ।।

उदाहरण—सवैया ॥

लालन बाल के द्वैही दिना तें,
परी मन आनि सनेह की फांसी ।
काम कलोलनि मैं "मतिराम,,
लगे मनो बाट न मोद की हांसी ॥
पीतम के उर बीच चुभ्यो,
दुलही के बिलास मनोज की गांसी ॥
स्वेद बढ़ो तन कंप उरोजनि,
आंखिन आंसू कपोलनि हांसी ॥ ३६१ ॥

मूल अर्थ—नायक और नायका के आयके थोरेही दिन से स्नेह की फांसी परी है और कामदेव की लहरों से मन में मोद और हांसी बढने लगी और शरीर से स्वेद और कुचन से कम्पा और आंखन से आंसू और कपोलन से हाँसी बढने लगी प्रीतम के और दुलही के हियमें बिलास और मनोज की गांठ प्रगट हुई । कम्पा और आंसू और स्वेद और हांसी इन अनेक भावका क्रमसे एकही नायका आश्रयहै यातें पर्याय अलङ्कार ।।

दोहा ॥

सकुचि न रहिये सांवरे !, सुन गरबीले बोल ।
चढ़त भौंह बिगसाति नयन, बिहसत गोल कपोल॥३६२॥

मूलअर्थ—हे सांवरे ! गरबीले बोल सुन के सकुचि ना रहिये क्योंकि भौंह चढाती है पर नेत्र प्रफुल्लित होते हैं और गोल कपोल बिहंसते हैं यहां भी भौंह चढाना नेत्र बिहसना और कपोल बिकसना इन अनेक भाव के आश्रय एक ही नायका है यातें पर्याय अलङ्कार ।।

अथ मोटाइत हाव लक्षण ।

दोहा ॥

वातन को बिघटन भये, पुनि मिलाप की चाह ।
सो मोटायत जानियो, बरनत सब कविनाह ॥ ३६३ ॥

मूल अर्थ—बचन अमिलत बोलती है पर हिय में मिलाप की चाह रखती है । सो हाव सब कबिराय मोटायत कहके बर्णन करते हैं ॥

उदाहरण—सवैया ॥

फूलि रहे द्रुम बेलिन सौं मिलि,
पूरी रही अंधियारी महारी ॥
मोहि अकेली विलोकि यहां,
कछू और ही सी भई दीठि तिहारी ॥
जैसी हुती हम सौं तुम सौं अब,
होयगी ऐसिय प्रीति तिहारी ॥
चाहतु है चित मैं हितु तो जिन,
बोलिये कुंजन बीच बिहारी ॥ ३६४ ॥

मूल अर्थ—वृक्ष प्रफुल्लित हो रहे हैं और इन पै वेल लपट कें महा अंधियारी हो रही है और मुझे अकेली देख कें तुम्हारी दृष्टि कुछ और ही सी भई है और जैसे होती है तैसे ही अब हमारे तुम्हारे प्रीति होवेगी पर हे विहारी! जो तुम मन में स्नेह चाहते हो तो कुंज बीच मुझ से जिन बोलियो ॥ अकेली देख कें तिहारी रीति कुछ और ही सी भई यहां और पदके धरने से भेदकातिशयोक्ति अलंकार है ॥

दोहा ॥

झूंठे हू वृज मैं लग्यो, मोहि कलंक गुपाल ! ।
सुपने हू कबहूं हिये, लगे न तुम नंदलाल ! ॥ ३६५ ॥

मूल अर्थ—हे नंदलाल! तुम मेरे हिय से सपने में भी कभी नहीं लगे और मुझे झूठ ही ब्रज बीच कलंक तुम्हारे नाम से लगा ॥ कलंक लगना कार्य उपपति का संजोग कारण सो संजोग बिना ही कलंक लगा यह बिनाही कारण कार्य यातें दूसरा बिभावना अलंकार।

अथ कुट्टमित्त हाव लक्षण।

दोहा ॥

जहां सुक्ख अरु दुःख की, प्रगट करे जो बाम।
परम ललित यह हाव है, होत कूट मित नाम ॥३६६॥

मूल अर्थ—जहां नायका सुख और दुःख को प्रगट करे तहां परम ललित हाव होता है और उसी को कूट मित कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

सोनेकीसी बेली अति सुंदर नवेली बाल,
ठाढ़ी ही अकेली अलबेली द्वार महिया ॥
"मतिराम,, आंखिन सुधाकी बरखासी भई,
गई जब दीठी वाके मुख चंद पहिया ॥
नेक नीरें जाय कर बातन लगाय कर,
कछू मन पाय हरवाय गही बहिया ॥
सैनन चहत भई गौनन थकित भई,
नैनन में चाह करे बैनन में नहिया ॥ ३६७ ॥

मूल अर्थ—सोने की बेलि के समान और सुन्दर वह नवेली बाल द्वार के भीतर खड़ी थी जब दीठ वाके मुखचन्द पै गई तब आंखन में अमृत की बरसासी भई और निकट जाकें बातें लगा के धीरज से मन पाय के बहियां गही और बचनों की रचना कर के नेत्रन से थकित भई फिर सैनन से चाह करती है और बचनों से नाहीं करती है ॥ सोने की बेलि उपमान सी बाचक अति सुन्दरता साधारण धर्म और नवेली बाल उपमेय यातें पूर्ण उपमा अलंकार ॥

दोहा ॥

प्रीतम को मन भावती, मिलति बांह दै कंठ ।
बाहीं छुटै न कंठ तैं, नाहीं छुटै न कंठ ॥ ३६८ ॥

मूल अर्थ—वह मनभावती प्रीतम को कन्धे पै बांह डार कें मिलती है वचन से नाहीं छूटती है और कंठ से बांह नहीं छोडती है। यहां जड़ता संचारी भाव शृङ्गार रस का अंग है यातैं रसवद् अलंकार ।

अथ बिब्बोक हाव लक्षण ।

दोहा ॥

जो पिय को अभिमान तैं, करे अनादर बाम।
ताहि कहत बिब्बोक हैं, जे प्रवीन गुन धाम ॥ ३६९ ॥

मूल अर्थ—जहां नायका अभिमान युक्त होकें नायक का अनादर करे तहाँ अच्छे गुण के धाम कवि बिब्बोक हाव कहते हैं ।।

उदाहरण—सवैया ॥

आयो है मानहु राज कछू चढ़ि बैठे हो ऐसै पलास के खोढ़ें ।
गुंज गरे सिर मोर पखा "मतिराम,, हौं गाय चरावत चोढ़ें ।
मोतिन को मेरो तोरयो हरा गहि हाथन सौं रहे चूनरी पोढ़ें ।
ऐसेंही डोलत छैल भये तुम्हें लाजन आवत कामरी ओढ़ें ३७०।

मूल अर्थ—मानों कछू राज प्राप्त हुआ है ऐसे मगरूर से पलास की डार पै चढ़कें बैठे हो और गले में गुञ्जा की माला है और सिर पै मोरपङ्ख का मुकुट है और चौगान में गाय चराने वाले हो और मोतियों का मेरा हार तोरा और हाथों से चूनरी पकर कें पैाढ़ रहे और छैल होकें कामरी ओढ़े डोलते हो यातें तुम्हें लाज नहीं आती है ? ॥ मानों राज आया है मानों पद के कहने से उत्प्रेक्षा अलङ्कार ।।

दोहा ॥

प्रान पियारो पग परयो, तू न तकत यह ओर ।
ऐसो उर जु कठोर तो, न्यायहि उरज कठोर ॥ ३७१ ॥

मूल अर्थ—नायक तेरे पाओंमें परा और तू इनकी ओर नहीं देखती है ऐसो तेरो उर जो हृदय कठोर है यातें उरज जो कुच ते कठोर जो गाढ़े न्याय ही हैं ॥ कठोर उर से उरोजनका कठोरपना कहा यातें कार्य में कारण का अङ्ग है यातें दूसरा हेतु अलङ्कार ॥

अथ ललित हाव लक्षण ।

दोहा ॥

बनै बानिकन सौं सरस, सकल आभरन अंग ।
ललित हाव तासों कहैं, जे कवि बुद्धि उतंग ॥ ३७२॥

मूल अर्थ—बानक सों बनिकें बहुत आभूषण अङ्ग में धारण करे तहां अच्छे बुद्धिमान कवि ललित हाव कहते हैं ।।

उदाहरण—सवैया ॥

मंद गयंद की चाल चलै कलि किंकिनि नेवर की धुनि बाजैं ।
मोतिन हारन सो हियरा हियरा हरिबे की हुलासनि साजैं ॥
सारी सुही "मतिराम,, लसैं मुखसंग किनारी की यों छविछाजैं।
पूरन बिम्ब पियूष मयूष मनो परबेश की रेख बिराजैं ॥३७३॥

मूल अर्थ—मस्त हाथी की चाल के समान चलती है और किङ्किनी का अच्छा शब्द होता है और नूपुर की धुनि होती है नायक के हियको हरिबे के सामान सजि कें हृदय पै मोतियों का हार धारण किया और सुही जो कसूमल रङ्ग की सारी शोभायमान होरही है और उसकें रूपेकी जरी की किनारी लग रही है सो मुखके साथ ऐसी शोभायमान होरही है कि पियूष मयूष चन्द्रमा के पूर्ण बिम्बके गिर्द मानो परवेष की रेख आरही है परबेष कुण्डलों को कहते हैं । स्वेतजरी की किनारी के सङ्ग मुख ऐसी शोभा पाता है कि मानो पूर्ण चन्द्रमा परवेश में आरहा यातें उक्त विषया वस्तु उत्प्रेक्षा अलङ्कार ।।

दोहा ॥

बिरी अधर अंजन नयन, मिहदी पग अरु पान ।
तन कंचन के आभरन, नीठ परत पहिचान ॥ ३७४॥

मूल अर्थ—वीरी चबाने का ओठमें लाल रङ्ग और नेत्रों में काजल का श्याम रङ्ग है और हाथ पांवों में मिहदी का लाल रंग है और शरीर में कंचन के आभूषण पहर रक्खे हैं ते सब नायका के अङ्गों की सहज शोभा से नीठ २ जाने जाते हैं ॥ वीरी का रङ्ग अधर पैं और अञ्जन का रङ्ग नेत्रों पै और मिहदी का रङ्ग हाथ पावों पर सहज रङ्ग के साथ कठिनता से जाने जाते हैं यातैं उन्मीलित अलङ्कार ॥

अथ विहित हाव लक्षण ।

दोहा ॥

जो परि पूरण होत नहि, पिय समीप अभिलाख ।
ताकौं विहित बखान हीं, जिनकी कविता दाख ॥३७५॥

मूल अर्थ—नायक के समीप भी नायका की अभिलाषा पूरी नहीं होती है तहाँ कवि कविता बनाकर विहित हाव कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

सकल सहेलिन के पीछे २ डोलति हैं,
मंद २ गौनु आजु योंही उप करतु है ।
सनमुख होत "मतिराम,, सुख होत जब,
पौन लागे घूंघट को पट उघरतु है ।
कालिंदी के तट बंशीबट के निकट,
नंदलाल कौं सकोचन तें चाह्यौ न परतु है ॥
तन तो तिया को बर भांवरें भरत मनु,
सामरे वदन पर भांवरे भरतु है ॥ ३७६ ॥

मूल अर्थ—सव सखियां के पीछे २ मन्द मन्द गमन से डोलती है और आज ऐसे ही ओपकरती है और पवन से सनमुख आकर घूंघट का पट उघरता है तव आनन्द उपजता है और जमुना की तट पैं वंशीबट के निकट नन्दलाल है पर सङ्कोच से देख नहीं सक्तीहै और नायका का शरीर वह की प्रदक्षिणा कर रहा है और उनका मन सामरे वदन ऐसे जो कन्हैया जीके चौगिर्द भ्रम रहा है ॥ नायकाके मन को प्रसिद्ध तनके आधार विना

 के समान हास उड़ि गया

नायक का मुख और ही आधार ठहराय भांवरें शृं मेह सो कोह इत्यादि अलंकार का पहला भेद ।।

दोहा ।।   इत सुभाय ।।

तीन प्रकार विशेष है, अनाधार आधनाकर ।।

इति अलंकार रतनाव

दोहा ।।   र जाउं ।

रूप सांवरो सांचु है, सुधा सिंधु मैं खेल गाउं ।। ३८६ ।।
लख न सकैं अंखिया सखी, परी लाजकी धीन होकें अच्छा
रे हिय में उसीका

मूल अर्थ—श्याम रूप कन्हैयाजी का सच्चा सुधा सागर नासवाही की नेत्रों के आड़ी लाजकी जेल पर रही है तिससे नहीं दीखता र वर्णन यातें

दोहा ।।

किय लक्षण शृङ्गार के, हाव भेद समझाय ।
नृपति मनोहर की कृपा, दृढ़ निज युक्ति दिखाय ।
इति शृंगार लक्षण हाव भेद वर्णन प्रकरण ।।

अथ बियोग शृंगार ।   ।।३६०।।

दोहा ।।   न होता

प्यारी पीव मिलाप बिनु, होत नहीं आनंद ।
सो बियोग शृंगार कहि, बरनत सब कवि-बृंद ।। ३७८

मूल अर्थ—नायक और नायका को मिलाप बिना आनन्द नहीं होता है तहां सब कवि वृन्द वियोग शृङ्गार कहिकें वर्णन करते हैं ।।

अथ वियोग शृंगार भेद ।

दोहा ।।

कहि पूरब अनुराग, अरु, मान, प्रवास विचार ।
रस शृंगार वियोग के, तीन भेद निरधार ।। ३७६ ।।

मूल अर्थ—बीरी चव अनुराग को के सुनाया तव लाज से रिस को भूलि
का श्याम रङ्ग है और ह्येयोग शृङ्गा को मस्तक नवाया नायक ने बिपरीति
शरीर में कंचन के आभूष न नायका का क्रोध निवारण करना
शोभा से नीठ २ जाने व थ पूर्व १ ।।
रङ्ग नेत्रों पै और सिहः दोहा ॥
नता से जाने जाते हैं देखे सकौं, मन न मान की ठाट ।
प जो लिखैं, लाल तिहारी बाट ॥ ३८६ ॥

१—जो प्रधान जताती है और मन में मान का ठाठ जो
जो परि पू वढ़े और लाल ! अब वह वाल मनाने के लिये तुम्हारी
ताकौं बिरि। मान और चपलता सञ्चारी भाव की सन्धि यातें

मूल अर्थ
होती है तहाँ कहूं ने अथ मध्यम मान लक्षण ।

टा पर दोहा ॥
स और हि नार को, सुने नांव जब नारि ।
मं ले सु मध्यम तहां, वरनत सुकवि बिचारि ॥३८७॥
ा जू म
मूल १— पिय के मुख से और नारि का नाम सुनकें नायका मान
ग से ं सुकवि विचारि कें मध्यम मान कहते हैं ॥
नकें ना उदाहरण—सवैया ॥
टा घर नंद सौं आंगन मांझ बिराजैं असाढ़ की सांझ सुहाई ॥
चित
करते को बूझत और तिया को अचानक नाउ लियो रसिकाई ॥
चलने उने मुहु कोप को मेह प्रिया सुर चापसी भौंह चढ़ाई ॥
श्री याखिन तैं गिरे आंसू के बूंद सु हांसु गयो उड़ि हंसकी नाई ॥३८८

ट मूल अर्थ—असाढ़ के महीने सुहावनी सन्ध्या समय के घर के आंगन
दोनों आनन्द से बैठे थे और नायका से नायक कोई बात बूझता था
हां भूलि के नायक ने किसी परस्त्री का नाम लिया तब उस अन्य स्त्री
से नायक की प्रीति जान के मेघ के समान नायका के मुख पै क्रोध आया

और इन्द्र धनुष के समान भौंहे चढ़ाई और हंस के समान हास उड़ि गया और नेत्रन से आंसू की बूंदे टपकने लगी ॥ यहां मेह सो कोह इत्यादि उपमा दीनी है यातें उपमा अलङ्कार ॥

उपमा जब दीजे चितलाय । उपमालंकृत कहत सुभाय ॥

इति अलंकार रतनाकर ॥

दोहा ॥

भई देवता भाव बस, वह तुम को बलि जाउं ।
वाही को मन ध्यान है, वाही को मुख नाउं ॥ ३८९ ॥

मूल अर्थ—वह देवता हो रही है और तुम आधीन होकें अच्छा भाव रखते हो यातें तुम्हारी बलिहारी जाउं और तुम्हारे हियमें उसीका ध्यान है और मुखसे उसीका स्मरण करते हो । मुख में नामवाही को और मनमें ध्यान वाही को यहां एक बस्तु को बहुत ठौर बर्णन यातें बिशेष अलङ्कार का तीसरा भेद ॥

अथ गुरुमान लक्षण ।

दोहा ।

बोलति और तियान सौं, पिय को देखे बाम ।
होत तहां गुरु मान सो, बरनत कवि "मतिराम,, ॥३९०॥

मूल अर्थ—और स्त्रीसे नायक को बात करता देखे तहां मान होता है जिसको कवि गुरु मान वर्णन करते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

तेरे प्रान प्यारे कहूं सहज सुभाव प्यारी,
कहा भो कही जो कछू बात काहू बाल सौं ॥
तोकौं एती रिस काहे अयानपनी होति है,
दीप कीसी जोति जगे जोवन रसाल सौं ॥
कवि "मतिराम,, मेरो कह्यौ उर आनि आली,
ठान जिन मान ऐसे मदन गुपाल सौं ॥

भौंहें कर सीधी बिहसोंहें से कपोल नैंक,
सौंहें कर लोचन रसोंहें नंदलाल सौं ॥ ३६१ ॥

मूल अर्थ—हे प्यारी। तेरे प्रान प्यारे ने सहज सुभाव में किसी अन्य स्त्री से बात करी तो क्या हुआ ? और तो कों इतनी रिस नाहक अयान जो अज्ञान के समान होती है यातें हे आली ! तू मदन गुपाल जी से मान मत कर और मेरे कहने को तू हियमें धारन कर और तेरे तनमें जोवन है जिसकी जोति दीपक के समान प्रकाशित होवेगी अब भौहें सीधी रख अर्थात भौहें मत चढ़ा और बिहंसोहे से कपोल नेंक जो थोरे सोहैं जो सुशोभित नन्दलाल से लोचन रसोंहें जो रस संयुक्त कर। दीपक उपमान जोति प्रज्वलित होना साधारण धर्म और सी वाचक नायका उपमेय ये चारों अङ्ग साबित यातें पूर्ण उपमा अलङ्कार ॥

दोहा ।

वहु नायक सौं बात मैं, मानु भलो न सयानु ।
दुख सागर मैं बूड़ि हैं, बांध गरें गुर मानु ॥ ३६२॥

मूल अर्थ— घने नायक से बात में मान करना यह भला सयानप नहीं है तैं गुरु मान को जो वह्रे मानको गरे बांधके जो कण्ठ से बाँध के दुख सागर में बूड़ि हैं जो दुखके समुद्र में डूबेगी। मानु भलो नहीं है इस सामान्य अर्थ को गरे गुरु मान को बांधकर समुद्र में डूबी इस विशेष अर्थ करके समर्थक किया यातें अर्थान्तर न्यास अलङ्कार ॥

अथ प्रवास लक्षण ।

दोहा ।

पीतम वसे विदेश मैं, बिरह जहां सरसाय ॥
वरनत तहां प्रवास कहि, जे प्रवीन कवि राय ॥३६३॥

मूल अर्थ—नायक विदेश में होवे और विरह विथा बढ़े जहां जे प्रवीन कविराय हैं ते प्रवास वियोग वर्णत हैं ॥

उदाहरण—सवैया ।

धुरवानि की धावनि मानो अनंग की, तुंग धुजा फहरान लगी।
नभ मण्डलह्वै छित मण्डल छ्वै, छिन जोतिछटा छहरानलगी॥

"मतिराम,,समीर लगै लतिका, विरही बनिता थहरान लगी॥
परदेशमैंपीव संदेस न पायो, पयोधि घटा घहरानलगी ॥३६४॥

मूल अर्थ—धुरवान जो बादलों की धावनि जो चलनि सो अनंग जो कामदेव की मानो धुजाएं फहरने लगी, नभ मंडल जो आसमान और छिति मंडल जो पृथ्वी तिन दोनों के बीच छटा जो बीजली का एक ही सलाव होने लगा और घटा बन कर यदि जो मेघ गाजने लगा और पीउ विदेश में हैं तिन का संदेशा नहीं आया यातें पवन की झकोर से बेलि के समान बिरहनी नायका धूजने लगी ॥ धुरवानि की धावनि मानो काम-देव की धजाओं के समूह फहराते हैं यहां उक्तासपद वस्तु उत्प्रेक्षा अलंकार ।

दोहा ।

चलत लाल के मैं कियो, सजनी ! हियो पखान ।
कहाकरौं? दरकत नहीं, इतैं वियोग कृसानु ॥ ३६५ ॥

मूल अर्थ—हे सजनी ! नायक विदेश को जाता था तब मैं हृदय को पाषाण के समान कठोर किया पर अब इतने वियोग अग्नि से कहा भयो सो नहीं दरकत है ? कहिये नहीं फटत है वियोग रूप अग्नि हेतु है तातें हृदयरूप पत्थर का फटना कार्य नहीं हुआ यातें विशेषोक्ति अलंकार ।

दोहा ।

भेद शृङ्गार वियोग के, बरने त्रिदश विधान ।
भूप मनोहर की कृपा, पूरण हृदय पिछान ॥

इति वियोग शृङ्गार भेद वर्णन प्रकर्ण ॥

अथ नवदशा वर्णन ।

दोहा ।

होत वियोग सिंगार मैं, प्रगट दशा नव जान ।
प्रथम कहैं अभिलाष पुनि, चिन्ता स्मृति बखान ॥३६६॥

मूल अर्थ—बियोग शृङ्गार में नव दशा प्रगट होती हैं तिन में प्रथम अभिलाषा पुनि चिंता और स्मृति को बखानो ॥

दोहा ।

गुन वर्नन उद्वेग पुनि, कहि प्रलाप उन्माद ।
व्याधि बहुरि जड़ता कहत, कवि कोविद अबिबाद ॥३६७॥

मूल अर्थ—पुनि गुर वर्नन और उद्वेग और प्रलाप और उन्माद और व्याधि और जड़ता कबि कोबिद अविबाद जो निश्चय करके कहते हैं ।

अथ अभिलाष लच्छण ।

दोहा ।

ताहि कहत अभिलाष हैं, जो मिलाप की चाह ।
प्रेम कथन तें जानिये, बरनत सब कविनाह ॥ ३६८॥

मूल अर्थ—जिस को अभिलाष दशा कहिये तिस में मिलाप की अभिलाषा होवे ।

उदाहरण—सवैया ।

मोरपखा "मतिराम,, किरीट,
मनोहर मूरति सौं मनु लैगो ॥
कुण्डल डोलनि गोल कपोलनि,
बोल सनेह के बीज से बैगो ॥
लाल बिलोचनि कौलन सौं,
मुसकाय इतैं अरुझाई चितैगो ॥
एक घरी घन से तन सौं,
अंखियान घनों घन सार सौंदैगो ॥३६९॥

मूल अर्थ—मोर की पांख का मुकट है और सुन्दरि सूरति है और गोल कपोलन के ऊपर कुण्डल डोलते थे और बोलने में स्नेह के बीज से बोइकें मन को ले गया और वह श्री कन्हैया जी नेत्र कमलों से चितवन करकें मुसकाय कें एक घरी भर में चित्त को उलझाय गया और श्याम

मेघ के समान सुन्दर तन से नेत्रों में घना जो बहुत घन सारसा दे गया । बोल उपमेय स्नेह बीज उपमान बोलना साधारण धर्म से वाचक, ये चारों अंग करके पूर्ण उपमा अलंकार ।।

दोहा ।

मो मन सुक लौं उड़ि गयो, अब क्यौंहूं न पत्यांय ।
बसि मोहन बनमाल मैं, रहो बनाउ बनाय ॥ ४०० ॥

मूल अर्थ—मेरा मन सुकके समान उड़ि गया सो अब कैसे हूं प्रतीत नहीं करता है और मोहन के हृदय पै बनमाल है तामें बसि कैं बनाउ बना रहा है ॥ सो मनसुकलौं उड़िगयो यहां मन उपमेय शुक उपमान लौं वाचक उड़ना साधारण धर्म इन चारों अंग करके पूर्ण उपमा अलङ्कार ।।

अथ चिन्ता लक्षण ।

दोहा ।

दरसन सुखकी भावना, करे चित्त की चाह ।
चिन्ता तासौं कहत हैं, जे प्रवीन रस नाह ॥ ४०१॥

मूल अर्थ—दरसन और सुख की भावना करके चित्त की चाहसे चिन्ता करे ताको प्रवीण कविराय चिनता कहते हैं ।।

उदाहरण—सवैया ।

जैहूं अकेली महा बन बीच,
तहां "मतिराम,, अकेलोई आवे ॥
आपने आनन चन्दकी चांदनी,
सो पहिलैं तन ताप बुझावे ॥
कूल कलिंद्री के कुंजन मंजुल,
मीठे अमोल वे बोल सुनावे ॥
ज्यौं हंसि हेरि लियो हियरो हरि,
त्यौं हंसिके हियरे हर लावे ॥ ४०२ ॥

मूल अर्थ—जहां नायक अकेला आता है तहां मैं भी महावन के बीच अकेली आऊंगी और वे अपने मुख चंद की चाँदनी से पहिले मेरे शरीर को तप्त जो विरहाग्नि को बुझावेंगे पुनि कलिंदी जो जमुना के कूल जो तटपै मंजुल जो अच्छे और अमोलक और मीठे बचन सुनावेंगे और जैसे हरि ने हंसि के और हेर कें जो अवलोकन करके हिय को जो मन को हर लिया जो वस कर लिया तैसे हरि हंसि के हृदय से लगावेंगे ।। यहां चिंता संचारी भाव शृङ्गार रस का अंग है यातें रसवद् अलंकार ।।

दोहा ।

काजु कहा कुलकान सौं, लोक लाज किन जाय ।
कुंज बिहारी कुंजमैं, कहूं मिलैं मुसकाय ॥ ४०३ ॥

मूल अर्थ—कहीं विहस कें कुंज में कुंज बिहारी मिलें तो कुल कानि कहिये कुल मर्यादा से भी कुछ काम नहीं है और लोक लाज भी भलेंई जावो ।। लोक लाज और कुल कानि का नाश होना दूषण है ताकों नायका नायक के मिलवे के लिये गुण मानती है यातें अनुज्ञा अलंकार ।।

दोहा ।

जहां अनुज्ञा दोष में, जो लीजै गुणमान ।।

इति अलंकार रतनाकर ।।

अथ स्मृति लक्षण ।

दोहा ।

लखी सुनी पिय बात को, जो सुमरन मन होय ।
स्मृति तासौं कहत हैं, सब रस ग्रन्थ बिलोय ॥ ४०४ ॥

मूल अर्थ—जो पिय के संग में देखी हुई बात को और सुनी हुई बात को जो मन में स्मरण होय ताकों सब कविलोग स्मृतिदशा कहते हैं ।।

उदाहरण—कवित्त ।

आलस वलित कोरे काजर कलित,
"मतिराम,, वे ललित बहु पानप धरत हैं ॥
सारस सरस सोहैं सलज सहास संग,
वसन विलास है मृगन निदरत हैं ॥

वरुनी सघन वंक तीच्छन कटाच्छ बड़े,
लोचन विशाल उर पीरही करत हैं ॥
गाढ़े ह्वै गड़े हैं न निसारे निसरत मैन,
बान से विसारे न विसारे विसरत हैं ॥ ४०५ ॥

मूल अर्थ—आलस करके वलित हैं और जिन की कोरें काजल कलित जो काजर संयुक्त हैं और अति ललित जो बहुत सुन्दर पानप जो तेज ताको धरत जो धारन किये हुऐ हैं और सारस जो अच्छा रस तातें और सरस जो अधिक सुहात जो शोभित है और सलज जो लज्जायुक्त और सहास जो हाँस संजुक्त और संग बस कें विलास जो जो उन नेत्रों के संग बिलास वास होकर मृग निदरत हैं जो हिरन के नैत्रन को भी निंदित करते हैं और वरुनी जो पलकों की कोरों के केश ते सघन हैं वांकी और बड़ी तीक्षण कटाक्षों युक्त बिशाल जो बड़े लोचन उरमें गढे हैं ते पीड़ा करते हैं और निकालने से नहीं निकलते हैं और कामदेव के बांनों की समान हैं ते बिसारने से भी नहीं बिसरते हैं यहां पूर्व बात का स्मरण है यातें स्मरण अलंकार ॥

दोहा ॥

सोभा सूरत सुन्दरी, नव सनेह मैं बाम ।
तन बूड़त रंग पीतमैं, मन बूड़त रंग श्याम ॥ ४०६ ॥

मूल अर्थ—शोभा जो कांति सो कर के रति जो कामदेव की स्त्री जो सुन्दरी जो अच्छी है और यह बाम नवीन नेह हेकें तन पति रंग में बूड़त है जो शरीर पै पीलाई आवत है और उस का मन श्याम जो कन्हैया जी ताके संग में जो मोह में डूब रहा है ॥ तन पति रंग में बूड़त है और मन श्याम रंग में यह अन मिलते का संग है यातें बिषम अलंकार ॥

अथ गुण वर्णन लक्षण ॥

दोहा ।

बिरह बीच मैं पीयकी, सुंदर ताहि सराय ।
गुण बर्णन तासौं कहैं, जे प्रवीन कविराय ॥ ४०७ ॥

मूल अर्थ—विरह के बीच नायक की सुन्दरता को सराहे ताको जे प्रवीन कविराय हैं ते गुण कथन दशा कहते हैं ॥

उदाहरण—सवैया ।

मोर-पखा "मतिराम,, किरीट से,
कण्ठ बनी बनमाल सुहाई ॥
मोहन की मुसकानि मनोहर,
कुण्डल डोलन में छबि छाई ॥
लोचन लोल विशाल बिलोकन,
कौन बिलोकि भयो बस माई ॥
वा मुखकी मधुराई कहा कहौं?,
मीठी लगै अखियान लुनाई ॥ ४०८ ॥

मूल अर्थ—मुकट में मोर की पांखे हैं और कण्ठ में बनमाला सुहाय रही है और मोहन जो कन्हैया जी की मुसकानि मनोहर जो मन को हरती है और कुण्डल के डोलते जो हिलने में छबि जो शोभा छाई जो छा रही है और नेत्र चपल और बिसाल हैं ताकी बिलोकन जो अवलोकन को देख कें हे माई ! कौनसी स्त्री बस न भई अर्थात सभी आधीन भई और वाके मुखकी मधुरता की मैं कहा शोभा कहूं ? नेत्रों को वाकी लुनाई जो लावन्यताई मीठी लगती है ॥ लून खारा होता है और लुनाई मीठी लगे यह पद है यातैं बिरोधाभाष अलङ्कार ॥

दोहा ॥

सरद चंदकी चांदनी, जारि डारि किनि मोहि ?।
वामुख की मुसकान सम,क्यों हूं कहौंन तोहि ?॥४०९॥

मूलअर्थ—हे शरद चांदकी चांदनी ! तैं वाके मुख की मुसकान के समान है यातैं तुझे मैं कुछ भी नहीं कहूं तू मुझे क्यों नहीं जलाती है ? शरद की चांदनी को देख कर नायक के मुख मुसकान का स्मरण होता है यातैं स्मरण अलंकार ॥

अथ उद्वेग लक्षण ॥

दोहा ॥

बिरह बिथा की बिकलता,जहां कछू न सुहाय ।
ताहि कहत उद्वेग हैं, जे प्रवीन कविराय ॥ ४१० ॥

मूलअर्थ -बिरह की बिथा से बिकल होके जहां कुछ भी नहीं सुहाता है तहां जे प्रवीन कविराय हैं ते उद्वेग दशा कहते हैं ॥

उदाहरण-सवैया

चाहि तुम्हें "मतिराम,,रसाल,परी तिय के तन मैं पियराई ॥
काम के तिच्छन तीरनकी भरि भीर तुनीर भयो हियराई ॥
तेरे बिलोकि वे कौं उत्कण्ठित,कंठलौं आयरह्यौ जियराई ॥
नेंकपरे न मनोजके ओजनि,सेज सरोजन की सियराई ॥४११॥

सूल अर्थ-हे रसाल! तुम्हें चाहि कें वा तिय के तन में पियराई परी है अर्थात् वाके शरीर पै पीलास आगया है और कामदेव के तीक्ष्ण तीरों की भीर से भरकें वाका हियराई जो हृदय तूनीर जो तरकस के समान हो रहा है और तेरे अवलोकन करने को उत्कण्ठित जो प्रेम से पकड़ा हुआ वाका जीव कण्ठ तक आय कें अटक रहा है और सेज जो बिछायत तापै मनोज के ओज और जो कामदेव के ताप से सरोज जो कमल के फूल तिनकी नेंक जो थोरी सी शीतलता नहीं होती है ॥ सेज पै सरोजन से शीतलता नहीं होती है सरोज शीतलता के कारण तातें शीतलता कार्य नहीं हुआ यातें विशेषोक्ति अलंकार ॥

दोहा ।

जे अंगन पिय संग मैं, बरसत हुते पियूष ।
ते बीछू के डंक से, भये मयंक मयूष ॥ ४१२ ॥

सूल अर्थ-जब पी का संग था तब जे चन्द्रमा की किरणें अङ्गन में अमृत बरसती थी तेई किरणें अब बीछू के डङ्क के समान लगती हैं ॥ बीछू का डंक उपमान मयूष उपमेय से बाचक धर्म का लोप है यातें धर्म लुप्तालुप्तोपमा अलंकार ॥

अथ प्रलाप लक्षण ॥

दोहा ॥

उतकण्ठा ते कहत हैं, जहां मोह मय बैंन ।
बरनत तहां प्रलाप हैं, जे प्रवीन रस ऐंन ॥४१३॥

मूल अर्थ—जहां उत्कंठा से मोह मय बचन कहती है तहाँ जे रस के ऐंन जो घर ऐसे कवि हैं ते प्रलाप दशा कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

कहियो संदेसो प्रान प्यारी को गमन कीनो,
बिक्रम बिलास जे बे आपनें परस के ॥
चन्दकर बरछीन छेदि २ हारयौ तीर,
तीच्छन मनोज सर कछू कर न सके ॥
कवि "मतिराम,, ये कुलिस केसे घाय क्यौंहू,
गनत न कोकिल की कूकन के कसके ॥
कैसे दरकतु मेरो उर सदा सहि रह्यौ,
तेरे कुच निपट कठोरन के मसके ॥ ४१४ ॥

मूल अर्थ—नायक ने प्राणप्यारी से यो संदेसा कह भेजा कि चन्द्रमा की किरणें वर्छी के समान अपने पराक्रम के विलास से स्पर्श होती हैं और कामदेव भी तीक्षण तीरों से छेद २ के थक गया पर कर कुछ भी नहीं सका और कोयल के बोल कुलिस जो वज्र के घाव के समान कसकते हैं तिनको भी नहीं गिनता है क्योंकि तेरे बहुत कठोर उरोजन की कसकें मेरा हिय सह रहा है यातें अब वियोग में चन्द्र मयूषादि दुःख दायक चोटों के लागने से नहीं फटता है ॥ वज्र के घाव के समान कोकिल के बोल लागते हैं तोभी हृदय नही फटता है घाव लागना कारण ताते हृदय फटना कार्य नहीं हुआ यातें विशेषोक्ति अलंकार ॥

दोहा ।

विकल लाल को वाल तू, क्यौं न बिलोकति आन? ।
वोल कोकिलन सौं कहै, वोल तिहारे जान ॥४१५॥

मूल अर्थ—हे बाल ! लाल विकल हो रहा है तिनको तैं आय कें क्यों नहीं बिलोकती है कोयल के बोलने को तिहारे बोल जान कें बोल देता है ।। कोकिल के बोल को नायका का बोल समझता है यातें भ्रांति अलंकार ।।

अथ उन्माद लक्षण ।।

दोहा ॥

उतकण्ठा तैं मोह मय, बृथा करत कुछ काज ।
ताहि कहत उन्माद हैं, कवि कोविद सिरताज ॥४१६॥

मूल अर्थ—उत्कंठा से मोह मय होकें जहां व्यर्थ काम करे तहां कवि सिरताज जो अच्छे कवि हैं सो उन्माद दशा कहते हैं ।।

उदाहरण—सवैया ।

जाछिनतैं "मतिराम,, कहै मुसकात कँहूं निरख्यौनंदलालहि ।
ताछिनतैं छिनहींछिनछीन बिथाबहु बाढ़ी बियोगकी बालहि ॥
बूझत है करसौं किसलै गहिबूड़त श्याम सरूप गुपालहि ॥
भोरीभईहै मयंकमुखी भुजभेटतहैं भरि अंक तमालहि ॥४१७॥

मूल अर्थ— जिस समय अच्छी छबि से मुसकाता हुआ नन्दलाल को देखा तिस समय से वा बालकें बिरह की बहुत बिथा बढ़ी तातें छिन ही छिन छीन होती है और कर से किसलैं जो नवीन कोंपल ताको गहिकें बूझती है और गोपाल के श्याम सरूप में बूड़ रही है जो बूड़ जाता है उसे कुछ सुध नही रहती है ऐसे गोपाल के श्याम रूपसे अनुराग युक्त होकें वाको सुध नहीं है और वह चन्द्र बदनी भुजसे अङ्क भरके तमाल के वृक्ष को भेटती है ऐसी भोरी भई है । नायका तमाल के वृक्षको श्यामरङ्ग से नायक का भ्रम जान के अङ्क भरकें भेटती है यातें भ्रान्ति अलङ्कार ।।

दोहा ।

रोय उठे छिन हंसि उठे, छिन उठ चले रिसाय ।
बौरी करी बनाय तैं, रूप ठगौरी लाय ॥ ४१८

मूल अर्थ—तैं रूप ठगौरी लायकें वाको बौरी बनाई है यातें छिन भरमें रोय उठती है और हंस उठती है और रिसाय चलती है नायका में क्रम से अनेक भाव हैं यातें कारक दीपक अलङ्कार ।।

दोहा ।

कारक दीपक एक में, क्रम से भाव अनेक ।।

इति अलङ्कार रत्नाकर ।

अथ व्याधि लक्षण ॥

दोहा ।

काम पीरतैं पियरई, ताप दूबरी होय ।
तासौं व्याधि बखानही, कवि कोविद सबकोय ॥४१६॥

मूल अर्थ—काम की व्यथा से शरीर पै पीलाई होय और ताप से दूबरी होय ताको कवि कोविद सब कोई व्याधि बखानते हैं ।।

उदाहरण—कावित्त ॥

वरषा सी लागी निसि बासर बिलोचन न,
बाढ़े परवाह भयो नावनि उतरबौ ।
सहो जात कौनपै सुकवि "मतिराम" अति,
बिरह जलन ज्वाल जालन कौ जरबौ ॥
जैयतु समीप तो उड़ैयत उसासन सौं,
हमकौं तो होतु उत हेरत हहरबौ ॥
कियो कहा चाहत सु करोन कुमर कान्ह,
रह्यौ अब वाकें उपचारन को करबौ ॥ ४२०

मूल अर्थ—रात और दिन नेत्रन से आंसुओं के जलकी वर्षा सी लग रही है तिसका प्रवाह बढत है तामें नावका भी उतरना नहीं होता है और विरहानल की ज्वाला से जलकें किस से उसके पास रहा जाता है और जो कोई निकट जाती है तो उसाससे उड जाती है यातें हमारे तईं तो वाकी ओर निहारना भी बहुत कठिन होरहा है जब निहारती है तब

हहराती हैं अर्थात व्याकुल हो जाती हैं हेकुमर कान्ह । आप कहा किया चाहते हो ? सो मुझसे कहिये अब तो उसके उपचारों का करना भी थक गया है अर्थात प्राण की आशा तजिकें अबतो इलाज करनाही बन्द किया है । यहां अतिशय वर्णन है यातें अतिशयोक्ति अलंकार ॥

दोहा ॥

देखि परै नहीं दूबरी, सुनियो स्याम सुजान ।
जान परै परजंक मैं, अंग आंच अनुमान ॥ ४२१ ॥

मूल अर्थ—हे श्याम सुजान ! सुनिये वह कैसी दूबरी होगई है सो नही देख पड़ती है और सेज पर वाका अङ्ग आंच के अनुमान से जाना जाताहै आंच जो विरहानल की ताप वाके शरीर में ॥ यहां अतिशय वर्णन यातें अति शयोक्ति अलङ्कार ॥

अथ जड़ता लक्षण ।

दोहा ॥

उतकण्ठादिक तैं जुहै, अचल चित्त अरु अंग ।
तासौं जड़ता कहत हैं, कवि कोविद रस रंग ॥४२२॥

मूल अर्थ—मन और शरीर उत्कंठादिक तें थिर होते हैं ताकों जे रस रीति में प्रवीण हैं ते जड़ता कहते हैं ॥

उदाहरण—कवित्त ॥

जानैं न सुबास रहैं रंग राग तैं उदास,
भूलि गई सुरति सकल खान पान की ॥
कवि "मतिराम,, इकटक अनमिष नैंन,
बूझै न कहै बात समुझै न आन की ॥
थोरी सी हँसन मैं ठगौरी तैंनें डारी श्याम,
बौरी कीनी गोरी तैं किशोरी वृषभान की ॥

तब तैं बिहारी ! वह भई है पखान कीसी,
जब तैं निहारी रुचि मोर के पखान की ॥४२३॥

मूल अर्थ—सुगन्ध को नहीं जानती है और रङ्ग राग से उदास रहती है और खान पान की सकल सुधि भूलि गई है और एक टकटकी लग कर नेत्र अनमिष हो गये हैं अर्थात नहीं झपकते हैं और किसी से बात नहीं बूझती है और आप भी नहीं कहती है और दूसरे की बात समझती भी नहीं है और तुमने थोरी सी हंसनि ठगौरी ऐसी डारकैं वह वृषभान की किशोरी है ताको बौरी करी हे बिहारी ! तेरे मोर पंखों के मुकट की रुचि को जबतें निहारी है तबते वह भटू पाषाणकीसी होरही है । नायक के स्वरूप को देख कर नायका की यह व्यवस्था हुई यहां कारण से कार्य कहा यातें हेतु अलङ्कार ॥

दोहा ॥

अनमिष लोचन बाल के, यातें नंद कुमार ! ।
मीच गई जर बीच ही, बिरहानल की झार ॥४२४॥

मूल अर्थ—मीच जो मृत्यु बिरहानल की ज्वाला के बीचमें जल गई है यातें हे नन्दकुमार ! वा नायका के अनमिष लोचन नहीं झपकते हैं । विरहाग्नि की झाल से मौत जल गई यहांअतिशय वर्णन है यातें अतिशयोक्ति अलङ्कार ॥

दोहा ।

समुझि २ सब रीझि हैं, सज्जन सुकवि समाज ।
रसिकन के रसको कियौ, नयो ग्रंथ "रसराज,, ॥४२५॥

मूल अर्थ—यह रसराज नया ग्रन्थ रसिक जनों के रस का किया है अर्थात रसिक जनों के योग्य का किया है ताकों समुझि २ कें सब सज्जन और सुकवियों के समाज रीझेंगे अर्थात सज्जन सुकवि हैं तिनके समाज रीझेंगे ॥ रसिक जनों के रसके लिये रसराज नया ग्रन्थ मतिराम कवि ने बनाया यह कारण कार्य के लिये कहा यातें हेतु अलङ्कार ॥

दोहा ।

दशा वियोग शृंगार की, जाहर कही जनाय ।
लावे पती मनो,र की, पूरण इच्छा पाय ॥१४॥

इति वियोग दशा निरूपण प्रकर्ण ।

राजस्थान यंत्रालय अजमेर में मिलने वाले पुस्तकों का सूचीपत्र ॥

मनोहर प्रकाश—कवि मतिराम त्रिपाठी का बनाया रसराज ग्रन्थ जगत प्रसिद्ध है परन्तु उसकी टीका प्राप्त न होने से अनेक स्थल नहीं खुलते और कई अर्थों की व्यवस्था नहीं बैठती इसलिये सरदारगढ़ के ठाकुर साहब श्रीमनोहरसिंहजी ने कविवर हरदानजी सिढायच से यह अपूर्व टीका बनवाकर बड़ा काम किया है इसमें अनेक प्रश्न करके उत्तर दिये हैं जिनमें गूढ अर्थ खुल जाता है। सब ग्रन्थ में अलंकार भी निकाले हैं। इस ग्रन्थ का शीघ्रही बिकजाना सम्भव है जो लोग पहले मंगालेंगे सो जीतेंगे मोल १॥) डाक महसूल =)

रसराज—मतिराम कृत रसराज बड़े परिश्रम से शुद्ध करके छापा है जिसके लक्षण और उदाहरण पृथक २ कर दिये हैं औरों की नाईं खिचड़ी नहीं है छपाई और कागज उत्तम। मोल ।=) महसूल -)

वेदान्तप्रदीप—पण्डित जगन्नाथजी व्यास चूरूवालोंने उपनिषदों और वेदों के प्रमाणों और तर्कोंसे सिद्ध किया है कि जीव ब्रह्म में भेदहै यह ग्रन्थ भी देखनेयोग्य है मोल ॥) महसूल -)

स्वधर्मरक्षा— यह पुस्तक बड़ाही उपयोगी है जिस से संसार में धर्म्म की रक्षा हो। ईसाई लोग किन चालाकियों से अपना मत फैलाते हैं, उससे वैदिक मत की क्या हानि होती है और ईसाई मत से वैदिक मतकी रक्षा करने के कौन२ से उपायहैं इन बातोंका सविस्तर वर्णन है। मोल ।) महसूल)॥

आर्य्यसमाज परिचय—प्रश्नोत्तर की रीतिसे आर्य्य समाजका पूरा वृत्तान्त लिखा गया है जिस के पढ़ने से सब बातें जानी जासकती हैं। मोल ।) महसूल)॥

छन्दरत्नावली—छन्दों का पुस्तकयह बहुत सुगम औरउत्तम है जिसमें साथ २ अलंकारों का वर्णन भी आ गया है। मोल ≡) महसूल)॥

वाणीभूषण—कवि उमेदरामजी बारहटकृत अलंकारों का यह उपयोगी ग्रन्थ है जिस के कंठ करने से यह विषय हस्तामलक हो सकता है। मोल ≡) महसूल)॥

चौपट चपेट—लंपटों की दुर्दशा का मनोहर चित्र। मोल ≡) महसूल)॥

सच्चे देशहितैषी के गुणों पर एक व्याख्यान—बाबू यदुनाथ मजूमदार एम० ए० के अंग्रेजी पुस्तक का पण्डित हरमुकुन्द शास्त्री जी का किया भाषानुवाद जिस में अपने देश का भला और परोपकार करने वाले लोगों के लक्षण और ढंग लिखे हैं। प्रत्येक मनुष्य के देखने योग्य पुस्तक है। मोल =) डाक महसूल)॥

क्षत्रियशिक्षापंचासिका—क्षत्रियों के लिये कविता में उपदेश। मोल)॥ डाक महसूल)॥

उपदेश पंचाशिका—कविता में उत्तम २ उपदेश हैं। मोल)॥ डाक महसूल)॥

सद्बोध—बड़े २ विद्वानों के नियत किये अमूल्य सिद्धांतों का संग्रह है जिस का नित्य पाठ करना चाहिये मोल -) महसूल)॥

शीतला रोगनाशक—चेचक रोग के उपाय लिखे हैं। मोल)॥ डाक महसूल)॥

एण्टीकालेराइन आक्यूलेशन—हैजे के भयंकर रोग में टीका लगाने की विधि भाषा में। मोल -)॥ डाक महसूल)॥

ये सब घरू पुस्तक मोल तथा महसूल आने से भेजे जा सकते हैं। १०) रुपया वा इस से ऊपर मंगाने पर २०) रुपये सैंकड़ा कमीशन के पुस्तक अधिक भेजे जांयगे।

वाहर के पुस्तक।

(इनमें कमीशन नहीं दिया जायगा)

इतिहास राजस्थान—राजपूताने के क्षत्रिय राजाओं और उन के राज्यों का इतिहास आदि से लेकर इस समय तक का बहुत उत्तमता से शुद्ध आर्य्य भाषा में लिखा है राजपूताने का इससे अच्छा इतिहास अभी कोई नहीं है। मोल २) महसूल =)